आधी घड़ी

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

आधी घड़ी

पारप्पुरत्तु

अनुवाद

विश्वनाथ अय्यर, एन.ई.

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

प्रथम संस्करण : 1974 (शक 1896)
प्रथम आवृत्ति : 1990 (शक 1912)

Original title : Aranazhikaneram (*Malayalam*).
Hindi translation : Aadhi Ghari

रु. 23.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित।

प्रस्तावना

केरल राज्य में मुद्रणकला का प्रारंभ पश्चिमी धर्म-प्रचारकों के द्वारा हुआ। मलयालम गद्य के विकास की प्रेरणा का श्रेय भी उन्हीं को है। इस वाङ्मय में 'उपन्यास' धारा का श्रीगणेश अंग्रेजी शिक्षा का परिणाम था। इस धारा की प्रारंभिक रचनाएं या तो अंग्रेजी कृतियों का रूपांतर थीं या अनुकरण। चिदंबर वाध्यार ने 'एज यू लाइक इट' को कामाक्षी चरितम् के नाम से भाषांतरित किया। आर्च डीकन उम्मन कोशी ने 'पुल्लेलि कुंचु' लिखी। पी. वेलायुधन ने शेक्सपीयर का 'पेरिक्लिस' नाटक 'परिक्लेश राजा की कथा' के नाम से प्रस्तुत किया। अब भी इस बात पर बहस चलती है कि इन्हीं सज्जनों को प्रारंभ-कालीन उपन्यासकार मानना कहां तक ठीक है। कारण यह कि इनकी रचनाओं में उपन्यासगत प्रवृत्तियां नहीं पायी जातीं।

साहित्य-इतिहास के रचयिताओं ने शायद उपर्युक्त असमंजस के ही कारण 'कुंदलता' के रचयिता अप्पु नेटुंङाटी को सर्वप्रथम मलयालम उपन्यासकार बताया है। इस ग्रंथ का प्रथम प्रकाशन 1887 ईस्वी में हुआ था। कथावस्तु के गठन या चरित्र-चित्रण में वह भले ही असफल रहा हो, फिर भी यही ऐसी प्रथम मलयालम रचना है जिसमें उपन्यास की प्रवृत्तियां परिलक्षित हैं। आगे चलकर ओ. चन्तुमेनोन और सी. वी रामन पिल्लै ने मलयालम उपन्यास वाङ्मय को चिर प्रतिष्ठा और प्रचार का गौरव दिया। चन्तुमेनोन ने 'सामुदायिक' (समुदाय से मतलब उपजातिगत समाज से है।) घटनाओं के आधार पर समुदाय सुधारक उपन्यास लिखे। सी. वी. ने ऐतिहासिक उपन्यास रचे। देश की ऐतिहासिक एवं राजनैतिक घटनाओं को कथावस्तु के रूप में स्वीकार कर उन्होंने इन रचनाओं में पूर्वजों के साहस, पुरुषार्थ एवं राजभक्ति का उज्ज्वल यशोगान किया। अब भी ये दोनों मलयालम उपन्यास-जगत के महारथी के उच्च पद पर विराजित हैं।

चन्तुमेनोन की 'इंदुलेखा' और 'शारदा' की लोकप्रियता और प्रचार ने कई प्रतिभाहीन अनुकरण प्रेमी साहित्यिकों को इस नयी दिशा की तरफ आकृष्ट किया। फलतः मलयालम में कितने ही सामाजिक उपन्यास निकले, जिनमें अधिकांश बिलकुल उथले और सामान्य थे। सी. वी. रामन पिल्लै के प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यास मार्ताण्ड वर्मा, रामराजा बहादुर और धर्मराजा थे। कम लोगों ने सी. वी. की नकल की। जिन्होंने नकल की कोशिश की वे भी असफल रहे।

मलयालम उपन्यासजगत का अन्य प्रमुख लेखक रामवर्मा 'अप्पन तंपुरान' रहा। उनकी प्रसिद्ध रचनाएं 'भूतरायर' और 'भास्करमेनोन' प्राचीन केरलीय इतिहास से संबंधित जनश्रुतियों पर आधारित हैं। 'भास्करमेनोन' मलयालम का सबसे पहला जासूसी उपन्यास था। उन्नीसवीं सदी के आखिरी दिनों में थोड़े से स्वाधीन-चेता लेखक राजनैतिक उपन्यासों की रचना में लगे।

इन उपन्यासों के कथा तत्व में राज्य के प्रशासकों की त्रुटियों पर प्रकाश पड़ता था—प्रशासकों की कड़ी फटकार होती थी। के. नारायण कुरुक्कल के लिखे 'पारप्पुरम्' तथा 'उदयभानु' इसी कोटि के ग्रंथ थे। इन दोनों के प्रकाशन में स्वदेशाभिमानी रामकृष्ण पिल्लै का सक्रिय सहयोग बड़ा महत्त्वपूर्ण था। ट्रावनकोर रियासत की सरकार ने बाद में स्वेच्छाचारी प्रशासकों से संघर्ष के फलस्वरूप रामकृष्ण पिल्लै को राज्य से निर्वासन का कठोर दंड दिया।

उन्नीसवीं सदी के अंतिम चतुर्थांश एवं बीसवीं सदी के प्रथम चरण ने अनेक मलयालम उपन्यास देखे। मगर इनमें अधिकांश कोरे अनुकरण रहे और स्थायी गौरव नहीं पा सके। उस जमाने के लेखक प्रायः पढ़ी जाने लायक मनोरंजक कथा सुनाने से बढ़कर कोई गहरा ध्येय नहीं रखते थे। मुट्ठीभर रचनाकार सामाजिक सुधार के ध्येय से अवश्य लिखते थे। किंतु कलागत कमजोरियों के कारण ये सुधार-प्रचारक उपन्यास मामूली रह गये। स्वाधीनता-संग्राम, विदेशी शासन से विद्वेष, सामाजिक क्रांति की अभिलाषा और मार्क्सवादी चिंतन का प्रभाव जिन दिनों केरल के साहित्यिकों की सृजन-चेतना पर पड़ता गया उन दिनों मलयालम के कथा-साहित्य में नयी प्रगति परिलक्षित होने लगी। गत पचास वर्षों के दौरान मलयालम में कई ऐसे सृजनशील रचनाकार हुए जो कहानी से बाद में उपन्यास के क्षेत्र में आये। ये कृतियों के आंतरिक तत्व और बाहरी शिल्पविधि में नया रूप-रंग लाये। लेखकगण इस सिद्धांत को मानते हुए लेखन-

कार्य में लगे कि साहित्य विशुद्ध मनोरंजन का साधन ही नहीं है, समाज के प्रति साहित्यकार का विशेष दायित्व भी है। निदान समाज के निम्नस्तरीय लोगों का व्यावहारिक जीवन और नयी क्रांतिशील विचारधाराओं के वाहक पात्र उपन्यास में प्रस्तुत किये जाने लगे। उक्त युग के उपन्यासकारों में सर्वश्री तकषि शिवशंकर पिल्लै, पी. केशवदेव तथा वैक्कम मुहम्मद बशीर उल्लेखनीय हैं। तकषि का रंटिटंङषि (दो सेर धान) तोट्टियुटे मकन (भंगी का बेटा) तथा चेम्मीन (झींगा मछली) केशवदेव का ओटयिल निन्नु (नाली से) भ्रांतालयम (पागलखाना) अयलक्कार (पड़ोसी) एवं बशीर का बालयकाल सखी तथा न्टुप्पुप्पाक्कोरानेण्टान्नू (तुम्हारे परदादे का एक हाथी था) मलयालय उपन्यासजगत के प्रगतिपथ के मील-पत्थर प्रमाणित हो चुके हैं।

इस के बाद के लेखकों में एस. के. पोट्टेक्काट, उरूब आदि मिलते हैं। अब दूसरी पीढ़ी के अनेक प्रतिनिधि युवा साहित्यकार उपन्यास-रचना में लगे हैं। इनके योगदान से उपन्यास धारा की गंभीरता और व्यापकता बढ़ती जाती है। ये अंतर्राष्ट्रीय साहित्यिक प्रयोग अपनी रचनाओं में भी आजमाते हैं। सर्वश्री पारप्पुरत्तु एम. टी. वासुदेवन नायर, के सुरेंद्रन, जी. विवेकानंदन, कोविलन, नंदनार, मलयाट्टूर रामकृष्णन और विलासिनी इनमें अग्रणी हैं। मुट्टत्तु वर्क्की ईसाई पारिवारिक वातावरण के सहज प्रस्तुतीकरण में सफल सिद्ध हो चुके हैं। ये अनेक उपन्यास रच चुके हैं। इन प्रतिष्ठित लेखकों के समान बड़ी आत्मीयता, तल्लीनता और श्रद्धा से उपन्यास रचना करनेवाले और भी कई उल्लेखनीय लेखक मलयालम साहित्य के संसार में होते जा रहे हैं। विश्व-साहित्य में प्राप्त सभी प्रस्तुतीकरण-विधाएं मलयालम के उपन्यास क्षेत्र में भी पायी जाती हैं। नये-नये लेखक मंगलमय भविष्य की आशा प्रदान करते हैं।

श्री के. ई. मत्तायि ही मलयालम साहित्य में 'पारप्पुरत्तु' उपनाम से प्रसिद्ध हुए। हाई स्कूली शिक्षा समाप्त करके वे पलटन में भरती हुए और लगभग पंद्रह साल पहले तक पलटनी जीवन बिताया। वे साहित्य के प्रांगण में सैनिक कहानियां लेकर आये। इनमें सैनिक छावनियों की अनजानी अनपहचानी जिंदगी की धूप-छांह के चित्र हैं। सरल, पर हृदयहारी जीवन के प्रस्तुतीकरण के ज़रिये पारप्पुरत्तु शीघ्र ही अच्छे उपन्यासकार कहला सके। देश की सुरक्षा पर जीवन की स्वर्णिम घड़ियां न्योछावर करनेवाले जवानों के बलिदान, व्यथाएं, आशा-अभिलाषाएं एवं

कुंठाएं मलयालम साहित्य में सशक्त रूप में पहलेपहल प्रस्तुत करने का श्रेय पारप्पुरत्तु को है। इसका मतलब यह नहीं कि उनकी दृष्टि फौज की छावनी के भीतर ही सीमित रही। जिस गांव में वे जन्मे, खेल कूदकर बड़े हुए, उसके निवासी निश्छल नर-नारियों की—अपने देश मात्र के भी दिल की धड़कन पारप्पुरत्तु अपनी रचनाओं में आसनी से अभिव्यक्त कर सके हैं। ईमानदार रचनाकार अपने जीवन-दर्शन से निष्पक्ष होकर साहित्य सृजन कर नहीं सकता। पारप्पुरत्तु की सभी रचनाओं में उनके जीवन-दर्शन की उज्ज्वल धारा मिलती है। उनका जीवन-दर्शन ईसाई जीवन-दृष्टि एवं अनुभवी जीवन से ओतप्रोत है।

अन्यत्र कहा जा चुका है कि पारप्पुरत्तु ने अपने साहित्यिक जीवन का शुभारंभ सैनिक के बलिदानी जीवन की झांकी से किया था। त्याग एवं बलिदान का सिद्धांत उनकी सृजनशील प्रतिमा पर बड़ा प्रभाव जमा सका है। उनकी कई रचनाओं में ऐसे पात्र मिलते हैं जो व्यक्ति पर, समाज पर, राष्ट्र पर अपने को निछावर कर देते हैं। अपनी खुशी को ठोकर मारकर औरों के लिए कष्ट झेलना और सेवा में ही जीवन का सार पाना—यही ध्येय लेखक के जीवन-दर्शन से जुड़ा हुआ है।

पारप्पुरत्तु की रचनाएं मुख्य रूप से आर्द्रभाव और कोमल अनुभूतियों को जगाती हैं। उनके अधिकांश पात्र सामान्य स्तर के ग्रामनिवासी हैं। इनमें दंभी, धूर्त, धोखेबाज आदि भी मिल सकते हैं। पर उनके हृदयों में भी मानवीय भावों की झलक पायी जाती है। ऐसे पात्रों के जीवन-चित्रण में बड़ी भावुकता की गुंजाइश नहीं रहती। अतिरंजित भावुकता के चमत्कार से दृश्यों एवं घटनाओं में रंग चढ़ाकर पाठकों को चकित कर देना पारप्पुरत्तु का अभीष्ट कभी नहीं रहा है। उनके पात्र औसत दर्जे के होते हैं और हमारे सामने सहज रूप में आते हैं। वे हमसे दिल खोलकर बातचीत करते हैं। सहजता, ऋजुता और सरलता के कारण वे हमारे मन में चिरपरिचित मित्रों की तरह जम जाते हैं।

पारप्पुरत्तु के कथाख्यान की शिल्पविधि वस्तु एवं पात्रों के सर्वथा अनुकूल है। धारावाही शब्दावली की आतिशबाजी से वे पाठकगण को कभी नहीं चौंकाते। लेखक पाठक और पात्र के बीच में दखल नहीं देता। न वह बीच में बोलता नजर आता है। सामाजिक सजगता के धनी बौद्धिक व्यक्ति की हैसियत से पारप्पुरत्तु भी समाज के प्रत्येक स्वस्थ परिवर्तन का परिवर्तन की दृष्टि से स्वागत करते

हैं। परिवर्तन की अभिलाषा पात्रों से व्यवहार के ज़रिये सक्रिय रूप में प्रतिबिंबित होती है। इसका स्थायी प्रभाव पाठकों के मन में जम जाता है । लेखक कहीं भी पात्रों से लंबा-चौड़ा भाषण कराने, प्रचार का ढिंढोरा पिटाने का लोभ नहीं दिखाता। यह बात उसीके लिए संभव है जिसकी दृष्टि उत्तम कला पर लगी हो।

व्यापक अनुभव और गहरी जीवन दृष्टि के धनी उपन्यासकार के लिए ही वैविध्यपूर्ण जीवन दृश्यों और पात्रों की अवतारणा संभव है। पारप्पुरत्तु इसी प्रकार के उपन्यासकार हैं। 'निणमणियं काल्पाटु कल' में (खून से सने पैर के निशान) वे एक सैनिक की हृदय वेधी कथा सुनाते हैं जो निठुर कठोर जीवन के अनुभवों से जूझता टकराता आगे बढ़ता और भटकता जाता है। मैत्यू नामक पात्र के जरिये वे 'त्याग' का ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

'अन्वेषिच्चु कण्टेत्तियिल्ला' (खोजा पर नहीं पाया) पारप्पुरत्तु का और एक उपन्यास है। इसमें एक नर्स की जीवनी के जरिये एक व्यथापूर्ण और त्याग एवं मधुर जीवन की दुखांत समाप्ति चित्रित की गयी है। बच्ची सूसी के जन्मते ही पिता ने उसे गला घोटकर मारने की कोशिश की थी। मातृहीन सूसी निर्दय पिता और निठुर सौतेली माता के हाथ कष्ट पर कष्ट पाती है। वह मामा के यहां बड़ी होती है; पलटन में नर्स के रूप में भरती होती है। वह उत्तर भारत के कई अस्पतालों में नौकरी करती है। इस दौरान वह कई विकट अग्नि परीक्षाओं में भी अपने जीवन की पवित्रता को सुरक्षित बनाये रखती है। साथ ही वह अपनी इच्छा के अनुरूप जीवन साथी को पाने की अभिलाषा मन ही मन धारण किये हुए है। सूसी के द्वारा आनंद का अन्वेषण और अन्वेषण में उसकी असफलता का चित्रण यों हुआ है कि इसे पढ़कर पाठक का दिल भर आता है।

पारप्पुरत्तु का और एक प्रमुख उपन्यास 'आद्यकिरणंङ्ल' (प्रथम किरणें) है। रचनाकार ने इसमें केरल के किसी कोने में स्थित मामूली गांव के दिल की धड़कन पूरी यथार्थ चेतना से अंकित की है। उस पिछड़े और अविकसित प्रदेश में पहुंचती ग्राम-सेविका मेरिक्कुट्टि पूरे प्रदेश का रूपरंग एकदम परिवर्तित कर देती है। यह उपन्यास बड़ा सशक्त है। आरंभ से अंत तक भावपूर्ण 'आद्यकिरणंङ्ल' हमारी समाज-विकास-योजनाओं का समर्थन करता है। पणितीरात्त वीटु (अधूरा घर) मकने निनक्कुवेण्टि (बेटे! तेरे लिए) आदि भी पारप्पुरत्तु के ही अच्छे

उपन्यास हैं। तथापि उनकी रचनाओं में निस्संदेह सबसे लोकप्रिय और सशक्त 'अरनाषिकनेरम्' (आधी घड़ी) है।

"आकाश के नीचे जो प्रत्येक काम होता है उसे समझने का प्रयत्न मैंने किया। परमेश्वर ने मनुष्यों को बड़ा ही दुःख दिया है। धरती पर सूरज के नीचे जो भी काम चलता है वह मैंने देखा है। यह सब माया है। व्यर्थ प्रयत्न हैं।"

बाइबिल का यह उद्धरण 'अरनाषिकनेरम्' का माथे का टीका है जो सहृदय पाठक का ध्यान हठात् आकृष्ट करता है। इसी वाक्य में उपन्यास का सार संगृहीत है। ट्रावंकोर रियासत के मध्यखंड के निवासी ईसाई समाज का जीवन ही इस उपन्यास की पृष्ठभूमि है। उपन्यास की धुरी है कुंयेनाच्चन। उसने नब्बे वर्ष की लंबी जिंदगी में थोड़ा बहुत पाया है। बहुत कुछ गंवाया भी है। उसकी जीवनी घटनाओं से भरी है। कथावस्तु की भूमिका के तौर पर लेखक का मंतव्य सुनिए—"जिस दिन मैंने होश संभाले उस दिन से लेकर इस पात्र का मेरे जीवन से घनिष्ठ संबंध कई नामों से, कई रूपों से रहा है। कुंयेनाच्चन एक पीढ़ी की अंतिम कड़ी है।" यहां लेखक ने अत्यंत छोटी अवस्था—होश संभालने के दिन से लेकर अपने मन में बसे हुए एक पात्र को बहुमुखी जीवन के अनुभव एवं कलाकुशलता के सांचे में ढाला है। यही कुंयेनाच्चन है। वह बुजुर्ग अतीत की घटनाओं की लहरों के गर्जन से गुंजित तट पर बैठे-बैठे हिसाब लगाता है कि अब बहुत हुआ तो आधी घड़ी ही शेष रहेगी। वह बीच-बीच में अफीम खाता है, ऊंघता है। इस पात्र की अपूर्ण एवं विषम चेतना भूमि के माध्यम से उपन्यासकार ने समय-प्रवाह के आघात से उखड़ कर धराशायी बननेवाली तीन पीढ़ियों का उत्थान-पतन भावपूर्ण ढंग से अंकित किया है। वह वृद्ध प्रतिक्षण धुंधलाते स्मृति दर्पण को बार-बार मांजता साफ करता है, आसन्न मृत्यु की प्रतीक्षा भी करता है। यह मलयालम वाङ्मय का अत्यंत सशक्त पात्र है। इस ग्रंथ में आठों पहर डराती विचलित करती भीषण अनिवार्य जीवन समाप्ति की त्रासदी का परिचय बाइबिल के संगत उद्धरणों से सशक्त रूप से बारंबार दिया गया है। यह पाठकों को इस बात का अनुभव दिलाता है कि मानव मन सुख की प्राप्ति के लिए चारों ओर बेतहाशा भटकता है ओर सुख का खोखलापन पहचानने पर तितर-बितर हो जाता है। यह भावमंडल समसामयिक यथार्थवाद के मंडल से कहीं ऊंचा है।

लेखक ने जो अभिव्यंजना शैली स्वीकार की है उसने भी 'अरनाषिकनेरम्' को उत्तम कथा-कृतित्व प्रदान किया है। इसमें कुंयेनाच्चन की जीवनी सिलसिलेवार ढंग से नहीं बतायी जाती। वर्तमान की घटनाएं सुनाते-सुनाते कुंयेनाच्चन का मन अयाचित रूप से अतीत की गहराइयों में पैठता है, उस युग की घटनाओं की चर्चा करता है। अतीत की तरफ मन की सैर इस पात्र के बुढ़ापे की कमजोरी है। इसमें कोई कृत्रिमता महसूस नहीं होती। तिस पर ये घटनाएं अतिशय सरस और आस्वाद के योग्य प्रमाणित होती हैं। पारप्पुरत्तु ने इस उपन्यास में चेतना-प्रवाह और घटनाख्यान का कलापूर्ण समन्वय कराते हुए एक नई अभिव्यंजना प्रणाली का सफल प्रयोग किया है।

इस उपन्यास में एक खास प्रसंग आता है। कुंयेनाच्चन अंतिम लौ पर पहुंची अपनी जिंदगी के विविध परिणामों का सिसिलिक्कुट्टि नामक छोटी मुन्नी के भावी जीवन के परिणामों पर आरोप करते हुए उसका विस्तृत वर्णन करता है।

"वह उछलती छलांग भरती सी दौड़ गयी। दौड़ने की आहट ही सुनाई पड़ी। माथे पर बिखरती अलकों को वह एक हाथ से समेटती। दूसरे में रबड़ के नाड़े से बांधा बस्ता और स्लेट। जैसा कि श्रेष्ठ गीतों में कहा है, तू फिरौन के रथों में जुड़ी घोड़ी के समान, रनगदी की दाख की बारियों में मेंहदी के फूल के गुच्छे की तरह और शारोन देश के गुलाब के जैसी सुंदर है। तेरी आंखें कबूतरी की सी हैं; तेरे केश गिलेयाद तराई के बकरों के झुंड के समान हैं। तेरे ओंठ लाल धागे जैसे, तेरे कान अनार के दोनों की तरह। तू छोटी हिरनी जैसी छलांग मारती चलती है।

चार-पांच वर्ष गुजरने पर तू सयानी हो जायेगी। तेरे गालों में चमक होगी; आंखों में रौनक आयेगी। लहंगा टखने से लिपटता होगा। तेरी उम्र दस बारह साल की होगी। फिर भी तेरी मां कहेगी—"एक मर्द के साथ घर बसाने की उम्र हो चुकी, मगर छोकरी को अभी तक चटनी पीसना तक नहीं आता।"

आगे तीन-चार वार्षिक मेले त्योहार! व्रत! अब हंसी की खिलखिलाहट सुनाई नहीं पड़ती। अगल बगल झांकती तक नहीं। कई नये रंग-ढंग सीखे हैं! कुछ न जानने की सी मुखाकृति। दिमाग खाली तो रहता है। फिर भी चिंता में मग्न सी बहकती चलती है। खाली बैठे-बैठे बेमतलब मद हसी फूट पड़ती है।

यह जीवन का मोड़ है। अब तुझे एक आदमी के संग की जरूरत है। चैत में

विवाह मंडप पर कदम रखती है तो दूसरे वर्ष एक बच्चा गोद में खेलने लगता है। आगे एक कुशल सुशील गृहिणी होती है।" यों बैठे-बैठे कुंचेनाच्चन अपने मन-मुकुर में छोटी मुन्नी का पूरा भविष्य देख लेता है, चित्रित करता है। इस वर्णन में भाव गीत की सी माधुरी है। मैंने यह खंड यह दिखाने के लिए उद्धृत किया है कि 'अरनाषिकनेरम्' में भाव गीत की लय से मधुर और अनुपम लावण्य से मोहक आख्यान शैली प्रयुक्त हुई है।

इस रचना में चरम सीमा पर पहुंची सृजनशील प्रतिभा और आख्यानकुशलता का प्रमाण मिल सकता है। एक यशस्वी समीक्षक के शब्दों का उद्धरण प्रस्तुत करूं—

"उच्च नैतिक चेतना के धनी कलाकार ने जब जीवन का निरीक्षण दुःख भरी दृष्टि से किया तभी यह उत्तम कलाकृति उदय हुई। इस कथा में गंभीर जीवन की संपूर्ण त्रासदी प्रस्तुत की गयी है।"

—डी. सी. किषक्केमुरि

A

एक

लगता है कि पसलियों में कांटा फंसाकर कोई खींच रहा है। कुंयेनाच्चन ने करवट बदली। नहीं, अब पार नहीं लगता। दालान में चंद क्षण टहल पाता तो ठीक होता। चलते वक्त लेट जाने की इच्छा होती है और लेटे रहते समय चलने की। चलना भी हो, तो छड़ी कहां? उन शैतान बच्चों ने छड़ी छीन ली और आम के पेड़ की ऊंची डाल पर अटका दी है! कलमुंहे बच्चे! अब समय क्या हुआ होगा? छोटी बच्ची आती तो मुंह खोलकर उससे कुछ बातें कर लेता, नहीं तो कुरुप के आने पर ही बातें हो सकती हैं। औरों की परचून की दूकान पर मुनीमी करनेवाले कुरुप से कैसे आशा रखें कि यहां आकर बैठे रहे? फिर भी भलेमानस होने के कारण वह किसी-किसी की खुशामद करके थोड़ी सी अफीम लिये कभी हफ्ते में एकाध बार आता तो है।

"बहू!"

जवाब नहीं। सुना नहीं होगा।

"दीनाम्मा"

"जी!"

हां, सुना!

"ज़रा इधर आओ"

"आयी बाबूजी, बछड़े को ज़रा मांड पिला दूं।"

बेचारी बहू! हर बात में उसीका हाथ लगना है। वह तो मानो दीवानी करता है। मुहल्ले भर की हुकूमत! मुंह अंधेरे घर से निकल जाता है। फिर कब लौटता है, कुछ पता नहीं। उसे क्या मालूम कि घर पर नमक है, मिर्च है कि सब्जी है! लोग उसे अपने घर-बार का काम-काज कर शांति से रहने दें तब न? यदि

गिरजाघर का त्यौहार मनाना है तो मात्तुक्कुट्टि की हाजरी चाहिए। बिशप के पास किसी बात का निवेदन करना हो, तो चाहिए मात्तुक्कुट्टि ! इस गांव में उसके बिना कोई काम नहीं चलता । अमीर न हो, पर नामी तो है ही ! राह चलते समय गांव के लड़के मुझे "मात्तुक्कुट्टिसार के पिताजी" पुकारते हैं। ठेकेदार कुंयुनैना "फिलिप्योस के पिताजी" नहीं कहते। आदमी की इज्जत उसी तरह आंकी जाती है······

"बाबूजी ने क्यों बुलाया ?"

"तू क्या कर रही थी ?"

"बछड़े को मांड़ पिला रही थी। मैंने तो आपसे कहा भी था उसी समय।"

"कहा था क्या ?"

"बाबूजी जल्दी भूल जाते हैं। अब जो कहते हैं, सो तुरंत भूल जाते हैं।"

"जाने का वक्त जब आता है तब यही हालत होती है।"

"कहां जाने का ?"

"यहां की बातें खतम हो गयीं । सांझ हो आया है। अब बहुत हुआ तो आधी घड़ी बस !"

"मानो, सारा हिसाब बाबूजी के हाथ में ही हो !"

"हिसाब जानता हूं बहू ! मूसा की तरह मैं येरीहो के सामनेवाले नेबोपर्वत पर चढ़ रहा हूं। उसकी ऊंचाई है आखिरी मंजिल । येहोवा ने मूसा से क्या कहा ? जैसे तेरा भाई अहरोन होर पर्वत पर मरने के बाद अपने जन से मिल गया वैसे ही जिस पहाड़ पर चढ़ता है उसी पर तू भी मरकर अपने जन से मिलेगा।"

"चुप रहिए, बाबूजी ! आप यों ही कुछ सोच-सोचकर गढ़ा लेते हैं।"

"हो······तुम्हारा पति कल बाहर गया तो लौटा नहीं है न ?"

"नहीं।"

"अवरान के बेटे को 'डीकन' का पद देनेके विषय में चेरावल्लि गांव वाले खिलाफ हैं। वह अवरान के लिए बिशप के पास पैरवी करने गया है।"

"पैरवी कर जीत आवें।"

"एं ! (क्या कहा ?)"

"कहा कि जीतकर आवें।"

कुंयेनाच्चन हंस दिये ।

"हां, जाने दो, चार आदमियों के बीच में बोलने लायक और कौन है इस परिवार में ?"

दीनाम्मा कुछ नहीं बोली। सोचा कि बाबूजी का कथन सही है। मुहल्ले के बड़े-बड़े लोग मिलने आते हैं बड़ी-बड़ी बातों पर चर्चा करते हैं। लोगों के साथ बातें करने में बड़े ही समर्थ आदमी हैं।

दीनाम्मा जाने लगी। कुंयेनाच्चन ने पूछा—"उत्तर के अहाते के (हरिजनों) पेलयरों[1] में कोई वहां है ?"

"क्या चाहिए बाबूजी ?"

उन लड़कों ने मेरी छड़ी लेकर आम के पेड़ की ऊंची डाल पर फंसा दी है। उसे निकालना है। क्या तूने देखा नहीं ?"

"नहीं। कौन से लड़के ?"

"मल्लुपरंप के कीवरीत का छोटा लड़का और मंझले का चौथा बेटा—नेता वही है—उसका नाम क्या है ?"

"क्या सण्णि है ?"

"हां, नण्णि तो है ! पांच-छह छोकरे थे। 'अभी देंगे' कहकर दौड़े आये और छड़ी लेकर गये। लग्गी के सिरे पर बांधकर आम तोड़ लिये। किसी डाल में फंसकर लग्गी छूट आई और खिसक आई। छोकरों का तो बाद में पता ही नहीं लगा। हमारी छोटी बच्ची भी थी साथ में।"

"सब के सब बदमाश हैं !"

"पेलयरों में कोई है वहां ? छड़ी के बिना कैसे 'पारी' में जाऊं ?"

"आज कहां है ?"

"कीवरीत के यहां। ठीक वक्त पर जाने से ही कुछ मिलेगा। छटांक भर चावल के लिए छड़ी टेकते-टेकते पूरा रास्ता छानना ! किसी-किसी का फुलाया चेहरा-मोहरा ताकना ! कहीं आराम से बैठकर थोड़ा पानी गरम करके पीने लायक मैंने कुछ जमाकर रखा है क्या ?"

"इस गांव का कौन सा आदमी ऐसा कहेगा बाबूजी ? मगर, अपना वश आप ही छोड़ देने से ऐसा होता है। यहां जो पकता है उसी का हिस्सा खाकर रहते !

[1]पेलयन (पुलयन) एक हरिजन जाति। ये छोटी-मोटी नौकरी करते हैं।

पर बाबूजी मानें, तभी तो ?"

"हां, जब बिलकुल चल न पाऊं तब देखा जाएगा।"

"देख आऊं बाबूजी कि चात्तप्पुलयन पड़ोस में है कि नहीं।"

दीनाम्मा भीतर गई। कुंयेनाच्चन ने एक बार और करवट बदली। हाय ! पीठ ही अकड़ गयी !

लड़कों ने पत्थर फेंककर छड़ी मार गिराने की कोशिश बहुत की। जब नहीं गिरा पाये तब भाग गये। मंझले का बेटा बाप के जैसा ही है। बड़ा चतुर। हठी। निडर। उसका बाप बचपन में दोनों बड़े भाइयों को पटक देता था न ? किसी कारण की ज़रूरत नहीं। या तो उसकी मांगी चीज नहीं दी गयी, या उससे कोई नापसंद बात कही। बस। बहन को तो वह दूसरे चारों भाइयों से अधिक मानता था। उसे भी कुंयुचेरुक्कन भैया जान से प्यारा था। सोचा था कि वह पांचों में चतुर निकलेगा ! मगर निकला बदकिस्मत ! जिसमें हाथ लगाया उसमें हार ही जाता था। बैलों का सौदा करके ज़मीन बेची। लकड़ी की दूकान करके छोटा अहाता बेच डाला। वह रहा बदकिस्मत ! उसके साथ जो बसने आयी वह तो निकम्मी व लालची भी है। हाथी भी मिले, तो एक जून की सब्जी बना लेती ! टस से मस नहीं होती। कुछ पूछा जाय या कहा जाय तो एकदम चुप ! मगर, ऐन वक्त पर बाघिन बन जाती है। बड़ा बेटा बाहर कहीं काम पर गया है। आठ-दस साल हो गये। कोई ठीक नहीं जानता कि क्या काम करता है और कहां है। उसका बाप कहता है कि कुछ नहीं देता। दूसरे लोग कहते हैं कि आधी रात को या मुंह अंधेरे आता है और रुपये दे जाता है। रहता तो अब भी झोंपड़ी में है ! मात्तुक्कुट्टि का मत है कि गरीबी जाहिर करने के लिए सब कुछ छिपा रखा है। क्या कोई यों छिपा रखेगा ? कौन जाने ? दूसरे को बड़ा ले गया है। कहते हैं कि उसकी नौकरी नहीं लगी है······

"क्या बड़े सरकार ने बुलाया ?" सिर उठाकर देखा। पहचान नहीं पाते।

"कौन है रे ?"

चात्तन !"

"कौन सा चात्तन ?"

"बड़े सरकार से कहिए कि कौन सा चात्तन है। पड़ोसी तेवन का बेटा चात्तन !

"हां, यही जानना चाहा, इसलिए पूछा !"

"जान लिया न ? अब बताइए ! क्या चाहिए, ?"

"क्यों रे, अब बताइए ! कठघरे में खड़ा करके वकील जैसे जिरह करते हैं। बात करने में थोड़ी देरी हुई तो क्या हुआ ? नमकहराम ! हां तो,······नहीं ! ये सब बातें अब इससे कहने से क्या लाभ । इसके बाप को मैंने खेत पर जंगली अनन्नास के मोटे तने से मारा था । धान की कटनी का आखिरी दिन था । बोवाई के बाद कटनी खतम करके लौटने तक तेवन को नींद नहीं आती थी । कुछ हिसाब मन में छिपाकर उसने गलती की थी । उस समय अनन्नास का मोटा तना ही हाथ लगा । वह चुपचाप सहन करता गया । हां उसका भी कारण होगा । एण्णक्काट गांव से जब उसे ले आया तब वह बारह बरस का ही था । रहने को झोंपड़ी बना दी, उसे खिलाया-पिलाया । पुलयि लाने के लिए बहू के घरवालों को दहेज दिया ।

"बड़े सरकार !"

"हां-हां सुना" ।

"आपने मुझे क्यों बुलाया ?"

"अरे, मेरी छड़ी आम के पेड़ के ऊपर अटकी है। तुम जरा पेड़ पर चढ़कर निकाल देना।"

"छडी कैसे आम के पेड़ पर जा अटकी ?"

"छोकरों ने लग्गी के सिरे पर बांधकर आम तोड़े थे ।"

"मैं अब उन लाल चींटों का काट खाने को तैयार नहीं हूं। जब कलार आयें तब कहें तो सीढी लगाकर निकाल देगा।"

दीनाम्मा मदद के लिए आयी ।

"मेरे चात्तप्पुलयन, वह जरा निकाल दो न !" बिना छड़ी के बाबूजी बाहर कैसे जायेंगे ?"

"बच्ची क्या कहती है। लाल चींटों के काटने का दर्द झेलने वालों को ही मालूम होगा । हां तो । यहां ओणम और संक्रांति के अवसरों पर खूब दिया करते हैं न ? काम जो करते हैं, सिर्फ उसकी मजदूरी ही तो मिलती है !"

चात्तन ने ऐसा कहा तो जरूर, फिर भी आम के पेड़ पर चढ़ने की वह तैयारी कर रहा था । उसने बात सही तो बतायी थी । पहले हाथ खोलकर दिया करते

[1]पुलय कन्या

थे। अब मुट्ठी-भर का भी हिसाब होता है। घनिष्ठता का भी उतना ही लोप हो गया है !

बहू की बात तो हर कोई मानता है। कोई उसकी बात को टालता नहीं। दूसरों से व्यवहार करने में वह चतुर है। घर में आयी हुई बहुओं में उसकी बराबरी और कोई नहीं कर सकती······

"चात्तप्पुलयन !"

"हां, छोटी बच्ची आ गयी !"

"बड़ी सरकार आयी ?"

"मैं बड़ी सरकार नहीं, छोटी सरकार हूं"

"ठीक है, पर अब तो सरकार या मालिक, कुछ नहीं है ?"

"फिर क्यों दादाजी को बड़े सरकार पुकारते हैं ?"

"देखो न ! दादाजी की छड़ी आम के पेड़ पर चढ़ बैठी है।"

"सुना चात्तप्पुलयन, सण्णिअच्चायन आदि ने छड़ी से आम तोड़ा था।"

"सण्णि भैया, पोन्नि भैया अब यहां आवें तो मैं सबको भगा दूंगा।"

कुंयेनाच्चन की 'मुन्नी' सिसिली चात्तप्पुलयन का आम के पेड़ पर चढ़ना बड़े कुतूहल से देखती रही। चात्तप्पुलयन होशियार है। सण्णि भैया बड़े आदमी होते हुए भी आधे पेड तक चढ़े तो लाल चींटों ने ऐसा काट मारा कि उतरना ही पड़ गया।

"क्या मुझे पके आम तोड़ दोगे ?"

"चुप खड़ी रहो ! तुम पूवा और पुट्टु खाते वक्त चात्तप्पुलयन को देती थीं क्या ?"

"आगे दूंगी।"

"आगे ही आम भी तोड़ दूंगा"

ऐसा कहने पर भी चात्तप्पुलयन आम तोड़कर जरूर देगा। कुटिया के नजदीक से स्कूल जब जाती तब चात्तप्पुलयन की मां अझकीप्पुलयि कहती—

"बड़ी सरकार मदरसा जा रही है क्या ?"

यह सुनकर ही चात्तप्पुलयन भी बड़ी सरकार पुकारने लगा था।

चात्तप्पुलयन ने एक डाल पकड़कर खूब हिला दी। चार-पांच आम गिर पड़े। सिसिली चुनने दौड़ी तो चात्तप्पुलयन ने आवाज़ दी—"हट जाओ ! आम बदन

पर गिरेगा। बाद में चुन लेना।"

सारी डालियां हिला दीं तो बारिश की तरह आम टपाटप टपके। छड़ी लेकर नीचे उतरा तो बेचारे चात्तप्पुलयन के सारे बदन पर लाल चींटे थे !

मां ने सारे आम टोकरे में भर लिये। छड़ी लेकर सिसिली दादा जी के पास दौड़ी।

"छड़ी मिली दादाजी।"

कुयेनाच्चन उठ बैठे। छड़ी लेकर देखी। जमीन पर टेककर देखी। बोले—

"अपने भाई लोगों को अब यहां आने दो। सब के पीठ की मरम्मत करूंगा"

"क्या इस छड़ी से ?"

"हूं"

"मुझे भी पीटेंगे ?"

"और क्या ?"

"क्या दर्द नहीं लगेगा ?"

"दर्द लग जाय।"

"नहीं पीटना, दादाजी !"

"हूं, सोचेंगे······तुम्हारी सहेलियां क्यां आज स्कूल आयी थीं ?"

"आयी थीं।"

"उनके नाम क्या हैं ?"

"लता और अम्मुक्कुट्टि। कल और परसों कितनी बार मैंने कहा ? बारंबार दादाजी पूछते हैं"।

"तुझे मदरसे में किस नाम से पुकारते हैं ?"

"हाय ! हाय ये दादाजी कुछनहीं जानते······पुकारते हैं मरियाम्मा मात्यू।"

सिसिली भीतर चली गई। कुयेनाच्चन उठे। पैर नहीं जमता पाकर वहीं बैठ गए। फिर छड़ी को मजबूती से पकड़कर सावधानी से उठे। धीरे-धीरे चलकर दालान में उतरे······

"बहू, मैं जा रहा हूं।"

सुना कि नहीं ! चले। कुछ दूर चलने पर थोड़ी फुरती मिली। अब दो-चार मील चल सकते हैं······

"दादाजी कहां जाते हैं ?"

छड़ी के बल खड़े हो गए। "कौन हो ?"

"मल्लु परंपु तक जाता हूं। तुमको समझा नहीं। आंखें कम दिखती हैं।"

"चक्काले के······"

"तोमा के बेटे हो ?"

"हां"

"क्या उसका बड़ा बेटा हो ?"

"हां।"

"तुम यहां नहीं थे न ?"

"मद्रास में था। परसों ही आया।"

"अच्छा, तो जाओ।"

चौराहे पर पहुंचे, तो वकील गुमाश्ता पाक्करनपिल्ले मिला और लगा कुशल-समाचार पूछने—

"कहां चले हो, कुंयोनामाप्पिला ?"

रुके नहीं। चलते-चलते ही जवाब दिया। और भी कितनों ने पूछा—"भैया किधर चले ?"

"चाचाजी कहां जा रहे हैं?"

किसी को जवाब देने नहीं रुकते। चलते गए। पुत्तनचिरावालों की दूकान के पास पहुंचे, तो एक लड़की हंसती हुई सामने आई और पुकारा—"दादाजी !"

परिचित आवाज। रुके। गौर से देखा।

"मैं हूं दादाजी, कुट्टि अम्मा। इतनी देरी कैसे हुई ?"

हां, समझा—कीवरीत की लड़की—गुरुआइन।

"तुम क्या मदरसा जा रही हो ?"

"हां, सोच रही थी कि दादाजी को खाना खिलाके जाऊंगी।"

"अच्छा ! तो तुम्हें मालूम था कि आज पारी तुम्हारे यहां है।"

"पारी ?" कुट्टि अम्मा हंसी।

"कितने दिनों से कहती हूं कि दादाजी हमारे यहां रहें।"

"तुम्हारे बाप कहां हैं ?"

"घर पर हैं।"

"सुना कि तुम्हारे लिए कहीं से बात आई है। क्या हुआ ?"

कुट्टि अम्मा जवाब दिए बिना हाथ की कापी पर नाखून खुरचती खड़ी रही। फिर से पूछा तो बोली—

"मुझे कुछ मालूम नहीं, दादाजी। औरों को भी यह ख्याल हो, तभी बात चलेगी न ?"

"क्या पैसे नहीं हैं ?"

कुट्टि अम्मा चुप।

"क्यों री लड़की ?"

कुंयेनाच्चन ने ध्यान से देखा तो कुट्टि अम्मा की आंखें भर आई हैं !

"लड़की !"

"क्या ?"

"जाओ। रास्ते पर खड़ी होकर नहीं रोओ।"

कुट्टि अम्मा नहीं गई।

"मैंने अपने को भूलकर भी घर की मदद की। ऐसा करने का नतीजा मुझे मिल रहा है। पिताजी को तो हर महीने पैसे ही चाहिए।"

"क्यों ?"

"चुन्नकरा से कोई आये थे। लेकिन पिताजी ने उन्हें गाली देकर लौटा दिया।"

"क्या ?"

"अब तो सभी हैं। जब मैं कमजोर पड़ूंगी तब कोई नहीं होगा।"

"ना-ना, मत रो। चली जा। कुछ उपाय जरूर निकलेगा।"

कुट्टि अम्मा ने साड़ी के छोर से आंखें पोंछकर कहा—

"मेरे स्कूल से आने के बाद ही आप जावें।"

"हां, हो आओ।"

फिर सीधे चले। यह लड़की कभी इतना खोल कर बातें करने वाली नहीं थी। अब बेचारी लाचार हो इतना कह गई। उसने बिलकुल सच ही कहा ! यही रवैया रहा तो बुढ़ापे में कौन उसे गरम पानी तक के लिए पूछेगा ? मां-बाप मिट्टी में मिले होंगे। बहनों के पति हैं, भाइयों की अपनी स्त्रियां······सिर्फ वही अकेली रहेगी। किसी की गुलामी कर सकती है। पैसे हों तो खिलाएंगे-पिलाएंगे, नहीं तो शव मानेंगे।

करीब तीस वर्ष की होगी······दो बड़ी बहनों की शादी हो चुकी। बड़ी

बीमार हो गई। इस पृथ्वी पर ही प्रभु ने उसे नित्य नरक दिया है। पता नहीं, कैसा पाप किया। जैसा कि यहोवा ने निश्छल, सत्यवादी, भक्त और निर्दोष अय्यूब से किया। दूसरी के चार-पांच बच्चे हैं। कुट्टि अम्मा के बाद की लड़की के भी दो-तीन संतान हैं। सुना कि सबसे छोटी को गर्भ है······

यह लड़की पढ़ने में बहुत होशियार थी। हर विषय में होशियार! मट्रिग्लीष (मैट्रिक) पास हो गई तो मदरसे में नौकरी मिली। उस दिन से बाप की रोटी बेटी के वेतन से चलती है। बेटी की शादी कराने पर शायद भूखा रहना पड़े। इसी ख्याल से बात आने पर सीधा जवाब नहीं देता। कितनी ही बार कहा कि अरे! उस लड़की के गले पर मंगलसूत्र बंधवाकर विदा करता। उसकी उम्र की लड़कियों के तीन-चार बच्चे हो चुके। यह बात सुनकर गुस्से से उसका चेहरा तमतमा उठना। आदमी है तो सीधा। पर बड़ा गुस्सैल है। जीने के कितने ही उपाय किए। प्रभु ने उसे चार-पांच लड़कियां ही दी हैं न? चालाकी न दिखायी तो क्या करता?······

"कहां जाते हैं?"

मानो गूंगा हूं, हाथों से इशारा करते हुए पूछता है। यह शेख कौन है?

"हूं?"

"इस कमजोरी के दिनों में छड़ी टेकते-टेकते कहां को चले हैं?"

पहचान गया। कसाई मात्तन का बेटा अवरान। वह आजकल एक छोटा मालिक और एक नया पैसे वाला बन गया है। नया अमीर है। शुरू में फिलिप्योस को ठेकेदारी में नौकरी करता था। कहते हैं, कुछ पैसे उड़ाकर अलग हो गया और निजी धंधा शुरू किया है।

"फिलिप्योस भैया हमेशा कहते हैं कि यहां आकर रहें। पर सुनें, तभी तो?

"फू······!! कसाई का बच्चा, जा-जा! अपना काम देख। मुझे सलाह-मशवरा देनेवाला तू कौन है रे?"

अवरान सहम गया। यहां तक नहीं सोचा था। लोग जमा हो गये। सबों ने अवरान को कसूरवार ठहराया। कुंयेनाच्चन को शांत किया—

"जाने दो भैया, कोई नासमझ कुछ कहे, तो परवाह न करना······"

फिर भी कुंयेनाच्चन ने नहीं छोड़ा—

"तेरा बाप मेरे सामने खड़ा होकर बोला नहीं है।"

चले। ठीक वक्त पर अगर न डांटा तो सिर चढ़ जायेगा। जैसे को तैसा······
जा !

तंग गली के मोड़ पर पहुंचे तो थोड़ी देर हांफते रहे। फिर जोर लगाकर आगे चले। सीढ़ीयां पार कर गये। कीवरीत बरामदे पर किरमिच की कुर्सी पर लेटा था। पिता को देखकर उठा और दालान में टहलता रहा। कुयेनाच्चन खटिया पर बैठे।

"अरे तू क्या बाजार नहीं गया ?"

कुछ तो पूछना है। काली मिर्च का मामूली सौदा चलता है। पहले थोकमालका व्यापार किया था। पहले जहां फूल बिकता था वहां अब घास ही बिकती है······

थोड़ी देर तक जवाब नहीं। इधर-उधर टहलता ही रहा।

"बाजार जाने के लिये पैसा चाहिये न ?"

इतनी देर से अभी जवाब मिला। अब तक सोचता रहा। कुयेनाच्चन भी सोच में थे। कुट्टि अम्मा की बात तो कहनी है—

"अरे !"

"क्या ?"

मंझली लड़की को यों क्वांरी रखना ठीक है ?"

"मैं क्या करूं ?"

क्या उसके गले पर मंगलसूत्र नहीं बंधवाना है ?"

"हां, बंधवाना है।"

"सो कैसे होगा ?"

"कौन जाने ! अगर आपके पास कुछ हो तो दीजिये"

"अच्छा ! मेरे हाथ मे जब था तब दिया भी था।"

"तब ? आप तो बातें यों करते है, मानो कुछ जानते ही नहीं। जहर खाने तक के लिये चार पैसे मेरे पास नहीं हैं। वेतन मिलने पर घर पर चालीस-पचास रुपये जरूर देती है। पर उससे क्या चलेगा ! शादी की बात ही रही। सुना कि छोटी को गर्भ है। क्या बुला लाना नहीं है ?

जवाब भी कीवरीत ने ही दिया—

"पैसे का रास्ता निकला तो ले आयेंगे। नहीं तो, वहीं रहकर बच्चा दे।"

इस अवसर पर कीवरीत की स्त्री कुंयुमरिया बाहर आयी। उसने कहा :

"बड़ी इज्जत रहेगी। भूख पेट ही जानेगा। बेटी को पराये घरमें रहना है······"

वाक्य पूरा करने नहीं दिया।

"तो अपने नैहर से रुपया जमा कर बेटी को बुला ला।"

"मेरे नैहर में खाने-पीने के लिये मर्द हैं। बाबूजी भी यहीं बैठे हैं। जब मैं मयके से आयी तो बड़ी नाव भर लायी थी। क्या भूल गये? तीन बच्चों का जन्म मेरे घर में हुआ।"

"तो उस समय जो लायी उसका हिस्सा ले जा और बुला ला।"

"ऐसी बात सुनकर मेरा अंग-अंग फड़कता है। मेरी लायी सब चीजें बेच-बेचकर खा गये······"

"जा री भीतर।"

हां अब आगे बढ़ने नहीं देना चाहिये। कुंयेनाच्चन बोले—"जाओ कुंयुमरिया, अपना काम करो। गला फाड़-फाड़कर क्यों पड़ोसियों को कुछ कहने का अवसर देती हो?"

"और मैं क्या करूं? जहर खाकर या कुएं में कूदकर जान दूं? बोलो। जब मेहनत कर सकता था तब बोझ उठाकर और बैल चलाकर बाप के साथ काम किया। फिर छोटे भाइयों को पाल-पोसकर जीने लायक बना दिया। एक तो अब लखपती बना है। हमें तो छटांक भर चावल पकाने का चारा नहीं रहा। जमीन को बचाने के लिये नायर लोगों से मारपीट और छुरेबाजी की जिसमें दाहिने हाथ का अंगूठा गंवा बैठा। पत्थर फेंककर आम तक गिरा नहीं पाता।"

कलई अभी खुली। बातें बढ़ने से गड़बड़ी होगी। नहीं। वह ठंडा हो जाय।

"बच्ची, कुछ गरम चीज हो तो दे। मैं चलूं। जाकर कहीं जरा लेट जाऊं।"

तब तक कोवरीत कुछ ठंडा हुआ। यही आदत है।

"क्या यहां लेटने के लिए खटिया चटाई कुछ नहीं है?"

"हां तो, तब भी जाने दे।"

भीतर से कुंयुमरिया ने आवाज दी:

"अभी लायी बाबूजी।"

अब खामोशी है। कोवरीत दालान पर टहल रहा है। कुंयुमरिया चावल थलिया में ले आई। ससुर जी के हाथ धुला दिये।

"उसे खाना खिलाया?"

"बाबूजी खाइये। उन्हें बाद में खिलाऊंगी।"

"तुम्हारा बेटा मदरसे से नहीं आया ?"

"आकर लौट गया।"

साथियों के साथ आकर उसने छड़ी जो आम के पेड़ पर फंसायी, वह बात नहीं कही। बेचारे को क्यों पिटवा दे।

दो-तीन कौर खाने के बाद उठे।

"बाबूजी ने खाया ही नहीं।"

'बस, खा लिया।'

"क्या सब्जी पसंद नहीं आयी ?"

"तुम्हारी सब्जी पसंद न आयी तो और कौन सी चीज पसंद आवे! इससे अधिक खा नहीं सकता, बहू!"

लौटने लगे। अब बड़ी बेटी राहेलम्मा ने ओसारे के द्वार पर आकर अपना मुंह दिखाया। पांच दिनों में एक बार वे आते, तब यही नियम है उसे सिर्फ देखना है। वह तो एक तरह से कैदखाने में रहती है। कोई उसका अपना नहीं, अकेली है। घर पर कोई आये तो उसकी नजर में पड़ने से मना है।

"बेटी!"

"क्या ?"

"तू ने कुछ खाया!"

जवाब नहीं। चेहरे को तरफ ध्यान से देखा। रुपये जितने वर्त्तुल मोटे लाल दाग! बाल झड़ गये हैं। कान मोटे हो गये हैं। देखने से डर लगता है।

"दिन में सोना नहीं। बाइबिल पढ़ो। प्रार्थना करो। सेनाओं के देवता यहोवा के लिये कुछ भी असंभव नहीं है। वह समुंदर के घमंड को चूर कर देता है। लहरें उठने पर उन्हें दबा देता है। उसने रहब को तहस-नहस किया। अपनी सशक्त भुजाओं को तितर-बितर कर डाला 89वां कीर्तन पढ़कर देखो!

राहेलम्मा की आंखें भर आयीं।

"दादा चलूं ?'।

"हूं"

वे छड़ी लेकर निकले और चलते गये। घर की खटिया पर लेट जाना है। कभी-कभी कुरुप अफीम खरीद लाता है। बेचारा! किसी की भी खुशामद करके

वह अवश्य लाता है। दोपहर को एक गोली निगलने पर दुहरी ताकत मिलती है। वरना बड़ी थकावट महसूस होती है।

पनच्चिमूट चौराहे पर पहुंचे तो कुयेनाच्चन को लगा कि पांव जमीन पर नहीं जम रहे हैं। छड़ी पर जोर देने पर भी डटे नहीं रह पाते। मन को बल दिया कि नहीं गिरूंगा। घर की खटिया पर ही गिरना चाहिये। मगर, मानो भूमंडल डगमगाने लगा। आंखों में अंधेरा छा गया। बस फिर कुछ याद नहीं······

चेहरा गीला लगा तो आंखें खुलीं। चारों तरफ लोग जमा हो गये हैं किसी को कहते सुना—

"खटिया लायेंगे। खटिया पर ले जाएंगे।"

"नहीं खटिया नहीं चाहिये। मेरी छड़ी दे दे।"

तब भी वे दो आदमियों के कंधों के सहारे ही चल सके। उसी अवसर पर कसाई मात्तन के बेटे अवरान को लोगों के बीच में से कहते सुना—"नब्बे साल का आदमी इस प्रकार क्यों चक्कर लगाये? जब यही बात मैंने कही तो मुझे मारने चले।"

दो

पीलिप्पोच्चन ही (फिलिप्पोस) सबके बाद आया। उसने साइकिल स्टांड पर खड़ी कर-दी और टर्की तौलिये से चेहरे का पसीना पोंछ लिया। अपनी मोटरगाड़ी तो है, फिर भी अक्सर साइकिल पर ही यात्रा करता है। कीवरीच्चन (गीवर्गीस) और मात्तुक्कुट्टि दालान में खड़े हैं। कुंयुचेरुक्कन पिता के खाट के पास बैठा है। कुयेनाच्चन के सबसे बड़े पुत्र कुंयोमा का (जो अब नहीं रहा) बेटा कुंयप्पी भी आया है।

गृहस्थ की हैसियत से मात्तुक्कुट्टि ने पूछा—

"देर से कैसे आये भैया?"

"सुबह पंतलम गया। एक पुल का काम चल रहा है।"

फिर खामोशी। सब जानते हैं कि सब क्यों आये हैं। मगर, किसी के मुंह से शब्द नहीं निकलते! फिलिप्पोस पिता के पास जाकर काफी समय उनकी तरफ देखता रहा। इसके बाद प्रश्न किया—"कमजोरी की हालत में पिताजी घूमने

क्यों निकले ?"

कुयेनाच्चन के होंठ नहीं हिले। मात्तुक्कुट्टि ने कहा—"आगे पिताजी को मारे-मारे फिरने की जरूरत नहीं पड़नी चाहिये। कीवरीत भैया ने यह समझाने के लिये ही सबको बुलाया है।"

"हुं। तो उसके लिये अब क्या चाहिये ? कितने दिनों से कहता आया हूं कि घर आकर मेरे साथ रहें। पर कहना मानें, तभी न ? ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती है, त्यों-त्यों छोटे बच्चों का सा हठ बढ़ता है।

कुंयुचेरुक्कन ने कहा :

"नब्बे वर्ष की इस पक्की उम्र में क्या पिताजी से अपना हुकुम मनवा सकते हो ?"

मात्तुक्कुट्टि बोला—"जानते हैं न कि पिताजी किसी के इशारे पर नहीं रहे हैं।"

"अरे, वह बात अच्छे दिनों की रही। कमजोरी में तो अपने आप सोच-समझ कर कहीं चुपचाप पड़े रहना चाहिये।"

"वे सब बातें अब बतलाना बेकार है। जो भी हो, पिताजी को आगे से बेटों के घरों में (खाने की) 'बारी' पर चलने की जरूरत नहीं पड़नी चाहिये। उनका खर्च कहीं एक जगह पर मिलता रहे।"

फिर से खामोशी। कीवरीच्चन अब आंगन में घुटनों के बल बैठा है। उंगलियां मोथा उखाड़ रही हैं। वह किसी के चेहरे की ओर नजर नहीं डाल रहा है। कुंयुचेरुक्कन, कुंयप्पी और मात्तुक्कुट्टि भी चिंतन में लीन हैं। मगर फिलिप्योस के पास फुरसत नहीं।

"तो कहो। अब किया क्या जाए ? मुझे जल्दी है।"

"कहा तो। पिता का खर्च यहीं देना चाहिए।"

"सो क्यों ? पिताजी को साथ ले चलूं तो ?"

"हां, हां"

फिलिप्योस ने जोर से पुकारा—

"पिताजी !"

कुंयेनाच्चन को लगा कि कहूं, मेरे कान अभी बहरे नहीं हैं। तुम सबकी बहस सुन रहा हूं। कुछ थका तो हूं, कमजोर हूं। मगर इस वजह से मुझे खूंटे से बांधे

रखने का खयाल तो छोड़ दो। मैंने दुनिया देखी है। सो तो तुम सब जानते हो। तुम्हारे बंगले में शानदार पलंग पर लेटने की अभिलाषा मुझे नहीं है। मुझे तुम चांदी की प्याली में अंगूरी न पिलाना। सुगंधी इत्र से अभिषेक न करना। कोलंब कोच्चाप्पी से यह घर खरीदने के बाद कूबड़ वेलुप्पणिक्कन से यह खटिया बनवायी थी। इसी खाट पर मैं आखिरी सांस लूंगा। तुम्हारी कोशिश याकोब की कोशिश है। इसहाक की आंखें जब देखने की शक्ति से वंचित रहीं तब याकूब इसहाक को धोखा देकर उनका आशीर्वाद ले चला। इसहाक जब बहुत बूढ़ा हो गया और आंखें बहुत कमजोर रहीं तब बड़े पुत्र एशा को बुलाकर कहा—"बेटा, तुम मेरा तीर-तरकश लेकर वन जाओ और शिकार करके मेरे लिए मनपसंद और जायकेदार भोजन ले आओ। मरने के पहले तुम्हें आशीर्वाद दूं।" एशा शिकार की खोज में वन चला। इसहाक और एशा की बातचीत इसहाक की स्त्री रेबेका ने सुनी। उसने छोटे पुत्र याकूब को सब समझाया। याकूब तदनुसार अपने बकरों के बाड़े में गया और दो अच्छे-छोटे बकरे ले आया। रेबेका ने याकूब के लिए बकरों के मांस का स्वादिष्ट भोजन तैयार कर दिया। याकूब एशा के वेश में पिताजी के पास गया। वृद्ध एवं अंधे इसहाक ने याकूब को आशीर्वाद दिया—

परमेश्वर तुझे आकाश से ओस,
और भूमि की उत्तम से उत्तम उपज
और बहुत-सा अनाज और नया दाखमधु दे;
राज्य-राज्य के लोग तेरे अधीन हों,
तू अपने भाइयों का स्वामी हो,
और तेरी माता के पुत्र तुझे दंडवत करें;
"पिताजी !"

वही कहा था। मेरी आंखों में धूल झोंकने की बात मत सोचो। मेरी आंखें अभी देख सकतीं हैं। तुम्हें, बड़े भाइयों को और छोटे भाई को—सबको—हर एक को पहचान सकता हूं। तुम अभी धूम-धाम से मोटर में मुझे बिठाकर ले चलोगे। सुनने वाले कहेंगे "फिलिप्पोस पिताजी को अपने यहां ले गया और उसकी सेवा-शुश्रूषा करता है। यह रही सुनने को बात। भीतर ? दस दिन बीतते-बीतते तुम्हारी औरत बड़बड़ाने लगेगी। पूरी कमाई दूसरे बेटों को बांट दी। आंख मूंदने का वक्त आया तो यही बेटा देखने-भालने को है। किसी को ज्यादा या कम नहीं

दिया है। फिर भी औरतें ऐसी बातें कहा करती हैं। उनकी आदत जो ठहरी! यह बात सुनते हुए नफरत का खाना खाने के लिए मेरा कुत्ता आएगा। जा रे! जा! ······

"पिताजी ने मेरी बात नहीं सुनी?"

"एं! एं! क्या है?

"पिताजी मेरे साथ घर चलें। गाड़ी लाऊंगा।"

"यहीं पड़ा रहूंगा रे!"

"यहीं पड़ा रहूंगा रे! समझने पर भी बातें समझ में नही आतीं।"

"समझ गया। जाओ! पिताजी की चिंता मत करो! मेरे लिए अब ज्यादा से ज्यादा आधी घड़ी ही रह गयी है।"

फिलिप्पोस कुछ अपने आपको और कुछ दूसरों को समझाने के लिये बोला—

"यही ढंग रहा तो क्या किया जाए?"

मात्तुक्कुट्टि ने अपना विजय मानकर कहा—

"तो वही बताया था! पिताजी यहीं रहें। सब मिलकर पिताजी के खर्च का पैसा दें।"

अब तक चुप बैठे हुए कोवरीच्चन ने कहा।

"तो बोलो कि कितना चाहिये।"

"मैं क्या कहूं? भैया ही सबसे बड़े हैं? आप ही कहें।"

इस बात पर बड़े-छोटे की बात नहीं है। पिताजी ने बड़े को कुछ खास दिया भी नहीं है। लंगोटी पहनने के दिनों से मैं पिताजी के साथ इस घर का काम करता आया हूं। कुछ चुरा-छिपाकर कमाया नहीं। तुम सब जिस खेत का चावल खाते हो उसे अपने हाथों से जाने न देने के वास्ते नायर लोगों के हाथ बुरी तरह पिटाया, हड्डियां तुड़वायीं। यही लाभ रहा। मेरे बच्चे कभी-कभार ही थोड़ी सी कंजी पाते हैं। बंटवारे के वक्त भी पिताजी ने छोटों का ही खास खयाल (ख्याल) रखा था······"

इस पर कुंयुचेरुक्कन से जवाब दिये बिना रहा नहीं गया—

"बातें पूरी करो जी। पिटाया तो मैं भी गया था। सबसे बड़े भैया की तो मौत उनके वार से ही हुई न? सो भूल गये? पिताजी ने कौन सी छिपी दौलत औरों को दी है? पिताजी के साथ चलने का लाभ भी तो हुआ है! परिवार के धन से

तुम्हारे लिये घर बनवा दिया। बड़ी लड़की का ब्याह करा दिया है, है न ?"

"हां, हां। पिताजी की शादी करायी हुई लड़की मेरे घर में है रे !"

"सो तो किस्मत की बात है। क्या किसी के कुछ करने से वह बीमार हुई ? शेष लोग अब भी झोपड़ी में पड़े हैं। फिलिप्योस को मुझे बड़ा भाई कहने में भी शरम लगती है।"

बहस बढ़ रही थी। फिलिप्योस ने तुक पकड़ ली :

"मुझे तो तुममें से किसीने—बाप-या भाई लोगों ने-कुछ नहीं दिया। दिया तो ईश्वर ने। औरों की तरह मुझे भी पांच 'परा' धान के खेत और तिरसठ सेंट जमीन ही मिली। मैंने मेहनत कर चार पैसे कमाये हैं। अगर वह आखों में चुभता है तो और कहीं बस जाऊंगा।"

कीवरीच्चन कुछ ठंडा पड़ गया। कभी-कभी बहस करते-करते कुछ कह बैठे तो क्या ? फिर भी जल्दी ही वह अपने दिल पर काबू पाता है और अपनी बात फिर से सोचता है। मगर कुंयुचेरुक्कन ऐसा नहीं है।

"तुम काहे को जाते हो ? मुल्क छोड़ना हो तो मैं ही छोड़ दूं। सोचा है कि कानरा या कासरगोड़, कहीं चला जाऊं। तुम और तुम्हारे छोटे भाई जहां नेता बनकर शान से रहते हो वहां यह गरीब अधफाका बड़ा भाई क्यों रहे ?"

यह चोट मात्तुक्कुट्टि को चुभ गयी।

"मेरी बात रहने दो। मैं भीख मांगकर हाथ पसारकर किसी तरह दिन गुजार लूंगा। तुममें से किसी के चौके पर एक जून के खाने के लिए नहीं आऊंगा।

कुंयोमा का बेटा कुंयप्पि बोला—

इधर-उधर की बातें क्यों करते हो दादाजी ? जिस बात के लिए हम आये हैं उसे निपटाकर लौटें।"

मात्तुक्कुट्टि ने कहा—

"वही तो कह रहा हूं। सब मिलकर पिताजी के खर्च का पैसा दें पिताजी को अफीम खाना है। खाना-पीना है। पहनना-ओढ़ना है। एक दोपहर का खाना छोड़कर बाकी सब मैं ही संभालता आया। मुझे बहुत नहीं दिया है। शक्ति भी नहीं है। और बंटवारे के कागज में भी यह शर्त लिखी है।"

कीवरीच्चन ने प्रश्न किया—

"तुम्हारे हिसाब से हर आदमी का हिस्सा कितना हो ?"

"ज्यादा नहीं। हर घर से पच्चीस रुपए के हिसाब से दें।"

कुंयुचेरुक्कन ने उंगलियों से हिसाब लगाया "पच्चीस गुना पांच सवा सौ हुआ। शाबाश। तुम्हारा खर्च भी उसी में आ गया।"

मात्तुक्कुट्टि उठा। कुंयुचेरुक्कन को उंगलियों के इशारे से चेतावनी देते हुए कहा—

"बकवास मत करो। किसी को मेहरबानी से नहीं जी रहा हूं। मेरा बेटा पचास रूपये का अलाटमेंट हर महीने भिजवाता है। उसी से काम चलाता हूं। चाहे बोझ ढोकर या चाहे कुदाली चलाकर किसी भी प्रकार से अपने बाप का देखभाल करूंगा।"

बड़े ने बीच में दखल दिया—

"यों अकड़ना ठीक नहीं मात्तुक्कुट्टि! कुंयुचेरुक्कन ने भी सच ही कहा था। लड़के जब शहर से छुट्टी पर गांव आते हैं तब पिताजी को धोती दुपट्टा, पांच-दस रुपया दे जाते हैं। लड़कियां जब ससुराल से घर आती हैं तब वे भी पिताजी को कुछ न कुछ जरूर दिया करती हैं। फिर सिर्फ तीन जून के भोजन की बात ही बची। उसके लिए क्या पचीस-पचीस रुपया चाहिए?"

कुंयुचेरुक्कन का पक्ष अब कमजोर नहीं रहा। "देखा न? सही बात बताने पर मारने चला है!"

"तो तुममें से कोई पिताजी को ले जाओ और सेवा-टहल करो!"

"अभी आएंगे कैसे? तुमने उनके कान भर दिये हैं न? यही नहीं, अब तक किसी से दवे बिना मौज से जिए हैं।"

मात्तुक्कुट्टि भड़क उठा:

"एक बात साफ कह दूं। मेरे कमजोर पिताजी पर आगे एक शब्द तक किसी के मुंह से न निकले। कुछ मत दो। बला से। जाओ! लेकिन याद रहे, पिताजी का शाप सात-सात पीढ़ियों तक नहीं छोड़ता।"

कुंयुचेरुक्कन ने व्यंग्य में दांत निपोरते हुए कहा—

"उसी का बाप है। और किसी का नहीं है न?"

बातें यहां तक बढीं, तो फिलिप्पोस ने पर्स खोलकर दस रुपये के दस नोट निकाले, सबको दिखाया और पिता जी के तकिए के नीचे रख दिए। कहा—"यह खतम होने पर पिताजी को जो भी जरूरत पड़े, आदमी भेजना, दे दूंगा।"

आंगन पर उतरा, साइकिल स्टैंड से उठाई और उसे आगे बाढ़ते हुए बोलता गया—

"बदबू और खुशबू को नहीं पहचानते ! मूर्ख !"

कुंयुचेरूक्कन कोई जबाब देनेवाला ही था कि फिलिप्योस साइकिल पर सवार हो गायब हो गया।

काफी देर बाद कीवरीच्चन और कुंयुचेरूक्कन ने अपने-अपने घर जाने के लिए पिता की आज्ञा ली—"पिताजी, जा रहा हूं।"

तंबाकूवाला अवरान किसी मुकदमे के मामले में मात्तुक्कुट्टि को लेने आया था। मात्तुक्कुट्टि उसके साथ चला गया। कुंयप्पि ने दीनाम्मा के पास जाकर कहा—

"चलूं, चाची ? शनिवार को आऊंगा। दादा के खर्च के लिए जो भी जरूरी हो, लाऊंगा। यह भी कोई हिसाब-किताब की घड़ी है ?"

" मेरे कुंयप्पी ! क्या बताऊं ? चाचाओं को तो जानते हो ! मैंने इनसे कहा था कि भाइयों को न बुलावें। मुश्किल से मुश्किल हालत पड़ने पर भी पिताजी को खबर नहीं दी है।"

"सो मुझे मालूम है चाची।"

कुंयप्पी दादा के खाट के पास खड़ा हो गया और जोर से कहा—

"दादाजी !"

कौन ?"

"मैं हूं—कुंयप्पी "

"हां—जाओ रे"

"क्या दादाजी मेरे साथ घर आते हैं ?"

"वक्त नहीं है रे"

"वक्त ?······"

"मेरे कपड़े धोबी के पास हैं। अभी नहीं मिले हैं।"

कुंयप्पी ने जिज्ञासा से दीनाम्मा की तरफ देखा। दीनाम्मा धीरे बोली—

"कभी-कभी बातें नहीं याद रहती हैं।"

तुम्हारी छोटी बहन के ससुर की तबियत कैसी है ?"

"वैसी ही है"

"वे मुझसे दस महीने छोटे हैं।"

"तो मैं चलूं दादाजी ! दफ्तर जाना है।"

"जा।"

"शनिवार को आऊंगा।"

"हूं।"

आंखें कुंयप्पी पर ही लगी रहीं। बाप की ही तरह शांत। काम में कुशल। कुंयोमा अगर जीवित रहता तो इनमें कोई दुम न हिलाता। ईसा के सात लड़कों में यहोवा के आशीर्वाद पाये हुए पुन्न के समान था। बीस साल की आयु में सीना ताने हाथ डोलते मुहल्ले से उसका चलना देखने लायक था। 'चाक्को' कहा करता था कि कुयेना का बदन और बल बड़े लड़के को ही मिला है। मगर कच्ची उम्र में यहोवा ने उसे छीन लिया। उसने दिया, उसी ने लिया; उसका नाम धन्य हो ! ......

'कीच्चेरी' खेत में पुलय लोग हल जोत रहे थे। वह उनेक काम की निगरानी करते हुए मेंड़ पर खड़ा था। छाती में कुछ दर्द होने के कारण नीचे बैठ गया। घर ले आये तब तक प्राण निकल गये थे ! कहते हैं कि नायर लोगों से जो झगड़ा चला उससे लगी चोट का फल है। उस दिन छोटे भाइयों को पीटते देखने पर भी उसने बीच-बचाव करने की कोशिश की थी। वासुकुरुप ने जब लोहे के मुगरे से प्रहार किया तभी उसका भाव बदला। शौल और उसकी फौज से लड़े दावीद के समान वह था। शौल ने हजार को मारा तो दावीद ने दस हजार को। उसीने उस दिन इज्जत बचायी थी। लेकिन, देर से तो सही, उसकी कीमत चुकानी पड़ी।

जब कुंयोमा मरा तब छोटा कुंयप्पि दस-बारह साल का रहा होगा। दो छोटी बहनें थीं। उसकी मां ने बच्चों को पालने-सिखाने में बहुत तकलीफ उठायी। जब हार जाती तब छोकरे को भेजती। छोकरा रहा दबंग। मां भी वैसी ही। सात दिन भूखा रहने पर भी किसी पर बात खुलने नहीं देती। द्वार पर लापरवाही से खड़ा हो जाता और कहता—

"मां ने कहला भेजा है—"

तब पूछता, छोड़ने के लिए ही ! ......

"तेरे बाप ने क्या मुझे कुछ सौंपा था ?"

चुपचाप निकल जाता !

"इधर आ रे"

वह जो मांगता दे देता। बाप के पैरों की छोटी सी भचक तक इसे मिली है। इसे मुझसे बड़ा प्यार है। हफ्ते में एक दिन मांस व मछली सहित खिलाता है। धोती- दुपट्टा खरीद देता है। उसके "दादा" पुकारने सुनने में कितनी मिठास है! ······

तेरे ससुरालवालों का पांच सौ रुपया बकाया था। क्या उन्होंने दे दिया ?

"······"

"बोले क्यों नहीं ?"

"चुप क्यों हो गया रे ?"

दीनाम्मा चौके से आयी।—

"बाबूजी किससे बातें कर रहे हैं ?"

"छोकरा कुंयप्पी······"

"कुंयप्पी को गये दो घंटे बीत चुके। थिदा लेकर ही गया था।"

" ओह !"

" कंयि ले आऊं ?"

"थोड़ी देर बाद !"

"सोइए मत ! सोने से यह बकझक करते हैं।"

"बहू !"

"क्या ?"

"ज्ञानी पुत्र पिता को प्रसन्न रखता है। मूर्ख पुत्र माता के दुःख का कारण वनता-है।

नीतिवचन अध्याय 90-प्रथम वाक्य—तुमने पढ़ा है ?"

"याद नहीं। उस बात का जिक्र अब क्यों कर रहे हैं ?"

"कुंयोमा की बात याद कर रहा था। उसने मेरी राय के खिलाफ कुंयप्पि की मां से शादी की थी। तुम्हें वह बात मालूम है ?"

'क्यों नहीं ? दादाजी ने कितनी बार खुद मुझे वह बात बतायी है ? सुनते रहने का समय भी नहीं। छोटी बच्ची अभी स्कूल से आयेगी।"

कोई बड़ी बात तो नहीं। मेरा हठ था कि अपने बेटे की बहू का चुनाव मैं ही करूंगा। किसी दिन इतना भी कह बैठा कि तू मेरा बेटा नहीं है, कहीं चला

जा।" मगर बेमतलब बेकार शब्द। और क्या ? डेविड का पुत्र सोलमन कहता है—मैं चार चीजें नहीं जानता। आसमान पर गीध का रुख, चट्टान पर सांप की चाल, समुद्र के बीच में जहाज की गति और युवती के साथ पुरुष का पथ—उसकी पसंद की हुई लड़की ! बड़े मामा के यहां रहते वक्त उसे देखा और पसंद किया था। लड़की अच्छी थी, घरवाले भी अच्छे थे। मगर हठ इतना ही कि प्रस्ताव उसके मामा का था। उन दिनों उनसे कुछ अनबन भी थी। खैर, शादी चली। पारिवारिक गरिमा और परमेश्वर का भय—दोनों से युक्त कन्या। वह उसकी भुजाओं की ताकत और पथ का दीपक बन गयी। कमाया तो नहीं, फिर भी इज्जत और चैन से रहा। बाप और छोटे भाइयों के लिए अपनी जान दी। उसकी संतानों का मंगल होगा। जो मां-बाप का सम्मान करता है, भाई-बहनों को प्यार करता है, प्रभु से डरता है वह कभी तबाह नहीं होता। उसकी भूलों को यहोवा माफ करते हैं। यहोवा ने डेविड को क्षमा दी थी। डेविड का गुनाह भारी था। एक दिन सूर्यास्त के समय वह महल के छज्जे पर टहल रहा था तो एक औरत को नहाते देखा। उसके रूप पर मोहित हो अपने सेवकों से पता लगाया मालूम हुआ कि वह उनके ही एक सैनिक ऊरिया की पत्नी बतशेबा है। डेविड ने बतशेबा को महल में बुलवाया और कुछ दिन अपने साथ रखने के बाद वापस भेजा। वह गर्भवती बन गयी। इस पर डेविड ने ऊरिया को युद्ध-क्षेत्र से बुलवाया और उसे पत्नी के पास भेजना चाहा। उसने ऊरिया पर बतशेबा के गर्भ का दायित्व मढ़ देना चाहा। ऊरिया तो राजा के सेवकों के साथ राजमहल के समीप सोया। शराब पिलाकर उसे उन्मत्त बनाने पर भी वह पत्नी के पास जाने के लिए तैयार नहीं हुआ। आखिर उसे लड़ाई के मोर्चे पर भेजकर विकट युद्ध में मरवा डाला। इसके बाद डेविड ने बतशेबा को पत्नी के रूप में अपना लिया यहोवा ने उसे दंड दिया। सख्त सजा दी। बतशेबा से उसका जो बेटा जन्मा उसे मार डाला। अपने पुत्र अवशालोम से डरकर रेगिस्तान से भागना पड़ा। मगर यहोवा ने उसका सर्वनाश तो नहीं किया। उसका पछतावा सुना। इसराइल का यशस्वी नरेश बना दिया। बतशेबा से ही उसके दूसरे पुत्र सोलमन ने जन्म पाया। ज्ञानियों में ज्ञानी सोलमन !

'क्या कुयेनामाप्पिला सो रहे हैं ?"

"कौन ?"

"मैं हूं—शिवराम कुरुप "

"क्या तुम यहां कहीं नहीं थे ? आये पाच-छह दिन हो गये"

"घर गया था। सुना कि चक्कर आने से आप रास्ते में कहीं गिर पड़े।"

"क्या कहा ?"

"सुना कि कहीं गिर पड़े थे"

"सो सुन लिया ? अच्छी बात होती तो इतनी जल्दी न सुनते।"

शिवरामकुरुप की हंसी गूंज उठी—

"दुनियां की आदत जो ठहरी—अच्छी बातें सुनने पर भी दुष्ट लोग बुरे भाव ही समझते हैं। गाय के क्षीर भरे थन से भी मच्छर खून ही पीना चाहता है।"

कुंयेनाच्चन के चेहरे पर कुछ ताजगी झलक आई। बड़ी मुश्किल से उठ बैठे।

"षीर' का अर्थ दूध है न ?"

शिवरामकुरुप के होठों पर सार्थक मंदहास झांक उठा, मानों किसी मर्म की खिड़की खुली। उसने साबुन की डिबिया जैसी बड़ी डिबिया कमर से खोल ली और पान बनाने लगा। सुगंधी तंबाकू, मुलायम ताजा पान, रंगीन चूना सब पानदान में हैं।

"ओह।"

कुंयेनामाप्पिला सस्कृत भी जानते हैं।"

कुंयेनाच्चन ने इशारे से बताया कि सब जानता हूं। आगे वे बोले—

"हां हां—थोड़ा सा वेदज्ञान मुझे भी है कुरुप जी।"

"कुंयेनामाप्पिला, वेद सब एक ही हैं। बाइबिल, कुरान, गीता उपनिषदें सब एक हैं। देवताओं में भी अंतर नहीं हैं। नाम ही अलग-अलग हैं। मानव के अधर्म का पाश जब चढ़ता है तब भगवान प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं। दशावतारों की कथा यही है न ?

यदा यदा हि धर्मस्य
ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य
तदात्मानम् सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनाम्
विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसंस्थापनार्थाय

संभवामि युगे युगे ।।"

शिवरामकुरुप ने श्लोक की व्याख्या की तो कुंयेनाच्चन में भी कुछ स्फूर्ति आयी।

"हां हां, सदोम और अमोरा में अधर्म बढ़ा तो यहोवा ने गंधक और आग बरसायी। यहोवा ने अत्यधिक क्षमा दिखायी! आखिर उनका पाप जब बड़ा कठिन हुआ तब दो दूतों को उधर भेजा। उन दूतों ने यहोवा के दास लूत के घर पर रात बितायी। यह सुनकर पापी लोगों ने लूत के घर को घेर लिया। लूत को पुकारकर कहने लगे कि जो पुरुष आज रात को तेरे पास आये हैं वे कहां है? उनको हमारे पास बाहर ले आ। लूत ने उनसे कहा—'भाइयो, ऐसी बुराई न करो। सुनो, मेरी दो बेटियां हैं, जिन्होंने अ.ा तक पुरुष का मुंह नहीं देखा। इच्छा हो तो मैं उन्हें तुम्हारे पास बाहर ले आऊं, और तुम को जैसा अच्छा लगे वैसा व्यवहार उनसे करो। पर इन पुरुषों से कुछ न करो क्योंकि वे मेरी छत के तले आये हैं।······पाप में डूबे जन ने नहीं माना। तब देवदूतों ने उन्हें अंधा बना डाला। लूत और उसके परिवार से यहोवा ने यही कहा कि भागकर जान बचा लो। पीछे की तरफ मत देखो। वे उसी तरह दौड़े। मगर लूत की पत्नी ने पीछे मुड़कर देखा और नमक का खंभा बन गयी। यहोवा ने आसमान से गंधक और आग बरसाकर समूचा नगर ध्वस्त कर डाला। यों लूत सोअर नगर और वहां से पर्वत को भाग गया। वहां पहाड़ी गुफा में रहने लगा। उन्हीं दिनों अपनी बेटियों में लूत की संतानें हुई।

"सो कैसे? सो कैसे? सुनाइए।"

कुंयेनाच्चन अपनी कहानी आगे बढ़ा रहे थे। शिवराम कुरुप को एकाएक मानों किसी बात की याद आयी उसने प्रश्न किया—

"तो—यहां क्या और कोई नहीं है?"

"सब हैं।"

कुरुप जी ने जोर से प्रश्न किया—

"यह क्या? घर पर किसी आदमी के आने पर लोग क्या बोलते नहीं? क्या कुछ मीठे शब्द तक नहीं कह सकते?"

दीनाम्मा द्वार पर आयी।

"बाबू जी के शब्द क्या खट्टे हैं ?"

"ओह ! इसीलिये चुप हैं !"

"नहीं तो ! घर पर मर्द आते हैं तो मर्दों से बातचीत करते हैं।

"मान लिया"

"मंजूर करने के लिये नहीं कहा। हम अमीर तो नही हैं, फिर भी मेहमानों की खातिर करना मालूम है। इज्जत से पेश आना कभी भूले नहीं है। और, कुरूप जी अब यहां क्या मेहमान हैं ?"

दीनाम्मा भीतर चली गयी। कुंयेनाच्चन के मन में सूझा—यही शरीफ़ घर की लड़की का निशान है ! उसके शब्दों में भाव, शान, प्रतिष्ठा—सब हैं।

यों कहा तो जरूर। मगर थोड़ी देर बाद दीनाम्मा दो गिलास काफी (बिना दूध के ले आयी।

"दूध नहीं है। बाबूजी को बिना दूध की काफी ही पसंद है। कुरुप जी घर जाकर थोडा-सा दूध पी लेना।"

कुरुप जोर से हंसा।

"हां, जो मिला गनीमत है।"

काफी पीते हुए कुरुप जी ने याद किया—

"कहानी पूरी नहीं हुई कुंयेनामाप्पिले !"

"क्या ?"

"कहानी······"

"हां, लूत और उसकी कन्यायें गुफा में रहती थीं। बड़ी ने छोटी से कहा—हमारे पिता बूढ़े हो चले हैं। संसार के नियम के अनुसार हमारे पास कोई पुरुष अभी तक नहीं आया। आओ। पिता जी से हमें संतान मिलनी चाहिये। इसलिये उसे अंगूरी पिलाकर उसके साथ सोएंगी। इसी के अनुसार बड़ी उस दिन रात को पिता को शराब पिलाने के बाद उसके साथ सो गयी। पिता ने उसके साथ सोना और जगना नहीं पहचाना। दूसरे दिन छोटी ने भी उसी प्रकार किया। यों उन्होंने गर्भ पाया और बच्चों को जन्म दिया। मोवोबियों और अम्मोनियो की पीढ़ी उसी तरह प्रारंभ हुई थी। यह प्रकाशित वाक्य में आता है।

कुरुप हंसते-हंसते लोट-पोट हो गया।

कुंयेनाच्चन को नया जोश मिला। कथाएं सनाकर लोगों को हंसाने की अपनी

शक्ति पर अब भी गर्व था। कुरुप का मुख ही कितना मंगलमय है ! चंदन का टीका, कान के पीछे का तुलसीदल ! पूरा स्वस्थ ! आरंमुला गांव का यह निवासी नाणुनायर की बेटी से शादी करके यहां आया, सो अभी तक उसी रूप और उसी बदन का है। वह शादी जल्दी टूट गयी थी नाणुनायर की बुराई से कुछ दिन बाद 'संतोषम केशवन नायर' की बेटी का पति हो गया। वह स्त्री बदचलन थी। कुछ दिन तक ऐसा रहा। पर अब कुरुप बिलकुल स्वतंत्र है। षणमुखमपिल्ले की किरानी की दूकान में मुनीम है। खुद खाना पकाकर खाता है और किराये के घर में रहता है।

"कहानी अच्छी रही। मगर क्या इसका यकीन किया जा सकता है कि बूढ़े ने नहीं जाना ?"

"यकीन करना चाहिये। सच्ची घटनायें थी। मेरी बात छोड़ो। हमारे कुंयुपोत्ता का एक बेटा पलटन में है न ? पलटन में हवाई जहाज उड़ाने का धंधा है।"

"एयरफोर्स"

"हां, वही। उसने ये सभी स्थान देखे हैं।"

"हां हां। देखे होंगे। यकीन की बात तो अजीब है। हिंदु पुराणों में गणेश, शास्ता आदि के जन्म की कथा विचित्र है न ? कथा जानते हैं ?"

कुरुप वह कहानी सुनाता। मगर मात्तुक्कुट्टि आ गया।

"ओह ? तुम यहां थे ?"

"घर आने पर तुम कभी नहीं मिला करते। तो कुंयेनामाप्पिले से बातें कर रहा था।"

"हूं ! पिता जी की तबीयत ठीक नहीं है।"

"मालूम हुआ।"

कुरुप ने समझ लिया। मात्तुक्कुट्टि का इशारा था कि बीमार पिता को बात-चीत से कष्ट न दें। पानदान खोलकर और एक बार पान खाने के बाद उठा।

"कुंयेनामाप्पिला !"

"हू ?"

"चीज कल लाऊंगा।"

"क्या ?"

"अफ़ीम कल लाऊंगा। मिलने में कठिनाई है। एकाध वैद्यों से इंतजाम कराया था, पर उन्होंने उसकी दवा तैयार कर ली है। अब और एक जगह कोशिश करनी है। किसी भी हालत में कल लाऊंगा। जाऊं, मात्तुक्कुट्टि?"

"अच्छा।"

कुरुप के जाने के बाद मात्तुक्कुट्टि घर के भीतर गया और दीनाम्मा से कहा—

"मैं शाम को तिरुवनंतपुरम जा रहा हूं। शायद दो तीन-दिन बाद ही आ सकूंगा।"

"तिरुवनंतपुरम में कौन सा खास काम है? अगर शहर देखने जाते हैं तो मैं भी साथ चलूंगी। कितने लोग पीछे पड़े हैं कि पिताजी को अपने साथ रख लेंगे। उनके साथ वे रहें।"

"शहर देखने जा रहा हूं! अच्छी बात रही! वाझविला घर के दानियल के लड़के के लिये एक नौकरी की तलाश मैं जा रहा हूं।"

"ऐरे के लडके के लिये नौकरी और गैरे की लडकी के लिये दूल्हा। पादरियों का झगड़ा निबटा लेने का मुकदमा। यों घूमने-फिरने से हमारा क्या लाभ है?"

"बात-बात के पीछे नफा-नुकसान देखा जा सकता है?"

"सब बातों पर नहीं। मगर अपनी घर-गृहस्थी की बात नाक पर रखकर बिरादरी के लोगों को सुधारने की कोशिश क्यों करें?।"

"वाह! घर व परिवार से चिपटा रहूं तो सब ठीक हो जाएगा!"

कहा तो था जोर देकर। पर मन ही मन बात मात्तुक्कुट्टि को भी सही लगी। अपनी गलती उसे अखरी। वह खुद गांव का शरीफ, काम के लायक आदमी तो जरूर है। मगर घर का काम संभालने की फुरसत उसे कभी नहीं मिलती। जवान औरत को उचित मात्रा में प्यार व दुलार नहीं दे पाता। दीनाम्मा अठाईस बरस की है और मात्तुक्कुट्टि की उम्र है सैंतालीस। सो बात भी उसे याद आयी। एक बच्ची को जन्म दिया है, जो अब थोड़ी बडी भी हो चली है। फिर भी, साज-सिंगार कर बाहर निकलेगी तो गांव की कोई भी औरत दीनाम्मा के आगे रहे। उसी का तिरस्कार करना पाप है। इन सब बातों की याद तो है। फिर भी, गांव की समस्याओं में उलझ जाता है।

पहली पत्नी का बेटा पलटन से हर महीने चालीस-पचास रुपये भेजता है। इससे बिना कठिनाई के दिन कट जाते हैं।

मात्तु क्कुट्टि जब घर से चलने लगा तब दीनाम्मा ने कहा—

"राजन का साथी छुट्टी के बाद अगले हफ्ते में जायेगा। उसके हाथ राजन के लिए कुछ भेजना है न ?"

"हां, भेजना है !"

"हां, भर देने से काम चलेगा ?"

"मैं दो तीन दिनों मे लौट तो आऊंगा। क्या वहीं जमने जा रहा हूं ?"

मात्तु क्कुट्टि देहली पार कर रहा था। दीनाम्मा उसे देखती ही रही।

तीन

पगडंडी के दोनों ओर जंगली अनन्नास के पौधों का झाड़ था। कोई अगर इसमें छिपा रहकर यात्री पर वार कर बैठे तो आफत समझिये। शेखरन नायर और साथी खार खाये हुए थे। कुंयोगा को जान से मार डालने की धमकी देते फिरे। बड़ा मंजा अभ्यासी था। अपने अभ्यास के साथ जब सामने आया तब एक बार में ही परास्त हो गया था।······जो हो, खुला छुरा हाथ में तैयार रहे। किसी की नजर पड़े तो लगे कि नाखून काट रहा है या सुपारी। तू जा रे······

तमाम बस्ती वाले पूरी फौज की तरह आ धमके थे। नेता था शेखरननायर। आराम के राजा बेन—हदद जिस तरह बत्तीस सामंतों, घोड़ों और रथों से इसरायल शासक आहाब से लड़ने चले थे। तब यहोवा ने आहाब से कहा कि इस पूरे दल को मैं तुम्हें सौंप दूंगा। वैसे ही इसरायल की जनता ने आराम नरेश के घोड़ों और रथों को पकड़ लिया······

"दादाजी"

"हूं, हूं—"

"सो रहे हैं ?"

"नहीं, नहीं।"

"कितनी देर से पुकार रही हूं"

"तू कब आयी ?"

"काफी समय हो गया"

"तेरा शौहर कहां ?"

"............"

"क्या बच्चों को छोड़ आयी है ?"

सिसिली दादा के चेहरे की तरफ अपलक आंखों से देखती रही। उसे डर लगा। वह जोर से चिल्लायी—

"माता जी !"

"क्या है बिटिया ?"

दीनाम्मा दौड़ आयी।

"ये दादा जी मुझे डरा रहे हैं मां !"

"डराया ?"

"आंखें बंद किये लेटे-लेटे पूछते हैं कि शौहर कहा है ?"

दीनाम्मा हंस पड़ी।

"दादाजी अफीम खाकर उसकी खुमारी मे पड़े है छोकरी !"

"एं—एं......"

"बाबूजी ने मुन्नी से क्या पूछा था ?"

"मुन्नी थी ?"

"और कौन ?"

"कुंयम्मा की बातें मेरे मन में उठी थीं।"

"वह तो ठीक है ! मगर कुंयम्मा मंगनी के बाद शादी के पहले ही मर गयी न ? फिर दूल्हा कहां से आया ?"

"हो—अभी देखा था कि वह ससुराल से आ रही थी। तुमने उसे देखा है ?"

"यह क्या तमाशा है ! आप ही ने कहा है कि आखिरी बेटे से चार साल छोटी थी। मंगनी के बाद मर भी गयी। फिर मैं कैसे देखती ?"

"बचपन में वह तुम्हारी इस मुन्नी सी लगती थी। जब थी वह दस बरस की तब तुम्हारी सास चल बसी। फिर भी हमने उसे मां के अभाव का कोई दु:ख महसूस होने नहीं दिया था ! पांच भाइयों की अकेली बहन ! प्यार-दुलार से पाला। दस बरस की हो गयी। मैं हर बात उसी से कहता। भाइयों का कोई काम होता तो वे बहन से सिफारिश कराते। तेरह-चौदह वर्ष की उम्र में वह कपड़े

पहनकर गिरजाघर जब चलती तब लोगों की नजर जरूर उस पर पड़ती। हम लोगों का नियम लड़कों के घर जाकर बातें करने का है न ? मगर कुंयम्मा को मांगते हुए लोग हमारे यहां आते थे। एक साथ दो-तीन जगहों से प्रस्ताव आया। एक हजार एक रुपया दहेज। आज के बारह हजार एक के बराबर। दूल्हा दफ्तर में छोटा बाबू था। आज वह रजिस्ट्रार है। अगर वह होती तो मेरे सिरहाने ही बैठी रहती। प्रभु ने रहने नहीं दिया। वह सब कुछ एक साथ नहीं देता। सिर्फ दिखाकर छिपा देता है ! सब माया है, सब व्यर्थ का काम है। ज्ञानियों के राजा सभोपदेशक कहते हैं—"मैंने आसमान के नीचे होने वाली सभी बातें अच्छी तरह समझने का प्रयत्न किया। यह सब माया है, व्यर्थ काम है, फिर भी मेहनत किये बिना रह सकते हैं ? यहोवा का शाप है कि तू पसीने की रोटी खायेगा। वह कैसे पूरा न किया जाए ?" सभोपदेशक आगे कहते हैं—"मैंने सूरज के नीचे एक माया देखी। एक आदमी अकेला है। कोई नहीं। न बेटा है, न भाई है। फिर भी उसके परिश्रम का अंत नहीं। उसकी आंखें दौलत देखकर तृप्त नहीं होतीं।……"

"बाबूजी !"

"हूं।"

"बातचीत बहुत न करें। थक जायेंगे। जरा चुपचाप लेटे रहिये।"

"हूं"

"मुन्नी को खाना खिलाऊंगी। बाबूजी को भी खाना परोस दूं ?"

"परोस दो"

"बिटिया को दादाजी के साथ खाना खिलाऊंगी ?"

"नहीं"

"क्यों ?"

" मुझे काहे को डराया ?"

"ओह ! रूठी है ? सुना बाबूजी !

"क्या ?"

"मुन्नी बाबूजी से रूठी है !"

"अच्छा ! यह भी रूठ गयी ?"

"आगे मैं दादाजी के साथ दोस्ती नहीं करूंगी। मेरे राजन भैया पलटन से बहुत चीजें लायेंगे। दादा को कुछ भी दूंगी नहीं।"

"क्या ?"

"इसका राजन भैया जो चीजें लएगा वह आपको देगी नहीं ।"

"ऐसा ? तो मैं आगे क्या करूं ?"

दीनाम्मा थाली पर चावल परोसने चली । कुंयेनाच्चन ने आवाज दी—

"मुन्नी !"

सिसिली चुप !

"मुन्नी !"

"क्या ?"

"दादा के मर जाने पर किससे रूठेगी ?"

"किस दिन मर जाओगे ?"

"प्रभु जानता है !"

"आगे क्या मुझे डरायेंगे ?"

दादाजी बेहोशी में कुछ बकते थे न मुन्नी ?"

"क्या सपना देखा था ?"

'हां, एक दिन सपना देखा था कि तुम्हारी शादी के दिन मोटर में जा रहे हैं ?"

"मेरी शादी कब होगी ?"

"नहीं मालूम !"

"तो क्या उस दिन मुझे भी मोटर में ले जाएंगे ?"

क्या ?"

"शादी के दिन क्या मुझे भी मोटर में बिठायेंगे ?"

कुंयेनाच्चन जोर से हंस पड़े ।

"दूल्हिन के बिना शादी होती है ? तुम्हें सजाकर मोटर में ले जाएंगे ।"

सिसिली को फिर से शक हुआ । दादाजी कहीं फिर से डरा तो नहीं रहे हैं ? नहीं तो मोटर में बैठने की बात कहते समय काहे को हंसते हैं ?

दीनाम्मा लौटकर बोली—

"चावल परोस चुकी"

कुंयेनाच्चन धीरे-धीरे उठे । छड़ी टेकते-टेकते चले । हाथ धोकर खाने बैठे । भोजन के बाद उठे तो आंगन से किसी की पुकार सुनी—"कुंयेनाच्चा !"

"कौन ?"

छड़ी टेकने की आवाज। नजदीक आने पर ही आदमी को पहचाना—
"ईमानदारपाप्पी।"

"हां, तो तुम अब भी इसी दुनिया में हो! हो न?"

"ऐसा ही लगता है!"

"कल भी तुम्हारी याद आ गयी थी। कारण यह कि एक आदमी यहां ब्याह का निमंत्रण देने आया था।"

"कौन?"

"हमारे इस लंबे मात्तुन का एक लड़का। तुम्हें मिर्च सुखाने में मदद देता था न? वही। उसका नाम क्या है?"

"कोच्चोयि"

"वही। वही।"

ईमानदार सिर हिलाते बोला—

"उसके बेटे की शादी है!"

"हां, मैं उसे पहचान नहीं सका। घड़ी, जूता, हार, जरीदार दुपट्टा, कुछ पूछो मत।"

"दहेज दस हजार है।"

"कहा था। समय का खेल! तुम उसे दो चार पैसा देते थे—उसी से उसकी मां और छोटे भाई न भूख मिटाते थे। मात्तन शराब पीकर लड़ता-पिटता घूमता था। किसका अंदाज था कि यह इतना फूलेगा-फलेगा! रंज के दिन आते हैं तो खुशी के भी। रोपाई के दिन आते हैं और कटाई के भी।......

"सच है।"

"तुम उन दोनों ईशोच्चन से पचीस टावन्कोर रुपया उधार लेकर दसवें दिन पचीस ब्रिटिश रुपया लौटाते थे। लेन-देन ही बची सही। सचाई बहुत हुई तो यही नतीजा होता है।"

"ठीक है। मगर मैं छल करना नहीं जानता।"

"क्या?"

"छल करना नहीं जानता"

"हूं—यह छल किसे कहते हैं?"

"तुम्ही बताओ।"

"सौदे में बेईमानी नहीं? तुम नुक्कड़ पर थैला और कांटा लिये बैठे हो और कोई किसान छोटी टोकरी में सेर भर काली मिर्च ले आता है। उससे खरीदकर और किसी को मिर्च बेचो तो दो आने पैसे मिलेंगे। ईमानदारी का लाभ दो आने पैसे का चौथाई हिस्सा ही है। तो तुम क्या उसे पौने दो आने पैसे पर खरीदोगे? नहीं। आधे आने से शुरु करके एक आने-पैसे पर सौदा पटाओगे! यह क्या बेई-मानी नहीं है!

"ऐसा करने से काम चलेगा!"

"चलेगा कैसे, कहो तो!! सुनो जी, भिखमंगे को ही ईमानदार कहते हैं। निकम्मे, सीधे ईमानदार दब्बू और कम बोलने वाले को। क्या ठीक है न?"

"हो सकता है।"

"जिंदगी बिताने के लिए थोड़ी सी चतुराई चाहिए। वेदों में निषिद्ध बातें नहीं करनी हैं। विधवाओं और अनाथों को हानि नहीं पहुंचानी है मगर मेहनत तो जरूर करनी है। थोड़ी सी होशियारी भी चाहिए। युद्ध में क्या कूटनीति नहीं है! जीवन भी तो एक प्रकार का युद्ध है। जो चतुराई नहीं जानता उसे प्रतिद्वंद्वी हरा देगा। कुछ लोग कह सकते हैं कि यह बेइज्जती है, सनक है। उस कथन की परवाह नहीं करनी है। कुत्ते को खाओ, तब भी दस दिन की सनक ही रहेगी। मैं ने वेट्टियार की जमीन जो खरीदी थी उसकी कहानी तुम्हें मालूम है?"

'कोच्चुपाप्पी यों बैठा, मानो, तुम यही बात कितनी बार कह चुके थे, फिर भी और एक बार अब भी सुना लो। तुम्हारे पंजे से छूटना आसान नहीं है।'

लेकिन पहले की तरह किस्सा-कहानी सुनाने की सेहत अब कुयेनाच्चन में नहीं है। हांफते हैं। दीनाम्मा चौके से आयी; बोली—

"भोजन के बाद बातें ज्यादा करने से पिताजी को थकावट होगी? थोड़ी देर आराम करें न? दस कदम चलते-चलते पितजी को चक्कर आता है।"

"नही, थकान-कमजोरी कुछ नहीं है। तुम भीतर जाओ। मुंह बंद किये रहने से क्या आदमी मौत से बच जायेगा? आदम की तरह नौ-सौ तीस साल जिएगा? छह महीने या साल भर की उम्र बढ़ाने से लाभ ही क्या है?—अच्छा! तो मैं कह रहा था—वेट्टियार गांव का एक छाछवाला नायर था—"

दीनाम्मा ने ईमानदार कोच्चुपाप्पि से पूछा—"क्या काकाजी पान नहीं खायेंगे?"

"है तो खिलाओ। पान-सुपारी कूटनी पड़ेगी।"

"पांच सेर दूध का मट्ठा भरी गगरी टोकरी में रखे हर तीसरे दिन आ जाता। पैसे-दो पैसे का मट्ठा बेचते-बेचते शाम को नमक-मिर्च खरीदकर घर चला जाता। दिन भर चक्कर लगाने और परेशान होने से मिलता क्या? इकन्नी दुअन्नी मिलेगी! एक दिन वाह—उसका नाम क्या था—शंकरननायर-शंकरन नायर मेरे पास आकर बोला—कुंयेनामाप्पिला! थोड़ी सी मदद करो न? मुझे पचास रुपये चाहिए। पत्नी अस्पताल में है। दवा लेनी है।" छिटपुट सौदे से मेरे पास कुछ पैसे जमा थे। पैसे यों ही कैसे देता? उसने एक रास्ता भी सुझाया। उसके पास पांच 'परा' जमीन है। सात हिस्सेदार हैं। अपना हिस्सा खिलायेगा। शेष छह लोग दूसरे गांव में हैं। दो बहिनें और उनकी संताने। खेती का हक दे देगा। दूसरों की मालगुजारी उन्हें देना बस।

मैंने सोचा कि सौदा करूं कि नही? गाढ़ी कमाई के दस पैसे पर कहीं पानी फिर जाय तो? हमारे दक्खिनी घर के मामाजी उन दिनों जिंदा थे। उनसे सलाह लेना चाहा, पर उनका सलाह-मशविरा लेकर सौदा करना नहीं होता था। कहते—"काम बन गया तो ठीक। नहीं तो तेरी तकदीर।" बचपन से ही मैंने एक आदत पाली थी कि किसी के कहने भर से मैं कोई काम न करता था। औरों की सुनता जरूर। जो माकूल लगता स्वीकार करता। मेरा यक़ीन था कि हर बात पर प्रभु साथ देंगे। केशवननायर को रुपये दिये······।"

कोच्चुपाप्पि ने भूल सुधारी—

"शंकरननायर को।"

"हां, शंकरननायर को। उसने अपना हिस्सा लिख भी दिया। उस समय धान पके थे। कटाई के बाद मैं एक बैल और बैलवाले को लिये खेत जोतने चला। तभी दूसरों ने सारा किस्सा सुना। शंकरननायर फटीचर था पर उसके भानजे खाते-पीते थे। एक गुंडे ने पूछा—"कौन हो तुम?" झगड़ा। बहस! कहीं का कोई इसाई जबर्दस्ती खेत जोत रहा है। जब सारी बातें बतायी गयीं तब उन्होंने पूछा कि क्या दूसरे हिस्सेदारों से पट्टा लिखवाया है? मैं हार गया। बैल खोलकर घर लौटा। बातें बढ़ाने से लातें मिलतीं। दुधारू गाय देकर मारू बैल खरीदने का मामला हो गया।······"

कुंयेनाच्चन ने कुछ दम लिया। थकावट महसूस हो रही थी। अब दीनाम्मा

भी दरवाजे की ओट में खड़ी कहानी सुन रही थी, हालांकि उसी ने ससुर को बातें करने से रोका था। पहले सुनी हुई कहानियां अब भी मजेदार हैं। अगर ताकत होती तो कथा सुनाने के साथ अभिनय भी करते।

कुंयेनाच्चन ने कहानी फिर से शुरू की। तभी शिवरामकुरुप आया। उसकी चाल भी तालबद्ध थी। आहट से आदमी पहचाना जा सकता था। दीनाम्मा भीतर चली गयी।

"कुरुपजी आओ, बैठो—" यह कहा था कोच्चुपाप्पि ने। कुंयेनाच्चन सब कुछ भूलकर कहानी में मग्न थे :

"मैं तो यहां नहीं आया था। कोच्चुकृष्णन से कह दिया कि बैल को ले जाओ।"

"कौन से कोच्चुकृष्णन ?"

"बैलवाला······! तुम बैठे क्या सुनते हो ? कोच्चुकृष्णन नहीं उम्मिणि।"

"हां तो उम्मिणि। कोच्चुकृष्णन उम्मिणि का बड़ा भाई है। तो मैं सीधे चेप्पाट गांव गया। मन तिलमिला उठा था। किसी भी तरह बचकर लौटना चाहिए था। जमीन छोड़ देंगे। रुपया मिले तो वही गनीमत है। पूछते-ताछते गांव पहुंचा। वे भी खाते-पीते लोग थे। उनमें से एक सज्जन को पटा लिया। वह गुरु था, शराबी भी। उसकी अच्छी खातिरदारी की संक्षेप में कहूं, मालगुजारी का पट्टा लिखने गया था। लौटते-लौटते एक भी पैसा नकद दिये बिना पूरे खेत की बिक्री का कागज लिखा लिया। रकम किश्तों में ही चुकायी।"

शिवरामकुरुप ने कहा—

"मैंने ये सारी कहानियां पहले ही सुनी हैं।"

"क्या ?"

"ये कहानियां पहले से सुनी हुई हैं।"

"हां, सुनी होंगी। कोई शेर की बात नहीं है। है न ?"

"बिलकुल नहीं !"

कोच्चुपाप्पि उठा, बोला—

"चलूं, एक बकरा घर पर भूख से तड़पता है। कहीं से कटहल की थोड़ी पत्तियां जुटाने की उम्मीद से चला था।"

"तो जाओ।"

कोच्चुपाप्पि के चले जाने के बाद कुंयेनाच्चन ने शिवरामकुरुप से प्रश्न किया—

"चीज मिली, कुरुप ?"

"हां, बिना उसके क्या मैं आता ?"

आंचल से एक पोटली निकाली।

"परेशान था कि आज के लिये कुछ भी बचा नहीं है। इसके बिना काम नहीं चलता, कुरुप जी। लड़कपन ही से, इसकी आदत जो लग गयी है। वह किस्सा जानते हो ?"

"सुनाया है।"

"हां, क्या-क्या नहीं किया है! सब कल की सी बात है! अस्सी-नब्बे वर्ष पल-भर में खतम!"

"आदमी क्या सोचता है ? वह यों बेतहाशा दौड़ता है कि मानों संसार के अंत तक जिंदा रहेगा।"

"वह तो माया है! परमात्मा मानव को माया के पीछे चकराता है। कटहल की पत्तियों के पीछे चलते बकरे की तरह······"

"सच्ची बात!" "सही बात!"

"कुरुप मामा!"

चौके से सिसिली बेटी दौड़ आयी।

"ओहो! सिसिली मुन्नी! आ, आ।"

कुरुप ने सिसिली को गोद में बिठा लिया।

"मामा से मेरी कुट्टी! कुरुपमामा ने कहानी सुनने की बात कहते-कहते बहका दिया न ?"

"बस, इतनी सी बात पर! सिसिली मुन्नी को कितनी कहानियां सुनाऊं ? मामा सुनायंगे। राजकुमार और राजकुमारी की कहानी। [ढेला और पत्ते की काशीयात्रा की कथा! ······'

कहानी सुनने पर मामा को क्या दोगी ?"

"खीर।"

"कहां ?"

"मां उबाल रही है ।"

कुरुप जोर से हंसा।

"अच्छा ! सिसिली मुन्नी की मां खीर उबाल रही है तो खाकर जाऊंगा !"

कुरुप ने बात जोर से दुहरायी । तभी बात कुंयेनाच्चन की समझ में आयी। वे भी हंसे ।

सिसिली ने पूछा—

"तो फिर क्या खीर भूनते हैं ?"

दुलार से कुरुप ने सिसिली के गाल पर चूम लिया । इसी वक्त कुंयुचेरुक्कन आ गया । उसके हाथ में केले के पत्ते की पोटली थी । शिवरामकुरुप खीर खाकर ही जाता । मगर कुंयुचेरुक्कन को देखने पर शीघ्र ही आज्ञा ली। इसका कारण भी था । दोनों के बीच में अब ममता नहीं है । पहले दोनों मित्र थे। लेकिन एक बात को लेकर दोनों अलग हो गये । कुरुप जानता था कि कुंयुचेरुक्कन अपनी जीभ को जिस तरह चाहे मोड़ देगा । खिसक जाने में खैरियत समझी ।

कुंयुचेरुक्कन ने प्रश्न किया—

"पिताजी क्यों लेटे हैं ?"

"सवाल बहुत अच्छा निकला । तो और क्या चाहिये ? भाग जाऊं ?"

"क्या उठकर बैठ नहीं सकते ?"

"............"

"पिताजी ।"

"हूं ?"

"लीजिये, थोड़ा सा गोश्त। ताजे बछड़े का है ।

कुंयेनाच्चन ने करवट ली और उस पोटली की तरफ नजर डाली । इसराइल की संतानों के लिये आकाश से मन्ना जैसे आये वैसे ही यह अजीब बात थी । यह कांटे में पिरोया हुआ टुकड़ा है । मकसद क्या है ?"

"लो दीनाम्मा, यह ले जाओ ।

दीनाम्मा बाहर आयी और पोटली ले ली ।

"ठीक-ठीक मिर्च-धनिया मिलाकर गोइन पिताजी को भून दो। इसी पिताजी ने हाथ खोलकर खर्च किया और शौक से जीवन बिताया । मैं लाचार रह गया । वरना मैं क्या पिता को यों छोड़ता ? पिछले सावन से लेकर रामकृष्णन की दूकान

से चीजें खरीदते हैं। लेते-देते साठ रुपये का कर्ज रह गया। वह सिर पर सवार है। अगर दुत्कारूं तो फिर किससे लूं ?"

कुंयुचेरुक्कन दो क्षण तक पिता के जवाब के इंतजार में खड़ा रहा। धुआं लगी काली छत की तरफ आंखें किये कुंयेनाच्चन लेटे हैं। वझना के (एक तरह का पेड़) शहतीर सारे घुन खा गये हैं।······

"चलूं पिताजी ! किसी से कुछ पैसे उधार लेना है।"

"जाओ।"

कुंयुचेरुक्कन चला। फाटक तक जाकर लौटा।

"पिताजी !"

"हूं"—

"उस दिन फिलिप्योस ने जो पैसा दिया वह क्या पिताजी के पास है ? लड़के का पैसा आते ही खुद आकर दे दूंगा।"

"क्या ?"

कुंयुचेरुक्कन ने विनय व शांति से अपनी बात दुहरायी। फिर भव्यता से उत्तर की प्रतीक्षा में खड़ा रहा।

कुंयेनाच्चन मन ही मन मुस्कुराये। वाह ! तो बात यही थी ! यहां भी वही चाल है जो याकूब ने इसहाक को धोखा देने के लिए चली थी। याकूब को पिता के आशीर्वाद मिले, घर का मुखियापन भी। तू तो सिर्फ थोड़े से पैसे चाहता है।

"क्या वह कमाने के लिए लिया था ? खर्च हो गया होगा !"

"तो मैं चलूं पिताजी।"

बेचारा ! कुतूहल जगा। मैंने ही उसे दाना चुगना सिखाया था। पर इसकी चतुराई ! यह अपने घर पर ही चतुराई सीख गया है ! ······

"बेटी।"

"क्या ?"

"फिलिप्योस के दिये रुपये में कितना बचा है ?"

"चालीस-पचास होगा।"

"उसे अपने देवरजी को उधार दो······"

दीनाम्मा झिझकी। प्रभुवर ! यह तो वापस मिलने वाला नहीं।

"दे दो ! कल या परसों अपने लड़के का पैसा आते ही वापस देगा।"

उन्हें भी अच्छी-तरह मालूम है कि ऐसा कभी नहीं होगा। बहूको सिर्फ मनाने की बात थी।

दीनाम्मा का लाया रुपया कुंयुचेरुक्कन ने लिया। अपने चेहरे पर ऐसा भाव लाया कि यह पैसा लेकर बड़ी गलती की है। वह चला। फाटक तक पहुंचने के बाद वापस आया और बोला—

"पिताजी अन्यथा न समझें। दीनाम्मा को भी सूचित करना चाहता हूं। यह उठाईगीर कुरुप यहां क्यों हमेशा आया करता है? क्या वह देहली पर पांव रखने लायक है? हमारे दुश्मन नायर परिवार का जमाई। पिताजी को बातचीत करने के लिए क्या हमारी बिरादरी का कोई नहीं मिला? कोई नहीं हो तो मैं खुद आकर बैठा करूंगा······"

"हूं"

"जब कभी आता हूं वह यहां है। वह यहां क्यों आता है?"

"तुम जाओ। जाकर दूकानदार का कर्जा चुकाओ। मुझे तेल व उबटन खरीदने का पैसा है। सोमवार से पहले लौटा देना।"

"अरे! कह तो दिया? लड़के का पैसा आते ही यहां ला दूंगा। पिताजी को मुझ पर चार पैसे की बात पर भी यकीन नहीं।"

कुंयुचेरुक्कन चला।

चार

दीनाम्मा चौका और बरामदा गोबर से लीप रही थी। बाबूजी जिस बरामदे पर लेटते हैं उसका फर्श जहां-तहां ढहता जा रहा है। उसे लीपने का मौका नहीं मिलता क्योंकि कोई न कोई आते ही रहते हैं। लकड़ी का तहखाना और लकड़ी के तख्तों का पुराना घर है। चारों तरफ बरामदा है, जो कम ऊंचा है। सावधानी से न चले तो सिर टकरा जाए। पूरब और उत्तर में आंगन है। उत्तरी आंगन में मोटे जंगली पत्थरों से बना कुएं का जगत। भीतरी कमरे में लेटना असंभव है। न हवा अंदर आ सकती है, न रोशनी। नारियल के पत्तों के कवैत से दक्खिनी दालान को कमरे की शक्ल दी है। वहीं पर सोते हैं······

"बहू !"

"आयी बाबूजी।"

हाथ धोकर आ गयी।

"क्या कर रही थी ?"

"बरामदा लीप रही थी। सब कुछ ढहता जा रहा है।"

"छत भी बदलनी है। पुरानी शहतीरें हैं।"

"वह सब क्या आसान है ?"

"क्या ?"

"क्या हम फिलिप्योस भैया की तरह दुमंजिला मकान बनाकर रह सकते हैं ? कवैतों से कुटिया बनाकर यहीं रहेंगे।"

"भूखा न रखें, यही प्रार्थना है।"

"भूखा न रखेंगे।"

"बाबूजी को निश्चित रूप से यह कैसे मालूम ?"

"जरूर। अभी तक भूखों मरने की नौबत नहीं आयी। जब पैदा हुआ तब कानी कौड़ी तक नहीं थी। न रहने का घर, न जोतने की जमीन। पर मैंने तीस 'परा' खेत और साढ़े तीन एकड़ जमीन अपने बच्चों में बांट दी। जिस प्रभु ने इतना दिया उसके लिए कुछ भी नामुकिन नहीं है। इसरायली लोगों को कनान देश ले जाने की कौन सी ताकत मूसा में थी ? मूसा ने यहोवा से निवेदन किया "हे प्रभु ! तूने पहले ही बंदे से बातें की हैं। फिर भी मैं बोलने में चतुर नहीं हूं। मैं हकलाने वाला और मोटी जीभ का हूं।" यहोवा ने उससे कहा—"मनुष्य का मुंह किसने बनाया है ? मनुष्य को गूंगा वा बहिरा, वा देखने वाला, वा अंधा, मुझ यहोवा को छोड़कर कौन बनाता है। इसलिए तू जा, मैं तेरे मुख के संग होकर जो तुझे कहना होगा वह तुझे सिखलाता जाऊंगा।"

"पिताजी यह रामकहानी क्यों बता रहे हैं ? मैंने तो योंही पूछा था।"

"तुम्हें क्या मालूम है कि मैंने यह अहाता और घर किस तरह खरीदा था ?"

"मुझे कहानी सुनने की फुरसत नहीं है, पिताजी ! बुलाया क्यों ?"

"थोड़ी सी गरम कंजि चाहिए।"

कंजि अभी गरम नहीं हुई। खौलते ही लाऊंगी"

"हां, अगर कहानी नहीं सुननी है तो मत सुनो। जाओ। सुनने पर भी तुम्हारी

समझ में कैसे आये ? तुम तब पैदा तक नहीं हुई थीं। वाह ! क्या तुम्हारी मां भी पैदा हुई थी ? शायद नहीं। कोच्चाप्पी से घर खरीदते समय मेरी उम्र करीब बीस वर्ष की ही थी। सत्तर साल गुजर चुके हैं। कोलंबो कोच्चाप्पी ! पैसा कमाने की धुन से कोलंबो गया था। बेचारा ! इस मुहल्ले के सबसे प्रतिष्ठित परिवार का सबसे छोटा सदस्य था। किसी जमाने में सारा मोहल्ला उस परिवार के बुजुर्ग ईशो का था। वे घोड़े पर गांव का चक्कर लगाया करते थे। कहानी और भी है। पेरिङनश्शेरी से किसी जमाने में चार भाई भाग आये थे। उनमें सबसे बड़ा इस पनच्चिमूड मुहल्ले में आ बसा था। ईशो के दादा होंगे। रोज बाकी तीनों में एक सज्जन अम्पलप्पुझा में दूसरे मातेकाट में और तीसरे कट्टानम में रहे। कौन जाने, इस कहानी में सच कितना है, झूठ कितना ! जो हो, मेलोझत्तु घराना मशहूर था। मगर सब कुछ बेचते-बेचते बराबर कर दिया। बड़ा घर तक तोड़-फोड़कर बेचा। अभी जो मकान है वह कोच्चाप्पी के चाचा ने बनाया था। कोच्चाप्पी के दिनों में भुखमरी की नौबत आयी। वह काली मिर्च तोड़ने चला था। तब कुंयेना भी छिटपुट सौदा ही करते थे। वड़े पैमाने पर सौदा करने के पैसे पास कहां ? वह बेलों से काली मिर्च तोड़ता। देहात में घर-घर जाकर मूंग और कुलथी इकट्ठा करता। रोज की मजदूरी एक आना। वह और उसकी मां दो जने ही थे। मत्तायिचाचा को ताडी की दूकान के सामने मैजिक रावुत्तर ने छुरा भोंककर मार डाला। मां जब चल बसी तब कोच्चाप्पी किसी के साथ सिलोण चला गया। चार-पांच साल बाद ही लौटा। लौटा तो पास खासी रकम थी। साथियों के साथ दस एक दिन में उड़ा दिया। एक दिन आधी रात को मेरे पास आकर कहा—

"कुंयेना ! कल सुबह मुझे कोलंबो जाना है।"

"तुमने तो कहा था कि शादी करके यहीं बस जाना चाहते हो।"

"वह संभव नहीं है !"

"क्यों ?"

"कुछ गड़बड़ है।"

पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि बात गड़बड़ है। सिलोण में उसकी एक ब्याही औरत और बच्चा है। वहां से पुलिस उसकी तलाश में आयी है। अगर न जायगा तो आफत होगी—

"मैं अब की बार नहीं लौटूंगा। घर व अहाता तुम्हें चाहिये तो देने को तैयार हूं।"

ऐसी बात का अंदाज नहीं रहा। 'अपने घर' की बात कल्पना से भी परे थी। जब से होश संभाला तब से अपना घर नहीं गोसाइयों की तरह गठरी पीठ पर लादे घूमते थे। अफीम का सौदा था। चोरी का अफीम! तमिलनाड से चोखा-जाखाले ला देते। छोटी-छोटी गोलियां तैयार करके ग्राहकों को देते थे। अधन्नी में एक गोली! कुछ दिन पिता के साथ चला। पिता हमेशा अफीम के नशे में चूर रहते थे। स्मरण कच्चा रहता। झोली में दस चक्रम होते तो थोड़ी देर बाद गिन-कर कहते—"चौदह थे। तूने चुराया है। दे दे।" लगते थे अंधाधुंध पीटने। कुछ दिनों के बाद पिता के साथ चलना छोड़ दिया। उनसे बचता फिरता था। किसी के छोटे-मोटे काम कर देता और मजदूरी से पुट्ट, और चना खाता। चौपायों को पानी देता, खाद ढोता, पानी भरता सब कुछ करता था।

सिर्फ एक सौ पंचानबे रुपये में कोच्चाप्पी का घर व अहाता खरीदा था। वही नींव है। घर जरा नये सिर से बनाने की इच्छा तो थी। पर वह आशा पूरी नहीं कर पायी। सारी अभिलाषायें कहीं सफल होती हैं? परमात्मा की कृपा भी तो जरूरी है। उसकी कृपा के बिना घास तक नहीं हिलता। उसके हाथ में एक-एक जीवधारी का प्राण और एक-एक देहधारी मनुष्य की आत्मा भी रहती है। जैसे जीभ से भोजन चखा जाता है, क्या वैसे हो कान से वचन नहीं परखे जाते? जिसका वह ढा दे, वह फिर बनाया नहीं जाता, जिस मनुष्य को वह बंद करे, वह फिर खोला नहीं जाता जब वह वर्षा को रोक रखता है जल सूख जाता है। जब वह जल छोड़ देता है तब पृथ्वी उलट जाती है।······

दीनाम्मा सब्जी बना रही थी। पूल्लुपरंपु के कीवरीत की छोटी लड़की लीलाम्मा और कालायि के फिलिप्योस की बेटी पोन्नम्मा आ गयीं।

"अरे! ये कौन आये हैं! कहीं रास्ता भूल तो नहीं गयीं?"

"रास्ता कभी नहीं भूल सकती।"

"हमने छोटी उम्र में इसी रास्तेपर डगमग-डगमग चलना सीखा है चाची जी।"

"सो तो बचपन की बात रही। अब तो तुम लोग बड़ी औरतें हो गयी हो न?"

"नहीं तो? क्या हमेशा बच्ची बनी रह सकती हैं।"

"नहीं-नहीं! देखो न? एक श्रीमती पेट में बच्चे को ढोती हुई आयी है।"

लीलाम्मा शरम से गड़ गयी। दीनाम्मा को लगा कि लज्जा से उसका मुख विशेष सुंदर हो गया है। वैसे भी, बड़े भाई की पांचों बेटियां खूबसूरत हैं। सबसे बड़ी दुर्भाग्य से बीमार हो गयी। कह रहे थे कि इसे प्रसव पर बुला लाने के लिये पैसे नहीं थे। बेचारे चाची जी ने किसी-किसी से कर्ज लेकर संभाल लिया। इन्हीं की इज्जत की बात थी। पोलम्मा का ब्याह अभी छह महीने पहले ही हुआ। कोई नहीं जानता कि दहेज कितना है। पति या भाइयों से कुछ नहीं कहते। पति की कमाई बेटी को देते हैं। कहते हैं कि दामाद के पिता भी ठेकेदार हैं। रोजाना खर्च के लिये दस हजार रुपये तक दिये। आगे मोटर देंगे, घर भी बना देंगे। ऐसा सुना……

"लगता है, दादाजी गहरी नींद सो रहे हैं। हम थोडी देर पूरबी दालान में खड़ी रहीं। एक बार पुकारा था। आंखें नहीं खोलते।"

"नींद-वींद नहीं है। अफीम की खुमारी है। नींद कभी नहीं है। आधी रात को सूखा पत्ता भी खटके तो पूछते हैं कि कौन है ?"

लीलाम्मा ने कहा—

"अब देखने पर पहचानना तक मुश्किल है कि पुराने दादा हैं। सूरत तक बदल गयी है।

दीनाम्मा सोचने लगी—"यह क्या बताना चाहती है ! क्या यही कि हमने दादा को भूखा रखकर कमजोर बना दिया ?"

"ढलती आयु की कमजोरी है। यहां चाहे भूख हो या गरीबी, पर पिताजी को कुछ खबर नहीं होने देते।"

"ऐसा किसी ने कब कहा ? प्यारी चाची, मेरे मन में ऐसा कोई खयाल नहीं था।"

पोन्नम्मा ने दीनाम्मा का समर्थन किया—"और किसी भी जगह इतनी अच्छी देखभाल नहीं हो सकती जितनी दीनाम्मा चाची करती है।"

"सो तो मुझे भी मालूम है। पैसे हों न हों, सेवादारु की ही बात महत्व की है।"

दीनाम्मा ने प्रसंग बदल दिया !

"जाने दो, पोन्नम्मा अभी उस दिन आने के बाद नहीं गयी ?

"नहीं चाची !"

"जोयीं भैया अभी नहीं आये ?"

"मद्रास गये हैं। सोमवार को आयेंगे।"

दीनाम्मा ने नहीं पूछा कि क्यों गया है। मद्रास, बंबई की हवाई यात्रा करते रहने वालों से इस पर पूछना ठीक नहीं। गत सप्ताह गिरजे में देखने पर पोन्नम्मा के गले में और एक हार था। आज दूसरा हार है······

"सिसिली मुन्नी स्कूल में होगी न ?"

"है, अभी आयगी।"

"छोटे चाचाजी कहां हैं ?"

"दो दिन से बाहर हैं। कन्वेन्षन के पीछे पड़े हैं। तुम्हारे चाचाजी कहां पूछते हैं कि घर पर क्या है, क्या नहीं। जब कभी आते हैं तब तैयार मिलना चाहिये। प्यारी बिटिया, क्या तुम्हें मालूम है कि मैं कितनी पिसी जा रही हूं ?"

पोन्नम्मा बोली—

"सो तो हमारी मां हमेशा कहा करती है।"

"क्या करें बिटिया ? बड़े भोर को जागती हूं। बड़ी रात बीतने पर ही आंखें मूंद कर सो पाती हूं। इसलिये दादा की सेवा करूं, घर संभालूं, या महमानों की खातिरदारी करूं ? इसका जिक्र करने का खास कारण है। मेरी बिटिया, हमारी कुंयप्पि की स्त्री अम्मिणी परसों—परसों नहीं, पिछले सप्ताह में—यहां आयी थी। सांझ की घड़ी थी। पिताजी के पास दो-चार आदमी बैठे थे। मैं एकदम व्यस्त रही थी। उस औरत ने कल्लुविला घर कीचाचीजी से शिकायत की है कि मैंने उसका उचित सम्मान नहीं किया। वाह ! बड़े साहब की बेटी है न ? मानो और लोग नहीं जानते। मैंने सुना कि उसने ओर भी गंदी बातें भी कीं। क्यों नहीं, जो सीखा वही गाया जाता है।"

आवाज कुछ धीमी करके दीनाम्मा आगे बोली—"तुम लोग छोटी हो। फिर भी कहती हूं। कुंयप्पि से शादी करने के बाद भी उस औरत का पुराना आशिक उसके यहां आया करता था। खैर, हमारा क्या मतलब ?"

पोन्नम्मा ने कहा—

"ठीक है ! हम औरों की बातें क्यों कहें ;"

लीलाम्मा कुछ नहीं बोली। उसने इस कहानी की दूसरी व्याख्या सुनी थी। अम्मिणि चाची-दादा के लिये अच्छी मछली की सब्जी तैयार कर लायी थी। बातें करते-करते बोल गयी। "दादाजी के दिल की बातें नही चलतीं। तभी वे इतने

कमजोर हैं।"

दीनाम्मा चाची यह सुनकर चुप कैसे रहती ? बोली—"अगर इतनी ममता है तो ले जाओ और पांच-छह महीने खिलाओ-पिलाओ ।" बातों का बतंगड़ हो गया। पहले से दोनों में अनबन थी ।

प्रसंग बदलने के लिये लीलाम्मा ने प्रश्न किया—"राजन भैया की चिट्ठी आती है न चाची ?"

"पिछले हफ्ते में आयी थी । दो महीने के भीतर शायद छुट्टी पर आये ।"

पोन्नम्मा ने पूछा—

"चाची ने सुना ? कल्लुविला घर में नया मकान बनाने वाले हैं । बढ़ई केशवन कल घर बनाने की ठीक जगह देख रहा था।"

दीनाम्मा ने आश्चर्यचकित हो प्रश्न किया—"क्या कुंयुचेरुक्कन चाचा घर बना रहे हैं ? तुमसे किसने कहा ?"

"हमारा साम भैया वहीं था। तीन बड़े रूम, पोर्टिको चौका सब हैं। पिताजी ने कहा कि कम से कम पंद्रह हजार लगेंगे।"

लीलाम्मा बोली—

"वे भी एक अच्छा घर बनाकर उसमें रहें।"

"कहते हैं कि दानी भैया मोटी-मोटी रकम भेजता है। पैसा पिता जी के नाम नहीं आता। आता है दूसरों के नाम। कहते हैं कि चोर-बाजारी का पैसा है। चुपके से कभी आया भी करता है। ऐसा सुना है।"

दीनाम्मा ने कहा—

"लीलाम्मा, जैसा कि तुम कहती हो, वे मजे में रहें। मगर यह चालाकी और दांव छोड़ दें, बस।"

"सो क्या ?"

"सो तो बहुत है ; उस दिन सब भाई पिताजी का खर्च तय करने इकट्ठे हुए न ? उस वक्त पोन्नम्मा के पिता ने सौ रुपये दिए। उसमें कुछ तो खर्च हो गया। पचास बचा था। कुंयुचेरुक्कन चाचा वह पैसा यह वादा कर ले गये कि तीसरे दिन जरूर वापस करेंगे। पूरा महीना हो गया। जब बड़ी तकलीफ हुई तब मैं पैसा मांगने उनके यहां गयी। हाय रे बिटिया, पंद्रह हजार का घर बनाने की पूंजी हाथ में रखे हुए यह बेरहमी का काम ! हे प्रभु ! कैसे आदमी हैं !"

"दादाजी का खर्च कैसे चलता है ?"

"क्या बताऊं ? प्रभु चलाते हैं। कुंयप्पि ने पिछले हफ्ते में पचीस रुपया दिया। पोन्नम्मा फिलिप्योस भैया से न कहना। मैं तुमसे कह बैठी !"

लीलाम्मा बोली—

"चाची ! पिताजी ने दस रुपये दिए हैं। जेब खाली रहने के ही कारण वे कुछ दे नहीं पाते। मुझे बुलाने के लिये भी कहीं से उधार लिया है।" रोज शाम को पिताजी कहा करते—"हाय ! अपने बाप को मैं कुछ दे नहीं पाता ! मेरे पिता ने हमारे लिये कितनी तकलीफ झेली थी !"

"कीवरीत भाई कभी-कभी कुछ कह तो डालते हैं पर मन उनका प्रेम-भरा है। सो मैं अच्छी तरह जानती हूं।"

"घर पर भी यही हालत है। गुस्सा आ गया तो मां को और हमें भी बहुत लताड़ते हैं।"

"दिल के साफ लोगों की आदत यही होती है। रुपया तुम्हीं दादा के हाथ में दे देना। वे खुश होंगे······"

"वहां कौन हैं ?"

"दादाजी जग गये। आओ पोन्नम्मा।"

लीलाम्मा और पोन्नम्मा परब के दालान पर गयीं। उस समय भी कुंयेनाच्चन आंखें बंद किये लेटे थे।

"दादाजी !"

"कौन ?"

"मैं हूं—पोन्नम्मा ! ······"

"कब आयी ?"

"थोड़ी देर हो चुकी।"

"तुम्हारा शौहर नहीं आया ?"

"नहीं······"

"बच्चे कहां हैं ?"

लीलाम्मा ने हथेली से मुंह बंद कर हंसी दबायी। चौके से आयी दीनाम्मा ने सवाल किया—

"पिताजी ने इन्हें कौन समझकर बच्चों की बात पूछी थी ?"

"कौन ?"

"आंख खोलकर देखिये !"

कुंयेनाच्चन ने मुश्किल से आंखें खोलीं। देखा—

"पल्लुपरंप की लीलाम्मा। कालायि की पोन्नम्मा। पिताजी से मिलने आये हैं।"

"हूं"

दीनाम्मा ने कहा —

"यहां की मुन्नी भी पुकारती है तो कभी-कभी यही दंग रहता है। स्मरण करने की शक्ति कमजोर पड़ गयी है।"

"याद जरूर है री ! मैं एक सपना देख रहा था। कुंयम्मा की बात !"

"सुना ? एक मामी मंगनी के बाद शादी के पहले 'र गयी न ? उसी की बात कहते हैं।"

लीलाम्मा ने कहा—

"सुना है कि छोटे चाचा से भी छोटी थी !"

कुंयेनाच्चन बोले—"सोने का रंग था !"

"सो सब बातें याद करने से अब क्या फायदा दादाजी ?"

"यों ही याद कर रहा हूं"

"पिताजी ने सुना ! कुंयुचेरुक्कन चाचा एक बड़ा घर बनाने वाले हैं। कल भूमि की परीक्षा आदि हो चुकी।"

"क्या ?"

दीनाम्मा ने कही हुई बात फिर से दुहराई।

"किसने कहा ?"

"पोन्नम्मा ने। उनका सांकुट्टि देख आया।"

कुंयेनाच्चन मुस्कुराये। स्वच्छ हंसी भूमि का निरीक्षण हुआ होगा। नाप-तोल भी की होगी। मगर मकान नहीं बनेगा। यदि पूछते हो कि 'क्यों', तो बस वही सुच्ची स्थिति है। होशियारी की कमी नहीं। एकदम होशियार है। मछलियों में सबसे चालाक मछली कौन है ? जानते हो ? 'वराल'[1]। वह मेंड़ पर अंडे देती है।

[1]एक तरह की मछली

उसकी चतुराई को भी उसी कोटि की समझो। उसकी चतुराई व होशियारी के कारण उसे लखपति बन जाना था। तो भी वह अभी तक झोंपड़ी में रहता है।

वहीं पर दो लड़कियों की शादी कर दी गयी। अब तो विदेश गये बेटों के आग्रह के कारण घर बनाना चाहता है। उनके लिये कहीं से जब टीका आये तब लड़की के पिता कहेंगे न कि लड़का झोंपड़ी में रहता है? इसलिये घर का काम शायद चल भी सकता है······

सिर्फ होशियारी से कोई बात नहीं होती। ईश्वर की इच्छा भी तो चाहिये। फिलिप्योस पांचों लड़कों में सबसे कम होशियार था। वह छोटी उम्र में ही मेहनत का काम कर नहीं सकता था। शेष चारों जी तोड़कर मेहनत करते थे। तभी उस जमाने में गुजारा हो सकता था। पश्चिम में दूर से बालियों के गट्ठे सिर पर उठा लाना पड़ता था। घाट से गोबर व राख लाना होता था। अहातों में कुदाली चलाना और खोदना पड़ता। नौकरों या मजदूरों से ये सारे काम कराना संभव नहीं था। सब बड़े तड़के जग जावें। कुदाली, खुरपी वगैरह ले चलते। सबसे बड़ा ही मुखिया रहता था। काम करने की होशियारी दूसरे में थी। कुंयुचेरुक्कन उस जमाने में भी सुस्त व चालाक रहा था! फिलिप्योस कुछ नहीं करता। पसीना छूट गया तो खांसी-जुकाम शुरू हो जाता था। इसलिए वह स्कूल भी जा नहीं सका। जब वह करीब सोलह साल का था तब उसके एक मामा सड़क का ठेका लेकर मजदूरों के साथ आये। सड़क की मरम्मत क्या है? नाई जैसे बालों पर उस्तरा चलाता है, उसी तरह सड़क के दोनों बाजुओं को जरा सा खुरचते हैं। मैंने जब कहा कि यह लड़का बेकार पड़ा है तब मामा उसे अपने साथ ले गये। उनके पास से लौटा तो उसके पास छोटी-मोटी रकम जमा थी। वहीं से शुरूआत थी। जिस पत्थर को निकम्मा समझा वही पकी नींव का पत्थर निकला। वह और चारों से होशियार निकला—"

"दादाजी।"

"हूं—हूं······"

"फिर से आंखें बंद किये लेटे हैं?"

"सोता नहीं। कुछ बातें मन में उठ रही हैं।"

"इतनी बातें याद करने को क्या पड़ी है?"

"तुम मेरी उंगली जरा पकड़ लो। उठूं।"

पोन्नम्मा ने सहारा देकर उठाया।

"छड़ी ले आओ।"

"दादाजी क्या चल सकते हैं ?"

"हां-हां ! छड़ी दे दो।"

छड़ी के बल उठे। पोतियों के कंधे पर हाथ रखकर आंगन में उत्तरे। हवा लगने पर आराम मिला। हमेशा लेटे रहने से बड़ी थकान महसूस होती है। हाथ-पांव हिलाने की अनुमति मिले तभी न ?

दोनों लड़कियों को गौर से देखा। बड़े की बेटी उसकी मां की तरह गोरी, स्वस्थ और सुंदर है। फिलिप्पोस की बेटी छोटी उम्र में खाज-खुजली का शिकार रही थी। अब चेहरे पर दमक है। सो तो प्रकृति का नियम है। घूरे की चीज भी जवानी में चमक उठती है···

कुंयेनाच्चन बरामदे पर बैठ गये और पूछा—

"सुना कि तुम्हारे बाप ने आजकल बैलों का सौदा शुरू किया। क्या सही खबर है ?"

लीलाम्मा बोली—

"मुझे पता नहीं।"

"पैसा मिलेगा। मगर मनहूस काम है।"

लीलाम्मा ने जवाब नहीं दिया। वह क्या जवाब दे ?

तलप्पल्लि गांव का चेवियन (लंबे कान का) नाणु नामक दलाल था। वह इस मंडी में दो सौ तीन सौ कमाता। मान लो कि तुम एक बैल मंडी ले जाते हो। या तो उसका दांत खराब है या पैर ठीक नहीं। नाणु से मिलते हो। दलाली देंगे। माल बेचना ! मंजूर। एक ईसाई झोली में रुपया लेकर बैल खरीदने वहीं मंडी में आता है। नाणु उससे दोस्ती कर लेता है। पूछता किस भाव का बैल चाहिए। चालीस से साठ रुपये तक ठीक पटा देगा। उसे दलाली मिलनी चाहिए।

नाणु ग्राहक को लेकर तुम्हारे पास यों आता है, मानो तुम्हें बिलकुल नहीं पहचानता। पूछता है कि इस बैल को कितने में बेचोगे ? भाव बताते ही बैल की जांच शुरू होती है। नाणु खुद उसे चलाता है, उसके दांत गिनता है छूकर पीठ संवारकर जांचता है। अच्छा ! इसके बाद ग्राहक के कान में कुछ कहता है। —बात कबूल ! यही दलाल की चालाकी है।—तो क्या कह रहा था ? यों पैसे

लेते-देते और शराब पीते नाणु गुलछर्रे उड़ाता रहा। मगर आखिरी दिनों में मुंह से आवज तक नहीं निकल सकती थी।······"

लीलाम्मा और पोलम्मा हंस पड़ी। दीनाम्मा ने पूछा—

"बाबूजी इन बच्चियों को ये सब काहे को सुना रहे हैं ?"

"यों ही सुना रहा था।"

"यों ही सुना रहे हैं बच्चियों !"

"कै बजा ? मुन्नी नहीं आयी ?"

"अभी आयगी।"

लीलाम्मा ने अपने हाथ की कागज की पोटली दादा के हाथ में देकर कहा—

"पिता ने दिया है दादाजी !"

"क्या ?"

"दादाजी को तेल व उबटन खरीदने के लिए"

पोलम्मा ने कहा—

"जोयि भैया को लिखा है कि आते समय दादा के लिए एक ऊतनी चादर ले आवें !"

"कौन से जोयि भैया ?"

दीनाम्मा बोली—

"उसका 'मर्द' "

"मर्द भैया है ?"

"नये जमाने में ऐसा ही पुकारते हैं।"

लीलाम्मा और दीनाम्मा जोर से हंसी।

लीलाम्मा बोली—

"दादाजी, हमें जाने दीजिए !"

"नुक्कड़ तक मैं भी चलूंगा"

कुयेनाच्चन छड़ी के सहारे उठे।

"हाय ! दादाजी क्या चल सकेंगे ?"

"हां, हां"

"चाची जी।"

"चाची-काकी ! मैंने ही तो कहा कि आऊंगा"

"पिताजी यह क्या कह रहे हैं ? चक्कर आयेगा और गिर पड़ेंगे न ?"

"कहीं नहीं गिरूंगा। जरा चुप रहो "

दीनाम्मा चुप रही। उसे मालूम है कि नहीं मानेंगे।

"साथ देना बच्चियों। अच्चनकुंयु या सण्णि के साथ ही वापस भेजना—सिसिली के पिता के कानों में खबर पड़े तो बिगड़ेंगे।"

चले। पोन्नम्मा और लीलाम्मा दोनो बगलों में थीं। आंगन के बाहर पांव रखे पूरा महीना हो चुका। आसमान, हरियाली, खेती का मैदान, गिरजाघर आदि दिल को तरावट पहुंचाते हैं। बंद पिंजड़े से बाहर निकलने का सा जोश महसूस होता है। यह सारी जमीन मेरे पैरों से रौंदी हुई है। ये सारे पेड़-पौधे मेरे देखते-देखते अंकुराते बड़े बने हैं। कुछ दिन और बीतने पर मैं नहीं रहूंगा। यह मिट्टी और ये पेड़ रहेंगे। सिर्फ हम नहीं रहेंगे। जायेंगे कहां ? स्वर्ग या नरक ! कौन जाने ? स्वर्ग जाने का पुण्य नहीं किया है। नरक जाने का महापाप······ साफ दीखता नहीं। गंदे मन से जानबूझकर कोई पाप नहीं किया है। गुजारे के लिये तो कुछ जरूर किया है। नायर लोगों से हाथापाई हुई सो क्या पाप था ? बड़ी संख्या में जब लोग गर्व से अन्याय करने को तुले थे तब मैंने उसे माना नहीं। न्याय निर्णय के दिनों में यहोवा के जन ने भी अन्याय को रोका है। पर हां, डेविड की तरह एक पाप किया है। यहोवा ने मूसा को जो दस आदेश दिये उनमें सातवें और प्रधान आदेश का उल्लंघन किया था। उन दिनों पाप व पुण्य पर सोचने की फुरसत नहीं रही। उसके नाते नरक का दंड शायद मिले। प्रकाशित वाक्य-कार ने कहा है। आकाश से आग उगलते गंधक तालाब में शायद धकेल दे। कौन जाने ?

चौराहे पर रामकृष्णन की दूकान के सामने बेंच पर बैठ गए। रामकृष्णन ने ही खुद आगे बढ़कर उन्हें बेंच पर बिठाया था।

"धंधा कैसे चलता है ?"

"चलता है। लेकिन चलता नहीं, असल में चला रहा हूं। हमारे लोगों को आप जानते हैं। खरीदने पर पैसा नहीं देते। पूछने पर बिगड़ पड़ते हैं। क्या किया जाए ?"

"मुश्किल है।"

कुंयेनाच्चन बुरा न मानिएगा। आपके बेटे से अभी तक साठ-सत्तर रुपया

मिलना है। चीजें लिए पांच-छह महीने गुजर चुके।"

"कौन ? कुंयुचेरुक्कन ?"

"हां।"

"पिछले महीने में क्या चालीस-पचास रुपये नहीं दिये ?"

"कहां से ? चार पैसे भी नहीं दिये। पूछा तो दिल भर कोसा, गरजा। अब सौदा भी बंद कर दिया।"

कुयेनाच्चन ने आगे-कुछ नहीं कहा। अपने ही दांत खोदकर सूंघे क्यों ?]

पता नहीं ! कहां से आया। फिलिप्पोस हाथ में सैकिल थामे दूकान के सामने खड़ा था।

"पिताजी यहां कैसे बैठे हैं ?"

"क्या ?"

"यहां बैठे कैसे ?"

"ओह ! छड़ी टेककर धीरे-धीरे चलने की कोशिश कर रहा था। कितनी देर खटिया पर पड़े रहें ?"

"कहीं रास्ते में चक्कर आ जाए तो।"

"ना, कुछ नहीं होगा।"

"कुछ नहीं होगा। उस दिन मैंने जो रुपये दिये उसे क्या मंझले लड़के को उधार दिया ?"

"किसने कहा ?"

"कहा किसी ने भी हो, क्या दिया ?"

कुयेनाच्चन चुप थे। चौराहे पर खड़े होकर गलत-सलत बताये बिना घर जाओ······

"अकेले पिताजी ने उन्हें इतना बिगाड़ रखा है ! कैसे चुप रहूं ? लड़कों की मदद करनी हो तो अपनी कमाई के पैसे से करें।"

कुयेनाच्चन ने तब भी मौन धारण किया।

"उस दिन बेटे-पोते सब थे न ? और किस-किसने खर्च के पैसे दिये !"

"सिर्फ तुमने दिये। जब दिया तब मेरा हो गया न ? जिसको चाहूं, दूं, तुमसे मतलब ?"

"मैं इस तरह एरे-गैरे को खिलाना-पिलाना नहीं चाहता। एक ही दफे देना

काफी नहीं। बारंबार चाहिए न ?"

"नहीं चाहिए, जाओ !"

"जाओ ! ये बुरी आदतें पालने से ही···"

"क्या तू मुझे धमकाने आया है ? जा रे ! तूने नहीं देखा कि मेरी मूंछ से कितना झड़ गया है ? अधजल गगरी झलकत जान ! तू ओछा है। तू कमीना है······"

बातें सुनकर भीड़ जमा होने लगी। किसी ने कहा—

"जाने दो कुंयेनाच्चन ! कोई सुन भी ले तो क्या कहे ?"

"अरे, वह तो उसे सूझना चाहिए न ?"

फिलिप्योस कुछ बोले बिना सैकिल पर चला गया। जो जमे थे उन में एक आदमी की फिलिप्योस से नहीं बनती थी। वह बोला—"शरम व बेशरमी का फरक न बाप जानता है न बेटा।"

उसके साथी ने यह भी जोड़ दिया—"सिर्फ पैसा जमा करने से सब कुछ को हासिल समझना भारी भूल है।"

कीवरीत का छोटा बेटा अच्चनकुंयु और कुंयुचेरुक्कन का चौथा लड़का सण्णि कुंयेनाच्चन को ले चलने आये। दोनों पोतों के साथ वे चले। नाके पर बैठकर इतना कह डालना गलत था। मगर कोई कहलाये तो कैसे चुप रह जाय ? कमजोरी में घर से निकलकर बड़ी भूल की। जाऊं—"

"दादाजी इतनी दूर क्यों चले !"

"अरे जानना है न कि चलना कहीं भूल तो नहीं गया ?"

सण्णि बोला—

"वाह !"

सण्णि बुजुर्गों की तरह बातें करता है। होशियारी और हिम्मत पिता से विरासत में मिली है। तगड़ा भी है। सीना तानकर चले तो कोई एक बार जरूर रुककर देखेगा······

"तेरी उम्र कितनी है ?"

"मेरी या अच्चनकुंयु की ?"

तेरी ही।"

"पंद्रह।"

अच्चनकुंयु बोला—

"मैं सोलह पार कर चुका।"

दोनों को बारी-बारी से देखा। पंद्रहवाला सोलहवाले का बड़ा भाई लगता है। उपजाऊ जमीन में बोया नारियल का पेड़। बात और भी है। इसकी मां पांच सेर चावल पांच ही कौर में हजम कर जाती है। अच्छा भोजन मिला। ढांचा भी अच्छा रहा—

"तुम किस दर्जे में पढ़ते हो?"

"सिक्स्थ में"

"मट्रिग्लीष (मेट्रिक) के बाद क्या करने का ख्याल है?"

अच्चनकुंयु ने कहा—

"हमारे पिताजी कहते हैं कि कहीं जाओ। किसी से मिलकर रोटी का सवाल हल करो।"

"ठीक है न? वह और क्या करेगा?"

सण्णि बोला—

"मैं दानी भैया के साथ बंबई जाऊंगा।"

"हूं, कहीं जाओ।" जैसा कि कीवरीत ने कहा—"रोटी का सवाल सुलझा लो।"

अच्चनकुंयु ने प्रश्न किया—

"राजन भैया से कहूं तो मुझे भी क्या पलटन में भरती करेंगे दादाजी?"

"उससे पूछो तो? सुना है कि अगले महीने में आ रहा है।"

फाटक तक पहुंचने पर दोनों को वापस भेज दिया। भीतर कोई बातचीत कर रहे थे। पास जाकर देखा तो पता लगा—"कुरुप!"

"तो सिसिली मुन्नी के नाम दो हैं न? एक स्कूली नाम, एक घर का नाम।"

"क्या? क्या?"

"हां, कुंयेनामाप्पिला आ गये। सिसिली मुन्नी आज मेरे साथ ही स्कूल से आयी। "कुरुपमामा" पुकारती दौड़ी आयी और मेरा हाथ पकड़ लिया। तब साथिनें पूछने लगीं—"तो क्या मरियाम्मा मात्यू जा रही है?" तभी मुझे मालूम हुआ कि सिसिली घर का प्यारा नाम है।"

"मरियाम्मा उसकी दादी का नाम है। प्रभु ईसा की मां का नाम भी है।"

"सो मालूम है। वल्लत्तोल का मग्दलनमरियम पढ़ा है—

रोओ रोओ मान्ये मरियम !
रोने वालों को प्रभु सांत्वना देते हैं······
"···············"

"कुरुप को भूल हो गई। मगदलैना की मरियम और है। प्रभु की मां दूसरी।"

"ऐसी ?"

"हां हां। मग्दलेना मरिया पापिनी थी। ईसा उस दिन एक फरीसी के घर में भोजन करने बैठे थे। नगर की एक पापिनी स्त्री संगमरमर के पात्र में इत्र लेकर आयी और अपने आंसू से उनके चरण धो डाले—फिर उन्हें अपने केशों से पोंछ लिया और उनके चरणों को चूमकर उन पर इत्र लगाया। वह फरीसी, जिसने ईसा को न्योता दिया था, यह देखकर मन ही मन कहने लगा कि यह तो पापिनी है। उसके विचार को समझ कर प्रभु बोले—"सिमोन, किसी महाजन के दो कर्जदार थे। एक पांच सौ का ऋणी था, और दूसरा पचास का। उनके पास कर्ज अदा करने के लिए कुछ भी नहीं था, इसलिए महाजन ने दोनों को माफ कर दिया। उन दोनों में से कौन उसे अधिक प्यार करेगा ?" सिमोन ने उत्तर दिया—"मेरी समझ में तो वही, जिसका अधिक ऋण माफ हुआ।" ईसा ने उससे कहा—तुम्हारा निर्णय सही है। तब प्रभु ने उस स्त्री की ओर मुड़कर सिमोन से कहा—"इस स्त्री को देखते हो ? में तुम्हारे घर आया। तुमने अर्घ्य नहीं दिया; पर इसने मेरे पैर अपने आंसूओं से धोये और अपने केशों से पोंछे।" ईसा ने उस स्त्री से कहा—"तुम्हारे विश्वास ने तुम्हारा उद्धार किया है। शांति से जाओ।" वही मग्दलना की मरिया है। सुसमाचारकार कहते हैं कि मग्दलना की मरिया और प्रभु ईसा की मां दोनों क्रूसआरोहण पर साथ बैठकर रोयी थी।"

"अच्छा ! ये सारी बातें मुझे मालूम नहीं थीं।"

सिसिली चौके से दौड़ी आयी और बोली—"दादाजी ! राजन भैया अगले महीने में आने वाला है। चिट्ठी है।

"क्या ?"

"राजन भैया अगले महीने में आयेगा।"

"अच्छा !"

कुरुप ने पूछा—

"राजन भैया की लायी चीजें कुरुपमामा को भी देगी ?"

सिसिली ने सोचा। कहा—

"देखेंगे कि क्या लाता है। उसके बाद बताऊंगी।"

"होशियार ! है छोटी, पर चालाक है।"

कुयेनाच्चन ने पूछा—

"क्या छोटा नाग जहरीला नहीं होता ? वैसे ही। औरत के लिए दो शाप होते हैं। एक यह कि वह चालाकी के सामने धोखा खा जाती है। दूसरे, मौका आने पर वह खुद चालाकी करती है। दोनों एदन के बगीचे से शुरू हुए थे। शैतान सांप के वेष में स्त्री के पास ही तो आया था। स्त्री शैतान की गुलाम हो गयी। शैतान का दुरुपदेश सुनकर स्त्री ने देखा कि विवेक का फल खाने लायक, देखने में सुंदर और ज्ञान पाने के लिये वांछनीय होता है। उसने तोड़कर खा लिया। अगर आदम साथ होते तो क्या वह स्त्री उस तरह करती ? खुद खा गयी। साथ ही पति को भी दे दिया—"

"वाह ! कैसी चतुराई ?"

'कहानी और भी है। याकूब लाबान की दो कन्याओं को—राहेल और लेया—लेकर भागा। लाबान और उसके भाइयों ने उसका पीछा किया और रास्ते में घेर लिया। बात यह थी कि राहेल अपने पिता के गृह-देवताओं को चुरा ले गयी थी। उसे वापस लेना था। मालूम है कि राहेल ने क्या चाल चली ? मूर्ति को ऊंट की काठी में रखके उस पर खुद बैठ गयी। और सब जगह तलाश करने के बाद लाबान जब राहेल के पास आये तब वह बोली—"हे मेरे प्रभु; इससे अप्रसन्न न हो कि मैं तेरे सामने नहीं उठी। मैं अपने धर्म में हूं।" यों उसने धोखा देकर पिता को लौटा दिया।

"वाह ! अच्छी चाल चली !"

कुरुप की हंसी चारों तरफ गूंज उठी।

स्त्री की चतुराई के कितने ही उदाहरण पुराणों में हैं। पुराणों तक जाने की जरूरत ही क्या ? बटक्कनपाट्ट में एक अच्छी कहानी है, सुनी है, ? कहते हैं कि उण्णिअम्मा ने पालाट्टकोमन को अपने केशों में छिपाया था। तोण्णूरांवीट के कुरुप लोगों की बहिन उण्णिअम्मा कुलशत्रु कोमन पर अनुरक्त हुई। वह तालाब पर नहाने चली तो कोमन उसके पीछे चला और तालाब में उतरा। खबर पाकर कुरुप लोग वहां आ गये। उण्णिअम्मा ने क्या किया ? उसने महीन कपड़ा लेकर

पहन लिया और कमर तक पानी में उतर गयी। उसने अपने घने केश खोले और केशों के नीचे कोमन को खड़ा कर लिया। भाइयों ने सब जगह ढूंढ़ा, पर बेकार। जाल फेंककर तलाश किया, कांटा मारकर देखा। असफल निकले। वे चले गये। बाद में उण्णिअम्मा कोमन को केशों के नीचे खड़ा करके किसी को खबर लगे बिना ही अपने घर ले गयी। यही कथा है। तो कुंयेनामाप्पिला, उसके केशों की संपत्ति कैसी रही होगी?"

अगल-बगल झांकने के बाद धीरे से बोले—

"लेटने पर पूरी खाट पर फैल जायेगा।"

"वाह! वाह! वाह!"······कुरुप ठठाकर हंस पड़ा।

"अच्छी कल्पना।"

"क्या?"

"कल्पना बहुत अच्छी है।"

"कल्पना नहीं।"

"तो"

"अपना अनुभव।"

कुरुप का मुंह खुला ही रह गया, आंखें भी "ओह! यह तो अभी तक नहीं कहा है।"

"कहने को क्या धरा है। एक पुरानी बात याद आ रही थी।"

वे बात छिपा रहे थे। यहां बैठकर उस बात को सुनना ठीक नहीं। भीतर बहू सुन लेगी। यही नहीं, पैंतालीस वर्ष की मूर्खता नब्बे वर्ष की दशा में किस तरह औरों से कहें। कहानी वैसे सबसे छिपी भी तो नहीं है। बेटों को भी पता है सबसे बड़े लड़के ने मुंह पर कहा था—"पिताजी ने बेटों को बड़ी इज्जत विरासत में दी है। खैर, अब गड़े मुरदे उखाड़ने से क्या लाभ?"······

"पिताजी"

मुड़कर देखा। कुयुचेरुक्कन खटिया के पास खड़ा था।

"क्या है?"

"मैं पिताजी से एक बात कहने आया था।"

"बोल।"

"सिर्फ पिताजी से कहने की बात है।"

हुं ! बात जरा टेढ़ी है। शिवरामकुरुप समझ गया। वह उठकर बोला—

"तो मैं चलूं कुंयेनामाप्पिला ?"

"दवा कल खतम हो जायेगी। शाम को लाना।"

"अच्छा !"

"पैसा लेते जाओ न ?"

"बाद में लूंगा।"

कुरुप सीढ़ियां उतरकर चलने लगा

कुंयुचेरुक्कन ने पिता से पूछा—

"पिताजी, अफीम खरीदने के लिये क्या आपके बेटे-पोते नहीं हैं जो किराये पर लोगों को लगा दिया है ?"

कुरुप पीछे मुड़कर खड़ा हो गया। खतरा समझ कुंयेनाच्चन बोले—"तुम चलो कुरुप ! कल मिलेंगे।"

"कल मिलने की बात ही मैं कह रहा था। क्यों मिलें ? पिताजी को जो चाहिये, सो मैं खरीद लाऊंगा। नहीं तो हमारे घर के किसी लड़के को भेजेंगे।"

अदब—बिनती बहुत करने पर भी एकदम झुकना कुरुप को शान के खिलाफ लगा।

"क्यों कुंयुचेरुक्कनमाप्पिले ! तुम्हारे पिताजी से मेरा बातचीत करना या उन्हें दवा खरीद देना क्या बड़े अपमान की बात है ?"

हां, एक तो तुम घर पर बुलाने लायक नहीं हो। जहां गये, वहां रिश्ता ! तुम्हारी एक स्त्री के घरवलों से हमारा छत्तीस का नता है। वे बिरादरी के लोगों को लेकर हमारा काम तमाम करने आये थे। मगर, हमने तुम्हारे चार सालों को दूसरी दुनियां को भेज दिया। तीन चार लोग खांसते-खूंसते खतम हुये। हमारा तो एक ही आदमी गया। खैर, वे सब बातें तुम्हें बताने से लाभ ? और तो और तुम बेईमान हो। तुम सिर्फ पौने चौदह रुपये के लिये भेदिया बने······

कुंयेनाच्चन फड़फड़ाकर उठ—

"कमीने ! मेरे घर से निकल जा ! इतनी हिम्मत !"

शिवरामकुरुप ने कहा—

"कुंयेनामाप्पिला चुप रहें। तो सुनो कुंयुचेरुक्कनमाप्पिले ! तुमने जिस पाठशाला में सीखा उसमें मैंने नहीं सीखा है। इसलिये तुम्हारी जबान में बोलना मुझे

नहीं आता। घर पर आने देने का मामला यहां के लोग तय कर लेंगे। अगर वे नहीं आने को कहें तो मैं नहीं आऊंगा। मैं ऐसे घर से एक शादी कर बैठा जिससे पहले तुम लोगों की दुश्मनी थी। उसकी छूत सिर्फ तुम्हीं को लगी है। तुम्हारे बड़े भाई या छोटे भाई नहीं मानते। बात असल में तिसरी है। रिश्वत लेकर झूठी गवाही देने का मामला—"

"सो तो तुम्हारा धंधा ठहरा। जहां कहीं जाते हो, शादी के नाम से औरतों को बहका देते हो! यह भी तुम्हारा धंधा रहा। यहां मैं ज्यादा भ्रष्ट बातें नहीं करता। बाहर देख लेंगे।"

"जहां चाहो, मिलेंगे" कुरुप चला गया।

कुंयुचेरुक्कन ने कहा—

"पिताजी मुझे गाली दें। उसमें मेरी बेइज्जती का सवाल नहीं है। गलत बात तो मैं जरूर रोकूंगा। एक बात पर सलाह लेने आया था। मगर पिताजी ने मुझे निकल जाने का हुक्म दिया। घर पिताजी का है! अवश्य। पर मैंने भी वह सब जुटाने के लिये कड़ी मेहनत की है। पिताजी वह बात न भुला दें। और सब बेटे अच्छे! सिर्फ मैं नालायक ठहरा। सिर्फ मैं नालायक! ······

कुंयेचेरुक्कन का गला रुंध गया। अभी रो पड़ता—"

"बिटिया-दिनाम्मा!"

"भैया को थोड़ा पानी पिलाओ"

दीनाम्मा ने बड़ा कटोरा भर पानी दिया। वह पीने के बाद कुंयुचेरुक्कन गया।

"चलूं ,बिटिया!"

दीनाम्मा खाली कटोरा लेकर बाबूजी के पास गयी, बोली—"बाबूजी!"

"हूं"

"एक बात कहूं?"

"क्या?"

"इस कुरुप से अफीम खरीदवाना छोड़ दीजिये। यहां उसका आना भी बंद करा दें।"

"क्या उसका आना तुम्हें भी नापसंद है?"

"बाबूजी के पास बैठकर वह बातें करें। मुझे एतराज क्या है?"

"तो वह यहां आएगा। मेरी आखिरी घड़ी तक। कुत्ते के भूंकने से कहीं दरवाजा

खुलता है !"

"सो बाबूजी की इच्छा ! मैं क्या बोलूं ?"

दीनाम्मा भीतर चली गयी।

पांच

स्कूल जाने की तैयारी कर सिसिली ने दादाजी के पास आकर पूछा—

"मेरा फाक कैसा है दादाजी ?"

"क्या ?"

"मेरा फाक देखिये न ?"

"अच्छा है।"

"बंद आंखों से कैसे देखेंगे ?"

"बंद आंखों से भी देख सकता हूं।"

"झूठ बोल रहे हैं।"

"अंगूर के पत्तों और अंगूर के गुच्छोंवाला फाक है न ?"

"दादाजी ने कैसे देखा ?"

"यही बात है। ज्ञानी लोगों की आंख भीतरी होती है। भविष्यवक्ता एलियास को किसने दिखाया कि देश में सूखा पड़ेगा और अकाल होगा ! यहोवा ने। यहोवा के भक्तों के लिये कुछ भी अदृश्य नहीं है।"

"दादाजी भी क्या भगत हैं ?"

"हूं"

"तो क्या सब कुछ जानते हैं !"

"हूं।"

"क्या मैं परीक्षा में पास हो जाऊंगी ?"

"हो जायेगी"

"परीक्षा आगामी सोमवार को है"

"क्या अच्छी तरह सीखा है ?"

"थोड़ा-थोड़ा दादाजी ; प्रभु से कहकर मुझे पास करा देना"

सो मुमकिन नहीं। खुद आधा और शेष आधा खुदा का है। जल्दी सीख लो।

"तो मैं जा रही हूं"

"जा"

वह उछलती छलांग भरती चली गयी । सिर्फ आवाज ही सुनाई दी। फिर भी कुछ-कुछ अंदाज तो है कि माथे पर बिखरती अलकों को एक हाथ से समेटती। दूसरे हाथ में रबड़ के नाड़े से बांधी पुस्तक व स्लेट। जैसा कि श्रेष्ठगीत में कहा है—"तू फिरोन के रथों में जुती हुई घोड़ी के समान, एनगदी की दाख की बारियों में मेहंदी के फूल के गुच्छे की तरह शारोन देश के गुलाब के समान सुंदर है। तेरी आंखे कबूतरी की सी हैं। तेरे केश गिलेयाद तराई के बकरों के झुंड के समान हैं। तेरे होंठ लाल धागे के समान, तेरे कान अनार के दानों की तरह है। छोटी हिरनी की तरह तू उछलती फांदती चलती है। आम के बौरे की तरह तू हृदयहारिणी है······"

चार-पांच बरसातों के बीत जाने पर तू सयानी बन जायगी। गाल चमकेंगे। आंखों में रौनक आयेगी। टखनी तक का लहंगा होगा। दस बारह बरस की ही होगी। फिर भी तुम्हारी मां कहेगी—"किसी मर्द के साथ चलने की उम्र हो चुकी। पर चटनी बनाना भी अभी नहीं आता।"

आगे तीन-चार वार्षिक पर्व, व्रत। अब खिलखिला कर नहीं हंसती। अगल-बगल नहीं झांकती। कई नई बातें समझ गयी है। फिर भी कुछ न जानने का बहाना करती है। दिमाग खाली रहता है। फिर भी किसी चिंता में चूर होकर झूमती चलती है। बैठ-बैठे यों ही मुस्कुराती है······

यह एक मोड़ है। अब आगे के लिये तुझे एक साथी चाहिये। एक चैत में विवाह के मंडप पर पांव रखती है तो दूसरे चैत बच्चे की मां हो जाती है। फिर होशियार सुशील गृहिणी बन जाती है। बकरा, मुर्गा, रसोई, चक्की······सब तुम्हारी मां के ही बराबर। आगे भी कृस्तमस। गिरजाघर के वार्षिक पर्व गुजर जाते हैं। बड़ी बेटी की छोटी बहनें जनम लेती हैं। या बेटे के छोटे भाई व छोटी बहनें। अब पश्चिमी अहाते में काम करने वाले मजदूरों का काम देखने के लिये तू खुद जाती है। पचास रुपये उधार लेने आये हुए चालक तोमास के सामने तेरे पति झिझकते हैं तो तुम बाहर आकर कहती हो······फूटी कौड़ी तक नहीं है भैया। कल आते तो होता।

समय का पहिया फिर से कई बार घूमता है। कालेज में पढ़ते दोनों लड़कों की फीस देनी है, और पुस्तकें······। श्रीमान जी को मधुमेह की शिकायत। उसकी दवा के पैसे चाहिये। बड़ी तंगी है। बेटी के ब्याह के लिये जमा किये रुपये से कुछ

खर्च किये। पति-पत्नी एक दूसरे से सलाह लेते—यह ढंग ठीक नहीं चिता, उसांस—अब पतवार तेरे ही हाथों में होगी।

तब एक रात आयेगी। गरमी के दिनों की रात पति बुलाते हैं—"सिसिली!"

"क्या?"

"सोयी नहीं?"

"नहीं"

"क्यों नहीं?"

"कुछ न कुछ सोचती पड़ी रही।"

"मुझे चार-पांच रोज से बड़ी कमजोरी लग रही है।"

"चार-पांच दफे टीका लगाने से आराम मिलेगा।"

"हूं—बच्ची की बात सोचकर मन को कष्ट महसूस होता है।"

समस्या सुलझती नहीं। कमजोरी दूर नहीं होती। वह दुनिया से विदा लेता है। पर तू हिम्मत हारने को तैयार नहीं। बड़ी परीक्षा पास किये बड़े लड़के को अच्छी नौकरी मिली। बेटी की शादी करा दी। बेटे की बहू आयी। बेटी व बहू माताएं बनीं। तू दादी हो गयी।

फिर से सूखा और बाढ़ बारी-बारी से आते हैं। तुम पहले की तरह काम तो कर नहीं सकतीं। आंखें कम देखती हैं। कान ऊंचा सुनते हैं। गालों पर झुरियां हैं। लाठी के बिना चलना नामुमकिन! बेटे-पोते कुशल पूछने आते हैं। अब तुम्हारी कोई हस्ती नहीं। बेटे या बहुएं कुछ दें तो खायें। आरोप-अभियोग—टीका-टिप्पणी सब बरदाश्त करना पड़ता है······

यह सोचकर सहन करती जा कि बहुत कम समय बचा है। यह सोचकर सहन कर ले कि तेरे माता-पिता-दादा सबको इस हालत से गुजरना पड़ा है। ज्यादा से ज्यादा आधी घड़ी!

आखिर इन सबका कुल मतलब ही क्या रहा? माया के महत्व के कारण हम व तुम नहीं पहचानते। तरह-तरह के लोगों में हम फंसे रहते हैं। दूर के ढोल सुहावने लगते हैं। किसी सुख को हथियाने के लिये बेतहाशा दौड़ते हैं। रातें और दिन गुजर जाते हैं। जिसको पा लेना सुख का कारण समझा जाता है उसे पाने के उपरांत वह खोखला नारियल सा लगता है। क्या तुमने मकड़ी को जाला बुनते देखा नहीं है? वह सोचता है कि बड़ी बादशाहत बना रहा हूं। पल भर भी

आराम किये बिना मेहनत करता है। कुल मतलब है एकाध जीवों को फंसाकर निगल जाना। कभी तो यह मिल जाता है। कभी तो जाला पूरा होने के पहले ही कोई शरारती हवा आकर उसे तहस-नहस करती है। यही हम सबकी हस्ती है। पर मकड़ी इससे हिम्मत हार कर अपना काम छोड़ती नहीं। सांसारिक जीवन की स्थिति लगभग यही है।

दौड़-धूप के बीच हम याद नहीं करते कि हमें क्या मिला। सिर्फ सवा पांच सेंट जमीन के पीछे गांव वालों से लड़ने को तैयार हुए। उसके लिए सबसे बड़े बेटे की कीमत चुकानी पड़ी।

उण्णित्तान से खरीदे बयालीस सेंट खेत से सटी सवा पांच सेंट सरकारी जमीन थी। पट्टे में तो जरूर नहीं लिखा है। फिर भी मुद्दत से वह सर्वे नंबर तीन सौ चौरानवें सैंतालीस का अंग है। इसके साथ उत्तर में चार स्तरों पर फैला बासठ-सेंट नाणुनायर का था। बंटवारे में यह जमीन नाणुनायर की बेटी को मिली। शिवरामकुरुप की स्त्री की दीदी। उस औरत का पति शेखरननायर जोतने आया तो खेत नपाया। दस्तावेज में बासठ सेंट लिखा था पर नापने पर सिर्फ सत्तावन रहा। बचा पांच सेंट कुयेनामाप्पिला ने हड़प लिया। जुताई शुरू हुई तो बहस भी शुरू हुई। भीड़ जमा हो गयी। चारों तरफ के खेत नायर लोगों के थे। सात हिस्से नाणुनायर के बच्चों के थे। उसी के पक्ष में ज्यादा लोग बोलते थे। सर्वेक्षक के नापने पर जो जमीन अधिक रहेगी। वह उनको देनी पड़ेगी। सो कैसे? झगड़े से बचने के लिए अपने ही खर्च पर एक सर्वेक्षक को ले आया और नपवाया। शेखरन नायर के खेत पूरे बासट सेंट निकले। मगर वह बड़ा हठी ठहरा। माने, तभी न! चारा क्या? उन लोगों की संख्या अधिक थी। एक दिन बड़े सबेरे उण्णित्तानजी के पास गया। किसी जमाने में पूरे तालुके की जमीन इनके परिवार की थी। बड़े प्रतापी। अंगोछा कमर पर बांध-कर हथेली से मुंह कुछ ढके मैं विनय से खड़ा रहा।

"क्या है रे; कुयेना?"

बात का निवेदन किया—"हुजूर ने मेहरबानी से बंदे को वह जमीन दी थी। उसी जमीन पर मेहनत करके बच्चों को रूखा-सूखा खिलाता हूं।"

बुजुर्ग गंभीर प्रकृति के थे। सिर्फ दो या तीन शब्द कहते।

"हां, तुम जाओ।"

बुजुर्ग ने शेखरननायर को समझाया। पर वह माने, तभी न !

बहस, झगड़ा सब चला। किसी न किसी तरह उस साल खेत जोता। अगले जून की खेती के लिए जब खेत जोतने चले तब मेंड़ बदली थी। सबसे बड़ा लड़का और कीवरीत भी साथ थे। कीवरीत ने मजदूर के हाथ से कुदाली लेकर खेत की मेंड़ पहले की तरह कर दी। शेखरन नायर उस वक्त वहां नहीं था। खबर सुनकर वह आ गया। सात-आठ-दस लोग भी थे। इस बीच हमारे मजदूर कुंयुचेरुक्कन और कोच्चपाप्पि को ले आये।

फिलिप्योस वहां नहीं था। मात्तुकुट्टि लड़का था······मन में खतरे का अंदाज लगा लिया। कोई चारा भी नहीं था। आते ही शेखरननायर ने कहा—

"खेत से निकल जा—हराम के बच्चे !"

"सो तेरा बाप जब खेत में उतरे तब बोल······के बच्चे !"

कीवरीत ने ही कहा। कोई जब उसके बाप को गाली दे तब चुप कैसे रहे !

शेखरननायर तगड़ा था। अखाड़े में अभ्यास करता था। उसने आगे बढ़कर कीवरीत के पूरे गाल पर जोर का तमाचा दे मारा। यही शुरूआत थी। सबसे बड़ा बेटा फिर भी बीच-बचाव की ही कोशिश कर रहा था। शेखरननायर के साथी वासुकुरुप ने जब दुबारा हमला किया तब उसका भी भाव बदला। उसने एक ही लात से वासुकुरुप को जमीन पर पटक दिया। अपनी कमर से छुरा लेकर दांतों से खोला, बीस-तीस आदमी खेत पर टूट पड़े थे न ! बस इतनी ही बातें याद हैं कि वे तीस लोग थे। हम पांच ही जने। शोरगुल सुनकर पाप्पच्चन और उसका एक साला आये। उनके हाथ में कुदाली का बैट था। ऐसे हर एक के हाथ में एक न एक औजार ! मार डालने की ही धुन थी। पागलपन ही मानिए। कहते हैं, गर्जन और चीख-चिल्लाहट गांव की सरहद तक सुनाई पड़ी थी। बड़ी भारी भीड़ जमा हो गयी। खेत में खून का सोता जमा था। थोड़ी देर बाद बुजुर्ग उण्णित्तान जी भी खेत में चले आये, बोले—

"बंद करो बदमाशो ! हर एक को जेल में बंद करा दूंगा।"

सब दब गए। पता नहीं, कौन मर गया, कौन जिंदा रहा। बेटों की बहुएं छाती पीटतीं जोर से रोती रहीं ? हाथ में खुला छुरा लिये कुयोमा बेहोश पड़ा था। प्रतियोगी जब छुरा भोंकने चला तब उसे रोकने से कीवरीत के हाथ का अंगूठा कट गया। चार-पांच आदमियों के पेट में, छाती में, बराबर छुरे के घाव

लगे हैं। पूरा कुरुक्षेत्र ! कुंयोमा की हालत देखकर रहा नहीं गया।

"तुम्हें क्या उन लोगों ने मार डाला ?······"

"बाबूजी।"

कुंयेनाच्चन फूट-फूटकर रो रहे थे। दीनाम्मा ने जोर से पुकारा।

"बाबूजी।"

"एं"

"रो क्यों रहे हैं !"

"क्या रोया था ?"

"हां, पूछ रहे थे कि बेटे क्या तुम्हें मार डाला !"

"क्या मुन्नी गयी ?"

"कभी की जा चुकी है······कल भी मैंने कहा था कि तरह-तरह की बातें सोचते दिमाग खराब मत कीजिए।"

"हूं।"

"कुरुप आये थे।"

"कहां है ?"

"थोड़ी देर यहां बैठे रहे। पिताजी सो रहे थे तो कहा कि 'जगाना नहीं।' अफीम दी है।"

"हां, कल के लिए नहीं थी।"

"कह रहे थे, "कुयुचेरुक्कन" भैया ने जो कहा उसे सुनने के बाद यहां नहीं आना चाहिए था। फिर भी पिताजी का ख्याल करके आ रहे हैं।"

"हूं, वह शरीफ आदमी है।"

"पिताजी से मिलने के लिए और एक व्यक्ति आया है, बाहर खड़ा है।"

"कौन ?"

"राहेलम्मा।"

"एं ?"

"कीवरीत भैया की बेटी।"

"बुला लो।"

राहेलम्मा आयी। उसने दुपट्टे से सिर ढक लिया था। ध्यान से देखा। पारो छूट जाने के बाद उसे नहीं देखा।

"पास आ।"

नहीं, चेहरे के फफोले कम नहीं हुए हैं। उलटे बढ़ हैं।

"बेटी !"

"क्या ?"

"क्या दादा से मिलने आयी ?"

"हूं।"

"तेरी सबसे छोटी बहिन कुछ दिन पहले आयी थी। मैंने तुम्हारी बात पूछी थी।"

"उसने मुझे कुछ नहीं बतलाया।"

"बताया नहीं ?"

"मुझसे कोई कुछ पूछता या कहता नहीं।"

"एं !"

"वहां मेरा रहना तक सबको भारी लगता है। बहुत झंझट है। मर कैसे जाऊं ?"

"हूं।"

"हुक्म है कि छोटी बहनों के पति या उनके नाते-रिश्ते के लोग आवें तो मुझे बाहर नहीं निकलना चाहिए।"

राहेलम्मा ने दुपट्टे के कोर से आंखें पोंछ लीं। दीनाम्मा बोली—

"रोना नहीं राहेलम्मा। दुनिया ही ऐसी है। मां-बाप, भाई-बहनें सबकी यही दशा है।"

"प्रभु बुलाते नहीं। इस धरती का बोझ बनाकर यहीं रख छोड़ा है।"

"तुम्हारे ससुराल वाले कभी आये !"

राहेलम्मा ने कोई जवाब नहीं दिया। क्या कहे। दादाजी को अच्छी तरह मालूम है कि आना-जाना बंद है। तभी पूछ रहे हैं।

थोड़ी देर तक कुयेनाच्चन और दीनाम्मा नहीं बोले।

राहेलम्मा ने कहा—

"किसी को भी कष्ट पहुंचाये बिना एक दिन पहले ही चला जाना चाहती हूं।"

"सो परमात्मा की इच्छा के बिना कैसे संभव हो ?"

"मैंने एक बात सोच रखी है।"

"सो क्या ?"

"उनकी तकलीफ हमेशा के लिए खतम कर दूंगी।"

"बको मत राहेलम्मा।"

"क्या-क्या ?"

"कुछ नहीं दादाजी—"

मन के आवेग को रोक न सकी। राहेलम्मा फूट-फूटकर रो पड़ी।

"रोओ मत बेटी। यहोवा तुम्हारे कष्ट दूर करेंगे। यहोवा के लिए कुछ भी असंभव नहीं है।"

राहेलम्मा और थोड़ी देर तक दादा के मुंह की ओर ताकती रही। फिर से आंखें पोंछ लीं······

"मैं जा रही हूं, दादाजी"

"जाओ"

फिर भी अनमना सी वह थोड़ी देर और खड़ी रही।

दीनाम्मा ने कहा—

"दोपहर हो गयी। अब खाना खाके जाओ न !"

"नहीं चाची"

'चाची' कहने पर भी राहेलम्मा दीनाम्मा से उम्र में बड़ी है। फिर भी नाता चाची का लगता है।

कुयेनाच्चन ने सोचा—लड़की पर कैसी आफत आ पड़ी है। वह बरदाश्त नहीं कर पाती। पति के और माता के अपशब्द ! छोटी बहनों के बुरे शब्द। उसने आखिर बिगाड़ा क्या ? परमेश्वर ने उसे एक महारोग दिया। रोगों में सबसे विकट। परमेश्वर ने क्यों उसे यह कष्ट दिया ? शायद उसकी जांच के लिये। निश्छल, सत्यवादी, ईश्वरभक्त और निर्दोष अय्यूब की भी परीक्षा ली थी। प्रभु की गति कौन जाने ! परिवार में और किसी को यह बीमारी नहीं लगी। कहते हैं कि मां की पीढ़ी से मिली होगी। दस बारह वर्ष की उम्र में बायें हाथ पर कुछ दाग सा दीखा। काढ़ा-गोली बहुत ली। पांच बेटियों में सबसे बड़ी। छोटी बहनों को पालने-दुलारने में होशियार। सयानी होने पर वही चौका-चूल्हा संभालती थी। इस बीच दवादारू की फुरसत नहीं रही। सत्रहवें साल में उसके मामा एक प्रस्ताव लाये। लड़का बैंक का मुनीम था। देखा। पसंद आया। राहेलम्मा के

पिता ने कहा—

"शादी कर दें तो शायद हालत सुधर जाय ! पिताजी"

"हां कर देनी चाहिये।"

"शादी करने के लिये मेरे पास कुछ जमा है ?"

सोचा कि सही बात है उसके पास कुछ नहीं है। पांच लड़कियों को विदा करना है। उसके बाद कैसे गुजरा हो ? उन दिनों कुयेनाच्चन के पास खेती व व्यापार से कुछ पैसे बचे थे।

"चार आदमियों को ले जाकर मंगनी करा लो।"

गया। मंगनी हुई। शादी भी। शादी के बाद दूसरे हफ्ते में ससुरालवालों ने लड़की को घर वापस भेजा। बाद में कोई बुलाने नहीं आया। पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि ससुरालवालों ने लड़की के हाथ का दाग देख लिया। उनकी शिकायत थी कि लड़की के घरवालों ने बात छिपाकर धोखा दिया। बात सही थी। फिर भी ब्याही लड़की ससुराल की संपत्ति है चाहे तो ठुकरा दें। धुंधुआते कुंदे की तरह लातमार सहती वहीं घर पर रह सकती है। इसलिये वह अब भी वहीं पर है। इस बीच में पूरे शरीर में बीमारी फैल गयी। लोगों ने इस शर्त पर घर में रखा है कि वह अपने कमरे से बाहर कदम न रखे।

इस हुक्म में क्या गलती रही ? पुराने जमाने में भी यह घृणित रोग था यहोवा ने सिनाई पर्वत पर मूसा से कहा था—किसी आदमी की खाल पर घट्ठा या फुंसी, सफेद दाग या कोढ़ के ऐसे निशान देखो तो उसे पुरोहित अहरोन या उसके एक पुत्र के पास ले जाओ। पुरोहित खाल के दाग की परीक्षा करे। दाग के भीतर का रोम सफेद हो और दाग खाल से गहरा हो तो पुरोहित उसे देखकर घोषित करे कि यह आदमी अशुद्ध है।

"बेटी !"

"क्या ?"

दीनाम्मा आयी।

"थोड़ी सी कंजि दो !"

उठ बैठे सिरहाने से एक गोली निकालकर खाली। कंजि लेकर पी। फिर से लेटे। इसी वक्त द्वार पर बातचीत सुनाई दी।

"फादर लोना भैया के पक्ष में हैं।"

"वही न्याय है।"

कुयेनाच्चन ने पूछा—

"एक तो मात्तुक्कुट्टि है। दूसरा कौन है बेटी ?"

दीनाम्मा ने आंगन में उतरकर देखने के बाद कहा—

"कार्तिकप्पलि के फादर हैं।"

"अच्छा !"

"यह फादर का मत है। जो हो, जो मर्द बेटे पोतोंवाली अधेड़ औरत को मारता है, वह क्या इज्जत रखता है ?"

"मारने का समर्थन मैं नहीं करता। मगर चाची की जीभ खराब है। मात्तु-क्कुट्टि, तुम यहां इतनी दूर से ही बातें सुनते हो। मैं तो पड़ोस में रहते हुए अपनी आंखों देखता और कानों सुनता हूं।

"फादर ने कभी क्या सोचा है कि चाची का व्यवहार क्यों ऐसा हो गया ?"

"सो भी मैं जानता हूं।"

"जब से चाची ने उस घर पर कदम रखा तब से कभी उसे चैन नहीं मिला। पति दुश्चरित्र हैं। नौकरी में जहां-कहां तबदीली होती है वहां एक और रिश्ता। चाची पहले रूठी रही। झगड़ा किया। पर सब बेकार निकलने पर वह दिल से उनसे अलग हो गयी। फिर मिली नहीं। ईसाई का ब्याह खूंटे से बांधने के बराबर है न ? इसलिये वह भी उसी बंधन में पड़ी रहती है इस कथन का मतलब क्या यह है कि परमात्मा ने दोनों को जोड़ा है और मौत तक पति की सेवा करती रहना पत्नी का धर्म है।"

कुयेनाच्चन ने पूछा—

"किसकी बात ?"

"दीनाम्मा की बड़ी बहन की बात कर कह रहे हैं मामाजी"

"हां, मरियाम्मा की बात है। इसमें गलती दोनों की है। बढ़ई भी कच्चा, लकड़ी भी टेढ़ी।"

दीनाम्मा ने पूछा—

"क्या मेरी ही दीदी है ? फादर की भी दीदी नहीं ?

फादर जोर से हंसे। "हां, तुम सब एक ही मां की संतान छोटी बड़ी बहने हो। मैं देर से आया छोटा भाई हूं न ?"

"मान लिया।"

"जब मैं तुम लोगों के घर आया तब दीनाम्मा चार बरस की थी न ?"

"हां।"

फादर ने चार बरस की उस बच्ची की तस्वीर मन में देख ली। तितली की तरह चारों तरफ खेलती घूमती। उन दिनों फादर डीकन (उपयाजक) ही थे। बच्ची कहानी सुनने के लिये जीजा के साथ सोया करती थी। इसका हठ करती। उस छोटी उम्र में ही वह कमल कली सी सुंदर थी। पंद्रह-सोलह की हो जाने पर अत्यंत रूपवती निकली। फिर भी विधुर से ही ब्याही गयी। किस्मत में यही बदा था। दो बेटियों के ब्याह और बीमारी ने उसके पिता की बड़ी दुर्दशा कर दी। घर और अहाते को छोड़ शेष सारी संपत्ति कर्ज के कारण बरबाद हो गयी। क्वारी बेटी खूबसूरत होने पर भी बोझ सी होती है मात्तुक्कुट्टि से दीनाम्मा के ब्याह का प्रस्ताव फादर ने ही किया था। मात्तुक्कुट्टि उनका ममेरा भाई लगता था। दुहाज होने पर भी सबको मात्तुक्कुट्टि स्वीकार था। देखने में अच्छा ! सलाह सुझाव के योग्य !

"फादर अब भी उस गिरजे में हैं न ?"

"हां मामाजी"

"धर्मदेश में अब झगड़ा फिसाद है ?"

"पहले की तरह नहीं।"

"कोप्रास्पुरा के बुजुर्ग अब भी है ?"

"उनका देहांत हो गया। उनका सबसे बड़ा बेटा ही मुखिया है। हमारे इटिच्चाण्डिजी का जमाई।"

"हां, समझ गया।"

धर्मदेश में पहले की तरह अब अमीर लोगों का कुछ नहीं चलता। समितियों में मामूली लोगों का बहुमत रहता है। उन्हीं की बात सुनी जाती है।"

"वह तो ठीक है। यहां भी वही हालत है।"

दीनाम्मा ने प्रश्न किया।

"चाची का क्या हाल है !

"दीनाम्मा पिछले महीने में देख आयी न ? वैसी ही है। रस्से के सहारे कुछ-कुछ चलती है।

"अब एक नये वैद जी आये हैं। उनका वादा है कि चलना क्या, दौड़ा सकते हैं। खुदा जाने"

"क्या ! क्या! "—

ओह, चाची की बात पूछ रही थी दादाजी।"

दीनम्मा ने फादर से कहा—

"बाबूजी आजकल ऊंचा सुनते हैं। जोर से कहना है। याद भी ठीक नहीं।"

फादर बोले—

"यही होता है। आखिरी दिनों में आंखें कम देखती हैं। कान कम सुनते हैं। ये सारे घाट पार करने ही पड़ेंगे। है न मामाजी ?"

"एं ?"

"मेरी बात ठीक है न ?"

"कौन जाने; ठीक होगी। आज कल तुम लोगों की बात ही सच है न ?"

फादर ओर हंसे से। हंसी उनका एक हथियार है। मारने के लिये आनेवाले प्रतिद्वंद्वी को भी वे हंसी से मोहित कर देते हैं। कुयेनाच्चन की बात का मतलब वे समझ गये। सभाओं का परस्पर विवाद था फादर और कुयेनाच्चन जेकोबैट विभाग के ही दो भिन्न-भिन्न शिविरों के हैं। फादर सिरियन पेट्रियार्क की तरफ हैं। कुयेनाच्चन कात्तोलिका बाबा के पक्ष में हैं। ईमान और धार्मिक विचार दोनों के लिये अभिन्न हैं तो भी प्रशासन व व्यवस्था में सभा दो शिविरों में बंट गयी।······

"हमारा कथन सच ही है। मामाजी को क्या शक है ?"

खरगोश के तीन सींगवाला सच ?

"सो क्यों ?"

"नहीं तो, जब तुर्की के सुलतान ने कहा कि दिमाग ठीक नहीं तब तुम लोगों के लिए अब्दुल मिशिहा पोट्रियार्क वे नहीं रहे।······"

"कहा नहीं। धर्मसभा ने भी फरमान वापस लिया था।"

"सो सब कुछ स्वार्थी लोगों का काम था। वैसे, सिर्फ बीमार पड़ने से—मैं क्या मात्तुक्कुट्टि का बाप न रहूंगा ?"

"दोनों बातों में फरक है मामा। यहां एक महासभा के आध्यात्मिक अध्यक्ष की बात है। सभा का इतिहास देखिए। अधिकार छुड़ाने और देने का हक धर्म-

सभा का है। उसी धर्मसभा ने ही अब्दुला पेट्रियार्क को आध्यात्मिक अध्यक्ष पद पर बिठाया। अधिकारी सभाध्यक्ष ने ही वट्टश्शेरी विषप को अधिकारों से वंचित घोषित किया।"

"हां, हक की ही बात है। कैसा हक ? हक हमने ही दिया था। और क्या ? कूननकुरिश[1] सन्य से लेकर दीजिये।"

मात्तुक्कुट्टि बीच में पड़ा—

"पिताजी कमजोरी में क्यों इतने जोर से बातें कर रहे हैं ? बहस मुकद्दमे केबाद सभा में एकता स्थापित हो चुकी। अब भी आप दोनों बहस करते हैं।"

दीनाम्मा ने दरवाजे पर आकर कहा—

"जब मिलते हैं तब पिताजी और फादर बहस शुरू करते हैं।"

फादर फिर जोर से हंसे।

"क्या हम बातें करते-करते झगड़ना चाहते हैं ? बात कह रहे थे।"

दीनाम्मा बोली—

"हाथ धोइये। थोड़ा पानी पी लें।

फादर ने हंसते हुए पूछा—

"पानी पीने के लिए भी हाथ धोया जाता है।"

सुनने पर भी अनसुनी करके दीनाम्मा शीघ्र चौके में गयी। सेर भर चावल का चूरा तैयार कर रखा था; सो कितना उपकारी हुआ। पुट्टू बनाया। दूकान से केले खरीदवाये। पुट्टू, केले और काफी मेज पर रखकर बोली—

"कोई खास चीज तो नहीं है।"

"ये सब क्या खास चीजें नहीं हैं ?"

फादर तब भी जोर से हंसे।

"कुंयुमोल बुखार के बाद क्या कालेज जाने लगी ?"

"हां, अभी दुबली है।"

"राजूमोन कैसा है ?"

"हां······हां······"

"दीनाचाची से बच्चों का बड़ा प्यार था। कुंयुमोल छुट्टी मिलने पर ही दौड़ी

[1]एक स्थान का नाम है। यहां पर दोनों धर्मसभाओं का समझौता हो गया था।

आती थी।"

"और ?"

अब उन्हें यहां आते शर्म लगती है। दीना चाची के अच्छा घर नहीं, नौकर चाकर नहीं। मेरी चाची की तबीयत खराब होने से ही यह सब······"

दीनाम्मा ने आंसू पोंछ लिये। मात्तुक्कुट्टि बोला—"आह! आंसू बहाती है ! इसके लिये अब फादर क्या करें ?

"फादर को कुछ करना नहीं है ?"

"हां, वह मेरे पास खड़ी होकर कुछ रो ले, मात्तुक्कुट्टि। औरतों को इससे कुछ तसल्ली मिलती है।"

फादर ने मुस्कुराते हुए दीनाम्मा से कहा—

"ठीक है बिटिया ! अब मैं तुमसे कुछ कहूं। तुम्हारी दोनों दीदियों की आर्थिक दशा तुमसे अच्छी है। माना। उनमें बड़ी की हालत पर अभी हम लोग कह रहे थे न ? सुनने की जरूरत ही क्या ? तुम्हें तो मालूम है ही। रुपया-पैसा होने से उन्हें क्या आराम मिला है ? चैन कैसे ? तुम्हारी सारा चाची की बात देखो। अच्छी जवानी में वह अपंग हो गयी। कमरे से बाहर निकले उन्नीस साल गुजर चुके। तो उसे दूसरी तरह का दुःख मिला। तुम्हें इन दोनों में किसी तरह का दुःख-कष्ट नहीं है। तो प्रभु ने तुम पर निठुरता नहीं की है। जैसे कि सभोपदेशक कहते हैं चतुर से चतुर आदमी भी जाल में फंसती मछली की तरह फंदे में फंसते पक्षी की तरह दुष्काल के पंजे में जकड़ जाता है। है न मामाजी !"

"हां—हां।"

"मामा के सामने मैं वेद का उद्धरण सुनाता हूं। मामाजी को संपूर्ण वेद जबानी याद है।"

"मुझे क्या याद है ? ज्ञानियों के राजा सोलमन कहते हैं कि मुझे कुछ मालूम नहीं। तब मैं······"

फादर हंसे।

"मेरे आने का और एक मतलब भी है।"

मात्तुक्कुट्टि ने पूछा—

"सो क्या ?"

"सुना कि राजन शीघ्र ही छुट्टी पर आ रहा है।"

"कब आयेगा ?"

"मालूम होता है कि अगले महीने के आरंभ में आयेगा। है न ?"

"हां, यही लिखा है। बात क्या है ?"

"एक ब्याह का प्रस्ताव है।"

दीनाम्मा ने मात्तुक्कुट्टि की तरफ देखा। कुंयेनाच्चन ने पूछा—"क्या है, क्या है ?"

इस प्रश्न की परवाह किये बिना दीनाम्मा ने कहा—"ओह ! राजन की उम्र अब तेईस बरस की है न ?"

"और क्या चाहिये ? पुराने जमाने में सोलह साल के पूरा होते-होते लड़कों की शादी होती थी— है न मामा जी ?"

सो उस जमाने की बात थी। ठीक समय पर अब भी शादी होनी चाहिये। तेईस वर्ष की उम्र अच्छी है और सत्रह साल की लड़की क्या कहते हो ?......"

"कहां ?"

"पुत्तनाट्टुकरा में"

"फादर वहां पहले पुरोहित रह चुके हैं न ?"

"हां ! हाल ही में उधर से गया तो उस लड़की को देखा। मैं जिन दिनों गांव छोड़ गया उन दिनों वह बच्ची डेढ़ या एक साल की थी। गिरिजाघर का पड़ोसी घर है। विश्वासी लोगों का परिवार है। वही तो मुख्य बात है। पिता अब ज़िंदा नहीं हैं। जब मां इसे गर्भ में धारण किये हुए थी तब इसके पिता एक दुर्घटना में मर गये। लड़की दीनाम्मा की छोटी बहन सी लगेगी।"

थोड़ी देर तक कोई कुछ नहीं बोला। अब मात्तुक्कुट्टि ने पूछा—

"फादर की बात क्या पिताजी ने सुनी ?"

"शादी की बात है न ?"

"हां"

"अच्छी जगह है तो चलें।"

"ठीक। अच्छा लगे, तभी करना। उस परिवार के कोई यहां आयेंगे। बाद में वहां जाकर तुम लोग देखना।"

"फादर जो पसंद कर चुके उसे फिर से हम क्या देखें ?"

"सो बात नहीं। यहां से कोई जाकर पूछताछ करे। कीवरीत मैया जावें या

फिलिप्योस भैया—कोई भी।" दोनाम्मा ने कहा—"किसी भी हालत में राजन को आने दीजिये। उसकी भी राय जान लेने के बाद ही सोचना है।"

"बस, यही ठीक है। मैंने बस, सुझाव दिया है। जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं है। राजन के आने के बाद में इस तरफ आऊंगा।"

फादर छाता लेकर निकले। दीनाम्मा ने पूछा—

"छाता क्यों ले लिया ?"

"चलने दो, बिटिया। बीसों काम हैं।" दीनाम्मा ने अच्चन का छाता छीन लिया, बोली—

"काम सारा का सारा बिगड़ जाय। बला से। खाना खाये बिना आप जा नहीं सकते।"

फादर छोटी बहन की (साली की) आजादी देख लाचार खड़े रहे। कुंयेनाच्चन बोले—

"बस ! उसका हौसला है न ? वक्त भी दोपहर का हो चुका है न ?"

फादर फिर से कुरसी पर बैठे।

"मामा भी अगर यही कहे, तो फिर मैं कैसे न मानूं ? अगर न मानूं तो दीनाम्मा नाराज़ होगी। पर, बात तो सुनो। खास कोई सब्जी न बनाना। सुना बिटिया।"

कुछ नहीं बनाती सहजन के पत्ते की सब्जी बनाऊंगी : बोरे फले हैं। उनकी सूखी बनेगी, बस।"

फादर फिर हंस पड़े।

"तो दीनाम्मा कुछ भी भूली नहीं सुना मामाजी, इसके लड़कपन के दिनों में जब मैं इनके घर जाता तब यही दो सब्जियां खासतौर से बनाती थीं। इनका शौक समझकर मेरे पहुंचते ही दीनाम्मा सहजपन के पत्ते तोड़ने जाती।"

कुंयेनाच्चन बोले—

"सालियों को जीजा से खास ममता होती है। मैं यह आनंद पा नहीं सका हूं।"

"सही बात है। मामा की छोटी बहनें नहीं थीं। माभी चार भाइयों की अकेली छोटी बहन थी न ?"

मात्तुक्कुट्टि बाहर किसी से बातें कर रहा था। उसने आकर फादर से कहा—
"फादर बैठिये न ? मैं अभी आया।"

"हूं कहां ?"

"एक गिरवी का मामला है। मेरा जाना बहुत जरूरी है। मेरे आने के पहले फादर न जावें।"

मात्तुक्कुट्टि बाहर चला गया। कुंयेनाच्चन ने पूछा—

"फादर की बड़ी दीदी कुंयुमरियाम्मा कुशल से हैं न ?"

"बड़ी दीदी की तबीयत ठीक नहीं। गठिया की शिकायत है।"

"हां, मेरे ब्याह के दिन धोती और चट्टा (अंगिया) पहिने कुंयुमरियाम्मा गिरिजाघर आयी थी। खूब याद है। उस जमाने में आजकल की तरह फ्राक ब्लौस वगैरह नहीं है।"

"नहीं, नहीं।"

"जमाने का फेर ही मानो। उस जमाने में दुलहिन और दूलहा की पोशाक भी कैसी थी ! दुलहिन के कानों में नोटा (एक गहना) दूलहे की निलयंकि, गले पर क्रूस की माला। अब तो बदलते-बदलते कोट-पतलून के दिन आ गये। लड़कियों के ब्लाउस के अंदर पहनने की जो बला है वह बाहर भी दीखती है। देखा है न ?"

"हां, हां।"

फादर के ठहाके से सारा घर गूंज उठा।

कुंयेनच्चन भी हंस पड़े। दीनाम्मा ने कहा—

"बाबूजी कभी-कभी ऐसे हैं। किसी के सामने बातचीत करते शिष्टता तक भूल जाते हैं।"

कुंयेनाच्चन के कानों में यह बात नहीं पड़ी।

"उस जमाने का हाल भी क्या था ? शादी का मतलब लड़के और लड़की के लिये एक मेला था। भुनना-पकाना दौड़ना-उछलना ! ······बस ! लड़के की उम्र होती थी बारह की। लड़की की अवस्था आठ साल की होती थी। क्या जानती थी ?"

"सही बात है।"

"अठारह-बीस का लड़का अगर शादी न करे तो क्वांरा कहलावे। मैं भी कुछ दिनों तक क्वांरा बना घूमा था।"

दीनाम्मा चौके से बाहर आयी और फादर से बोली—सुनने वाले मिल जाय

तो बाबूजी रामकथा सुनाते ही रहेंगे। बाद में थक जाते हैं।

कुंयेनाच्चन ने पूछा—

"क्या है ?"

"कुछ नहीं।"

"मामा ज्यादा बातचीत करेंगे तो थक जाएंगे।"

"बताने पर सुनें, तभी न ?"

ओह ! कैसी थकावट है। यह तो आयु की थकावट है। सो तो चुप रहने पर भी महसूस होती है। ब्याह की चर्चा हुई। इसलिए याद आयी। जब अक्काम्मा की शादी की तब मेरी उम्र उन्नीस साल की थी। उस जमाने के हिसाब से हमारी शादी बड़ी देर से चली थी। उचित समय पर ब्याह करा देने वाला कोई नहीं रहा था। पिताजी को ऐसी कोई बात नहीं सूझती थी। फिर करे कौन ? फुटकल सौदा करते-करते जेब में दो चार रुपये जमा हो गये। इस पर दूर के एक चाचाजी एक प्रस्ताव लाये। लड़की की उम्र चौदह वर्ष की। हृष्टपुष्ट तो नहीं थी। मगर चार-पांच महीने के बीतने पर एकदम बदल गयी। चौथे दर्जे तक स्कूली शिक्षा पायी थी। फादर के पिता छोटे बच्चों के शिक्षक थे। उन्होंने बहन को घर पर अच्छी तरह सिखाकर होशियार बना दिया था। गाना मीठा गाती थी। विदाई के वक्त बड़े साले ने कहा था—भलाई का बीज है लेबनान की अंगूर की बेल की तरह फलती-फूलती रहेगी।

वही हुआ। उसने जिसे छुआ वह दस गुना सौ गुना फला-फूला। वह चतुर थी। सब सहन करती थी। फिर भी आखिरी दिनों में ऐसी घटना हो गयी कि वह बर्दाशत नहीं कर सकी।

ईशो भैया के साथ साझे की दूकानदारी चल रही थी। उस दिन रात को थोड़ी देर से घर आया। हाथ में जलती मशाल थी। बड़े गुस्से में भी था क्योंकि ईशो भैया ने सौ-दो-सौ रुपये का छल किया था। उससे कुछ झड़प हो गयी थी। अक्काम्मा नियमानुसार दालान में ढिबरी रखे मेरे इंतजार में बैठी थी। पर बोली नहीं। थोड़ी देर बाद उसने पूछा—

"इतनी देर कैसे ?"

"ईसो भैया से झड़प हो गयी।"

"क्यों ?"

"साझेदारी में उन्होंने छल किया।"

थोड़ी देर तक मौन। फिर बोली—

"कहनेवाले भी तो धोखेबाज हैं।"

"एं ?"

"हम दोनों ने वायदा किया है न कि ईमानदार रहेंगे ?"

उसके चेहरे की तरफ ध्यान से देखा। इसका मतलब क्या हो सकता था ?

"हमने भी वचन तोड़ा। सो भी इस बुढ़ापे में।"

"तू क्या कह रही है ?"

"मैंने जान लिया कि एक नयी 'बहन' मिली है।"

"..............."

"बारंबार हाट जाने का मर्म अभी तो मालूम हुआ।"

"धत तेरी ! ······की बच्ची !"

एक लात। गिरकर अचेत हो गयी। डर गया। उसीके बाद······"

"मामाजी !"

फादर ने आवाज दी। हिलते नहीं।

"मामाजी सो गये ?"

दीनाम्मा ने कहा—

"बातचीत करते-करते आंखें झपक जाती हैं। जगाने पर बक-झक की तरह कुछ बे-सिर-पैर की बातें कहते हैं।"

"हां, नब्बे बरस के हो चुके हैं न ? दिमाग पर काबू नहीं रहता।"

"औरकोई नहीं मिले तो सिसिली मुन्नी को बुलाकर उससे बातें करते रहेंगे।"

"बच्चे और बूढ़े बराबर होते है न ? उनका जी दुखाना नहीं चाहिए।"

"बाबूजी की इस हालत के कारण गिरिजाघर भी जा नहीं पा रही हूं।"

"यह सेवा सबसे बड़े पुण्य की है बिटिया ! मसीहा ने कहा है न ? मुझे भूख थी ? तुमने मुझे भोजन नहीं दिया। प्यास लगी थी। तुमने पानी नहीं पिलाया। मेरे बदन पर कपड़े नहीं थे। तुमने मुझे कपड़े नहीं पहनाये। मैं बीमार था, तो तुम मुझे देखने नहीं आये। मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि छोटे से छोटे आदमी तुम जो कुछ करते हो वह मेरे लिए करते हो······"

इस समय आंगन में पैरों की आहट सुनाई दी। साथ ही नलकथा का छंद थी।

शिवरामकुरुप ने सीढ़ियों पर चढ़ते समय ही फादर को देखा। ध्यान से देखा। कुरुप का तुलसीदल, चंदन का तिलक वगैरह फादर ने भी ध्यान से देखा।

"कुंयेनामाप्पिला सो रहे हैं ?"

"हां, आइए !"

कुरुप आकर तिपाई पर बैठ गया। फादर ने कहा—"आपका परिचय ?"

दीनाम्मा ने कहा—

"बाबूजी के दोस्त हैं।"

कुरुप ने वाक्य पूरा किया—

"नाम शिवरामकुरुप।"

"अच्छा।"

दीनाम्मा ने फादर का परिचय दिया—

"कार्तिकप्पल्लि के फादर······"

"ओह समझ गया। समझ गया। सिसिली मुन्नी ने कहा है। कभी-कभी कुंये-नामाप्पिला से मिलने आया करता हूं। उनका वेदज्ञान गहरा है। ज्ञान का अपार सागर ही समझिए। मैं भी आध्यात्मिक बातों में दिलचस्पी रखता हूं। बारीकी से सोचने पर सब कुछ एक ही है। ईसामन का वेद कहता है कि अधर्मग्रस्त मानव-राशि का उद्धार करने को ईश्वर ने अपने प्रियपुत्र को पृथ्वी पर भेजा। हिंदुओं के पुराण भी यही कहते हैं।

"······गीताश्लोक सुना होगा। 'धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।' सोचने पर सब एक से हैं।"

"एक नहीं।"

"सब एक नहीं।" ईसा को छोड़कर ईसा के दिखाये पथ को छोड़कर और किसी पथ से चलने पर मुक्ति नहीं है।"

"मुक्ति का मानी ?"

"मुक्ति ही।"

"मुक्ति की प्राप्ति कर्म पर निर्भर है। भगवान श्रीकृष्ण ने ईश्वर के साक्षात्कार के लिए ज्ञानयोग और कर्मयोग का उपदेश दिया है।"

लोकेऽस्मिन्······योगिताम्।"

"हम लोग इन बातों पर विश्वास नहीं कर सकते।"

"तो क्या अच्छे से अच्छा काम करने पर भी ईसाई न होने पर मुक्ति नहीं होती ?"

"नहीं, जो परमपिता ईश्वर के और पवित्र आत्मा के नाम पर स्नान स्वीकार नहीं करता और पुत्र के श्री शरीर और रक्त का भोग कर पापमोचन नहीं कर लेता वह बचता नहीं।"

"फादर यह कहें कि आप लोगों का विश्वास यही है।"

"हां, सब विश्वास की बात है न ?"

"मगर हम लोगों का मत भिन्न है। हमारे मत में जो कोई संसार में पैदा होते हैं उन सबको मुक्ति मिल सकती है। धर्म कोई भी हो। हमारा धर्म ऐसे विशाल भवन की तरह है जिसके सभी वातायन खुले हैं। जो चाहे, आकर विश्राम करे। प्यास, भूख व थकान मिटा ले। काम, क्रोध, आदि से मन को छुड़ाकर आत्मतत्व ग्रहण कर लेने पर मुक्ति अवश्य प्राप्त होगी।"

"कामक्रोधवियुक्तानां······विदितात्मनाम्।"

फादर के चेहरे पर उपहास का रंग छा गया। एक संस्कृत छंद के उद्धरण से ईसामत को परास्त करने चला है।

ये सब लोगों को धोखा देने के उपाय हैं। कुरुपजी ? मुक्तिदाता ईसा का सा बलिदान क्या आपके धर्म के किसी व्यक्ति ने किया है ? मसीहा का सा चमत्कार किसी ने किया ?"

"कैसा चमत्कार ?"

"चमत्कार ? ईसा प्रभु का जन्म ही अद्भुत है न ! कन्या से जन्म !"

"किसने कहा ?"

"ऐं ! किसने कहा ?"

"हां तो, यह आप लोगों का विश्वास है न ? आप अपने विश्वास पर दृढ़ और अटल रह सकते हैं। इसी प्रकार उसे अस्वीकार करने और दूसरी बात का विश्वास करने का हक हमें भी है।"

"हां, हां विश्वास कर लें।"

अपने बचावके लिए तो यों कहा, पर असल में फादर के पास जवाब नहीं रहा था। कुरुपजी के प्रति श्रद्धा अनुभव हुई।

दीनाम्मा बोली—

"कुरुपजी से बहस करते रहें तो भूखा रहना पड़े। हाथ धुला लीजिए न ?"

फादर हंस पड़े।

"सही बात है। बहस करते रहने पर समय का बीतना पहचानते नहीं।"

"थकावट कितनी ही क्यों न हो, कुरुप जी के आने पर पिताजी ताजे हो जाते हैं।"

"मामाजी भी शास्त्रार्थ करते हैं।"

"ज्ञानसागर हैं न ! तो ठीक ! मैं चलूं ! फादर का भोजन नष्ट न करूंगा।"

फादर ने कहा—

"यह खूब रही। कुरुप जी भी भोजन करें।"

दीनाम्मा ने कहा—"दोनों के हाथ धुलाने की बात ही मैंने कही।"

"एतराज तो नहीं। पर अब नहीं चाहिये। कुंयेनःमाप्पिला तो सो रहे हैं। फिर कभी आऊंगा।"

कुरुप के जाने पर फादर बोले—"समझदार आदमी है !"

"पिताजी के लिये कुरुप जी जान से प्यारे हैं। ये ही पिताजी को अफीम ला देते हैं।"

"अच्छा !"

"कुंयुचेरक्कन जी की इनसे बड़ी दुश्मनी है। किसी बात पर दोनों में झगड़ा हो गया था। इसलिये यहां कुरुप का आना भी भैया को पसंद नहीं।"

"वह किससे झगड़ा नहीं करता ?"

भोजन के बाद फादर ने कुंयेनाच्चन की खटिया के पास जाकर आवाज दी। चार-पांच बार आवाज दी। तभी जागे।

"मैं चलूं मामाजी !"

"चलते हैं !"

"जाऊं।"

"स्वर्गदूत गब्रियेल मेरे साथ थे"

"क्या ?"

"कहा कि मेरे पंख पर बैठ जाओ।" मैंने कहा—"नहीं, बंदा पैदल चलेगा।"

दीनाम्मा ने धीरे कहा—

"कोई सपना देखा था ?"

"हम प्रार्थना करें मामाजी !"

"उठ बैठूं ?"

"नहीं मामाजी लेटे रहें।"

दीनाम्मा दुपट्टे से सिर ओढ़े प्रार्थना करने को तैयार हुई। फादर ने एक गीत की चार पंक्तियां सुनायीं।

'मेरी दौलत' कहने को कुछ नहीं है। ईशो मात्र ही मेरी संपत्ति है।

कुंयेनाच्चन के लिये विशेष प्रार्थना भी की।

दीनाम्मा फादर को बिदा करने के लिये फाटक तक गयी। लौटकर कुंये-नाच्चन से कहा—

"बाबूजी—कैसी गहरी नींद सो गये ? कुरुप जी भी यहां आकर चले गये।"

"बुलाया क्यों नही ?"

"बुलाने पर जगें, तभी न ? बेवक्त दवा खाने से ही ऐसी लंबी नींद सोते हैं।"

"अब उसके बिना कोई चारा नहीं है; बिटिया।"

"बुरी आदत सीखने से ही न !"

"क्या किया जाए ?"

"उठकर हाथ धुला लीजिये। कंजि लाऊंगी।"

"अच्चन को भोजन कराया न ?"

"हां।"

"नारियल की भरी और सेम की सूखी सब्जी और नींबू का अचार कंजि के साथ मिले तो तरावट लगी। दुःख हुआ कि लंबे अरसे के बाद फादर के आने पर सोया रहा। फादर का लाया प्रस्ताव नहीं ठुकरायेंगे। यह कहना बेवकूफी है कि लड़का अभी छोटा है। अच्छी उम्र है। हृष्ट-पुष्ट भी है खूबसूरत लड़की ! चलने दो······"

"बाबूजी !"

"क्या ?"

सोचा, दीनाम्मा है। मुंह उस ओर मोड़कर देखा तो—

"कौन ?"

"मैं हूं बाबूजी, अन्नाम्मा !"

फिलिप्पोस की स्त्री।

"बाबूजी, हमारे यहां चलिये।"

"चल नहीं पाऊंगा !"

"बहुत जरूरी बात है। मोटर लाऊंगी। आप न आवें तो खून हो जायेगा।"

जीजी की घबराहट देख दीनाम्मा दौड़ी आयी, पूछा—

"बात क्या है चाची ?"

"बात ? मामला यह कि हमारे पड़ोस की नौकरानी अब तुम्हारे जेठ की रानी है। इसलिये इसका फैसला होना चाहिये कि घर पर वह रहेगी या मैं।"

"धीरे बोलिये चाचीजी !"

"वाह ! मानो किसी को नहीं मालूम ! बेटा बाप पर छुरा मारने चला। बस, नौबत यहां तक आ चुकी।"

"हाय मेरे रक्षक !"

कुयेनाच्चन ने पूछा—"तुम जो कहती हो शक के आधार पर कहती हो न ? कहीं लड़के से बेकार झगड़ा करा दिया तो नहीं ?"

"आंखों देखी बात पर शक भी होता हे ?"

"हुं ? देखा,सुना······"

पिताजी आकर देख लें, मैं प्रमाण दूंगी।"

दीनाम्मा असमंजस में पड़ी, थोड़ी देर बाद कुयेनाच्चन ने पूछा—

"मेरे आने से क्या हो सकता है ? क्या वह बाप के हुक्म को बजानेवाला छोटा बच्चा है ? पूरे देश का राजा ! गृहस्थ ! धनी ! बेटा भी अपने बराबर हो गया तो बराबर का ही व्यवहार करना चाहिये। नब्बे बरस का कमजोर बाप कुछ कहे, तो उसकी क्या कीमत होगी ?"

"तो कहिये कि मैं क्या करूं ? किससे कहूं ? मेरे मां-बाप, भाई कोई नहीं। बरना, उन्हें बुला लाती।"

अन्नाम्मा रोने लगी। गली से जाती औरतों को अपनी तरफ गौर करते देख दीनाम्मा जेठानी का हाथ अपने हाथ में लिये बोली-—

"आइये, चाची ! भीतर चलकर बातें करें।"

वे भीतर गयीं। कुयेनाच्चन ने सोचा। अन्ना बेटी ने जो कहा सो बात सही थी। इस तरह की कुछ बातें पहले भी सुनी थीं। कोझंचेरी पर सड़क की मरम्मत

का ठेका जब चल रहा था तब एक विधवा अध्यापिका से घनिष्ठता की बात सुनी थी। शक-शुबह की बात नहीं। दुःख जब बहुत बढ़ा तब अन्ना दौड़ी आयी। ऐसी घड़ियों में कोई कहां से सोचे कि किसके पास दौड़े जावें ?"

मान लें कि उसकी बात सुनकर उसके घर जाते हैं। वह आराम कुर्सी पर लेटा होगा। आंगन में जाकर पुकारना होगा—इधर आओ।"

उठकर आयेगा।

"क्या पिताजी ?"

"अन्ना बिटिया क्या कह रही है ?"

"उसकी गलत बातें सुनकर पिताजी क्या मुझसे जिरह करने आये है ?"

"अरे वह······"

कुछ मत कहिये। बुढ़ापे में तो रूखा-सूखा खाकर कहीं चुपचाप रहें—बस ! —"

आवाज सुनकर उसका बड़ा बेटा बाहर आयगा।

"वह औरत आगे इस फाटक के भीतर कदम रखे तो धड़ से सिर अलग हो जायेगा।"

"जा रे ! जा"

"उसे भगा सकते हो ! मुझे भगा ! आ ! बेटा, पोता तक हो गया !"

"······अन्ना बेटी !"

इतना सुनने के बाद समझौता करना है न ?

"अन्ना बेटी, भीतर जाओ !"

न जावे ! वह भी खड़ी रहे। पिता ने ही सारा झगड़ा करवाया है। सबकी शराफत मशहूर है। कुछ कहने की जरूरत नहीं। मेरी मां को अंगारे खिलखिलाकर मारा ! समझाने आये हैं।

"क्या जवाब दूं ? सिर झुकाये चुपचाप लौटना पड़ेगा। लेने का देना पड़ेगा। इसकी क्या जरूरत ?"

अक्काम्मा ने भी एक बार कहा था—

"आगे दोनों में एक ही रहेगी। पक्की बात है जवानी में दासी के तरह आज्ञाकारिणी होकर तुम्हारे चैन आराम का ध्यान रखती थी। दिल से भी कोई पाप नहीं किया है। अब मुझसे बरदाश्त नहीं होता।······"

वास्तव में उससे कितना रूखा बर्ताव करता था। जिंदगी की पतवार उसके हाथ में थी। विवेकी और चतुर! जनम से वह बड़ी नेक थी! नेक होकर रहती थी और अब नेक होकर मर गयी। जैसा कि दाऊद ने कहा—अब स्मरण करने से क्या लाभ? क्या उसे लौटा सकूंगा? खुद उसके पास जा तो सकता हूं। पर वह वापस नहीं आ सकती।

अंदर अन्नाम्मा और दीनाम्मा बातें कर रही थीं।

अन्नाम्मा ने कहा—"तो दीनाम्मा, इसके साजसिंगार और नाज-नखरे कुछ दिनों से देखती आ रही थी। हम लोगों को कभी ऐसा संदेह काहे का हो! जब से मेरे हाथ-पांव दुखने लगे तब से बड़े सवेरे वे खाट से उठ नहीं पती थी। धूप चढ़ने के पहले उठूं तो पांव जमते नहीं। तो, बड़े सवेरे यही काफी बनाती और पिलाती। हमारे आदमी की सवेरे पांच बजे जागते ही काफी पीने की आदत है। एक रोज वह काफी ले गयी और देर तक लौटी नहीं। खाट से उठना मेरे लिए मुश्किल था। फिर भी जगी तो थी। हां, कुछ टकराहट सी सुनाई दे रही थी······

"हूं।"

जब यह वापस आयी तब इसकी शक्ल-सूरत कुछ बदली थी। उस दिन से मेरे मन में संदेह था—। नियमानुसार आज भी उनके कमरे में यह गयी। थोड़ी देर बाद मैं घसीटकर चली। मेरी प्यारी दीनाम्मा, बंद दरवाजा जब खोला तब मैंने क्या देखा······।"

"हे परमात्मा!"

"शेष बातें मैं बता नहीं पाती! शोरगुल सुनकर बेटा जोणिकुट्टी उठकर आ गया। बाप और बेटा एक दूसरे के आमने-सामने खड़े थे।"

"अन्ना बेटी!"

"क्या?"

"तुम जाओ, इसका उपाय हम करेंगे।"

"क्या पिताजी आएंगे। गाड़ी भेजूं?"

"कीवरीत से कहलाऊंगा"

"कीवरीत भैया की बात वे नहीं मानेंगे।"

"न माने, तो मैं खुद आऊंगा। तुम जाओ।"

दीनाम्मा ने भी कहा—"किसी बात पर चाची दुःखी न हों। सबका रास्ता

निकलेगा।"

कुयेनाच्चन ने कहा—"धरती की तरह क्षमाशील होना चाहिए। अविवेकी कहलाना नहीं चाहिए। शलमोन ने क्या कहा? बेटी, अपनी पूरी कमाई से विवेक प्राप्त कर। उसे बढ़ा दे। वह तुझे उन्नति पर पहुंचायगा। उसका आलिंगन कर, तो वह तेरी भलाई करायगा। वह तेरे सिर पर शोभायमान आभूषण बांधेगा।"

अन्नाम्मा गयी। तो भी उसकी बनायी बातें आंखों के सामने ही मंडराती रहीं। सिर्फ धन बटोरने से क्या होता है? मूरख को ओखल में डालकर मूसल से चिउड़े की तरह ताबड़-तोड़ कूटने पर भी उसकी मूर्खता दूर नहीं होती।

मात्तुक्कुट्टि के लौट आते रात काफी बीत गयी थी। उसके आने का पता तो लगा। खाना खिलाने के बाद दीनाम्मा उसे समाचार भी सुना रही थी। बड़े सवेरे दीनाम्मा ने आकर जगाया—

"बाबूजी······"

"हूं!"

"राहेलम्मा मर गयी।"

"किसने कहा?"

"अभी आदमी आया।"

"हां, कल ही मैं······वह बात सोची।"

"मसीह! प्रभु! प्राणपखेरू के उड़ने के पहले क्या-क्या देखना-सुनना पड़ेगा!"

"हां, क्या-क्या?"

"बाबूजी आ रहे हैं?"

"नहीं, तुम लोग जाओ।"

"गाड़ी भिजवाऊं?"

"नहीं बेटी, तुम जा सकती हो।"

न जाने पर भी सारा दृश्य यहीं से देखा और सुना जा सकता था। बंधन से वह मुक्त हो गयी है। स्थायी विमुक्ति! यहोवा के नाम की जय हो! तू अनादि और सनातन प्रभु है। आदमी को धूल में मिला देता है। आदेश देना है—"मनुष्य पुत्रो, वापस आओ।" हजार वर्ष तेरी नजर में कल के दिन की भांति और रात का एक पहर सा लगते हैं। तू उन्हें बहा देता है। वे नींद के समान हैं। वे सवेरे

उगती घास के बराबर हैं। लहलहाते हैं। शाम को सूखकर मुरझाते हैं। हम तेरे क्रोध से क्षीण होते हैं, क्रोध से विभ्रम में पड़ते हैं हमारी आयु रही सत्तर वर्ष की। अधिक से अधिक अस्सी वर्ष की। वह जल्दी समाप्त होती है और हम उड़ जाते हैं।

बरामदे पर चटाई बिछाकर उसे नहलाकर लिटाया होगा। उसको ब्याह के कपड़े पहनाये होंगे। लोबान जलता होगा। सिरहाने मोमबत्ती जलाकर रखी है। उसकी मां चौक के दालान में रस्सी की खटिया पर लेटी धाड़ें चीख मारती रोती होगी। पहली संतान ! मां को ही सच्चा गहरा दु:ख है। शेष सबका दिखावा स्वांगमात्र हैं। छोटी बहिनें, चाचियां, मामियां कुल बीस औरतें खाट के चारों तरफ जमा हैं। जब कोई नया व्यक्ति मातम के लिये आता है तब सब औरतें मिलकर रो उठती हैं।

शांतिगांव की चाची आती है—

"रानी बेटी, तूने बहुत कष्ट सहा प्रभु ने तेरा दु:ख देखकर बुला लिया······!"

ताबूत बन गयी है। उस पर काला कपड़ा और सफेद फीता ठोंका जा रहा है।

"सब जगह खबर दे चुके ?"

"हां, हां, बड़े सवेरे लोग जा चुके हैं। अधिकांश लोग आ चुके।"

"कुंयेनाच्चन नहीं आये न ?"

"चल नहीं पाते।"

"मृत्यु कब हुई ?"

"कल रात को खाना खाकर सो गयी थी। कोई खास बीमारी नहीं थी।"

'वक्त आ गया।"

हां, वही।"

"कोझंचेरी गांव वाले आ गये ?"

"नही, कोई नहीं आये"

"वे क्यों आयें ?"

"हां, पादरी जी आ चुके। अब देर नहीं करनी है। क्यों कीवरीत भैया ?"

"गढ़ा तैयार हो गया ?"

"हां, हां, कभी का तैयार हो गया।"

"कोई जल्दी नहीं है। अभी कोई और हैं तो आने दीजिये। कुंयेनाच्चन ?"

"बहुत कमजोर हैं।"

"नब्बे बरस के होंगे।"

"हमारे मुलमूट घर के इडिक्कुला भैया की उम्र के हैं। उन्हें मरे दस साल हो चुके।"

पादरी उठे।

"तो हम प्रार्थना करें!"

सब उठते हैं। घर के भीतर जोर की सिसकियां पादरी जी प्रार्थना सुनाते हैं। भीड़ में से कोई-कोई दुहराते हैं। चार-पांच आदमी लाश को उठाकर ताबूत में रखने लगते हैं। सब मिलकर रो उठते हैं। मां लाश पर पछाड़ खाकर गिर पड़ती है।

"रानी बेटी! क्या तू मुझे यहीं छोड़ जा रही है?"

ताबूत लेकर जनाजा आगे बढ़ रहा है। न क्रूस है, न छाता, न बैंड—न बाजा—

"समय के रथ पर मैं स्वर्ग की यात्रा करती हूं। अपना देश देखने मैं शीघ्रता से जाती हूं।"

गिरजाघर का घंटा बजता है। गिरजाघर के भीतर अक्षय दीपक के पास ताबूत रखते हैं। सिरहाना पूर्वी दिशा में है। पादरीजी अंतिम उपचार शुरू करते हैं।

"प्रभु! इस संसार से निकलकर तेरे पास आने वाली इस दासी की आत्मा को सौभाग्यपूर्ण सिंगारधार आनंद देने वाला षड्रस भोजन और हर्षपूर्णनिवास प्रदान करें।"

मृतक शरीर को गढ़े के किनारे ले जाते हैं। इत्र डालते हैं। गढ़े में रखते समय फिर से लोग मिलकर रोते हैं। पादरी मिट्टी लेकर सलीब के आकार में गढ़े में डालते हैं।

"प्यार भरे सत्पुत्र! मृत्यु को पाये हुए प्रभु, हमें दूसरी मृति से—दया से बचाओ—"

एक-एक आदमी एक-एक चुटकी मिट्टी लेकर गढ़े में डालता है। बाद में कुदाली से मिट्टी ले-लेकर गढ़ा भर देते हैं। सिरहाने लकड़ी की क्रूस गाड़ देते हैं। सब खतम!

छह

राजन नहाकर आया तो कंघी नदारद। चौखट पर—दरवाजे ऊपर—हर जगह देखा।

"कोई चीज ठिकाने नहीं"

दीनाम्मा चौके से दौड़ी आयी।

"क्या है बेटा ?"

"कंघी।"

"उस नालायक छोकरी ने कहीं ले रखी होगी।"

दीनाम्मा ढूंढ़कर कंघी ले आयी। गुस्सा नाक पर है। मन में कभी कुछ सूझ तो फौरन काम होना चाहिये। कंघी करके वह कपड़े बदलने लगा तो दीनाम्मा ने पूछा—

"राजन बेटा कहां जा रहे हो ?"

"नाके तक"

"कल पुत्तनाट्टुकरा जाने की बात हुई है न ?"

"जी, मैं कहीं नहीं जाता"

"वाह ! लड़की के घरवाले सारा इंतजाम करके लड़के के इंतजार में रहें और हम न जायें ?"

"मुझसे सलाह लिये बिना आप लोगों ने यह बात क्यों सोची ?"

"वाह, क्या लड़के और लड़की से पूछकर भी शादी की बात सोची जाती है ? यह बड़ा मजाक रहा ! ठीक वक्त पर कोई काम चले, यही अच्छा है।"

"वक्त पर चले। क्या इस घर में एक लड़की के रहने की सुविधा है ? सोयेगी कहां ?"

दीनाम्मा को इस प्रश्न की प्रतीक्षा नहीं थी। वह कुछ सकपकायी। थोड़ी देर सोचकर बोली—

"सारी सुविधायें करने के बाद शादी करना कैसे संभव है ? सुविधायें अपने आप हो जायेंगी।"

"कम से कम कुछ सुभीता तो चाहिये। हम लोग किसी न किसी तरह निपटा लेंगे। पराये घर की लड़की को घर ले आकर क्यों सतावें ?"

"बहू अगर अच्छी प्रकृति की हो तो असुविधाओं की परवाह न करेगी। नहीं तो घर की मरम्मत पूरी होने तक अपनी नौकरी की जगह पर उसे साथ रख लो।"

ये सारे तर्क-वितर्क तो चले। पर दीनाम्मा को स्मरण आया कि असल में सुभीता है नहीं। शादी के बाद दूल्हा-दूल्हिन को अपनी इच्छा से मिलने-जुलने के लिये एक कमरा चाहिए ही। यहां भंडारघर के गढ़े की तरह दो कमरे हैं। वे आदमी के काम के नहीं। बची हुई जगह तो एकदम खुली है। खैर फादर प्रस्ताव लाये हैं, सो जाकर लड़की को देख लेना ही होगा। अगर पसंद आयी तो शादी भी करनी होगी। दक्खिनी बरामदे पर हलके तख्तों से एक कमरा तैयार कर उन्हें दे देंगे······"

राजन जब देहली पार करने लगा तब कुयेनाच्चन ने उसे देखा। आवाज दी !

"इधर आओ रे।"

राजन पास आया।

"कहां जा रहे हो ?"

"नाके तक जा रहा हूं"

"एं।"

"नाके तक जा रहा हूं।"

"जोर से बोलो। कान ऊंचा सुनते हैं।"

"हूं—"

"आंखें भी कम दीखती हैं।"

"..............."

"आने के बाद तुम अपने चाचाओं के यहां गये ?"

"गया"

"क्या कहा ?"

"क्या कहते ?"

"मेरी बात ! किसी को यहां खाट पर लेटा रहना याद नहीं। शायद किसी को सोचने की फुरसत भी न हो। कीवरीत को हमेशा आर्थिक कठिनाई है। उसकी बड़ी बेटी मर गयी। एक तरह से यह अच्छा ही हुआ। वरना उस लड़की को भी नरक था ! दूसरों के लिये दुःख। एक मास्टरनी बेटी क्वांरी पड़ी है। वह चली

जाय तो उसकी रोटी पर पानी फिरे। वह लड़की तो मन ही मन चाहती है कि किसी तरह इस दोजख से छूटे। लड़की को अपने ही घर बांधे रखने का जो ख्याल कीवरीत रखता है वह बेकार है। वह अपने पास जो आदमी आवें उसके कंधे पर हाथ डालकर चले तो वह क्या करेगा ?"

राजन धीरे बोला—

"मुझे नहीं मालूम।"

"क्या—?"

राजन चुप रहा।

"हां, तो उसकी हालत यह रही। फिर मझले की बात। वह ज्यों-त्यों कर दिन काटता है। पाव दिमाग और पौन दगा लेकर चलता है। वह अपना उल्लू सीधा करने में होशियार है। फिर भी तरक्की नज़र नहीं आती।"

"दादाजी मुझे ये सब बातें क्यों बताते हैं ? सब लोगों की बातें मुझे मालूम हैं।"

"क्या—?"

"—।"

"तुम क्या बोले ?"

तीन-चार साल से में पूरी कमाई पिताजी को भेजता हूं। पर अभी बचा क्या है ? कुछ भी नहीं किया तो कम से कम इस घर की मरम्मत कर सकते थे। सो कैसे हो ? जो कुछ मिलता है गाड़ी भाड़े में खप जाता है। मुहल्ले भर की हकूमत जो करते हैं।

दीनाम्मा बाहर आयी।

"प्यारे बेटे, रोज इस बात को लेकर झगड़ा होता है। पर किसी की सुनें, तभी न ?"

"मैंने उसका उपाय सोच लिया है।"

"क्या ?"

"मैंने उसका उपाय सोच लिया है दादाजी।"

कुंयेनाच्चन ने कुछ घबराए हुए दीनाम्मा की तरफ देखा। दीनाम्मा तो और भी हड़बड़ाई। लड़का रूठे तो सब खतम ! ······

"अरे, वह घर के पैसे से सफर नहीं करता। सफर के पैसे उसे मिलते हैं।"

"मिलते हैं ? कहां से ? मिलते भी हों, तो भी लोगों से कहलाने के लिए यों मारा-मारा क्यों फिरते हैं ?"

इस पर कुंयेनाच्चन ने अपने पुत्र का पक्ष लिया। यही नियम है। चाहे कोई भी हो, जब अपने बेटों पर कोई जोर का वार करते, तो कुंयेनाच्चन मानने को तैयार नहीं होते।

"अरे, इसमें भी कुछ बात है। जरा बाहर घूमकर पूछताछ कर लो। मेलोझत्तु मात्तुक्कुट्टि का बेटा कहलाना गर्व की बात है।"

दीनाम्मा ने कहा—

"पिताजी हमेशा अपने पुत्र का ही समर्थन करते हैं।"

"समर्थन कैसा ? क्या बिषप ने उसके लिए मोटर नहीं भेजी थी ?"

"सो तो ठीक है।"

"तो ? क्या उसकी भेजी छोटी रकम से यहां का निर्वाह होता है ? चावल चार-पांच महीने तक चलेगा। अहाते से सालाना कुछ न कुछ मिलेगा। क्या इतने से घर का खर्च निपटेगा ?"

अब दीनाम्मा भी कुंयेनाच्चन के पक्ष में आ गयी।

"पिताजी यहां हैं। इसलिए, मेहमान यहीं ज्यादा आते हैं।"

आगे कुछ क्षणों तक कोई कुछ नहीं बोला। काफी देर बाद दीनाम्मा ने कहा—

"दादीजी, राजन कल पुत्तनाट्टुकरा में लड़की को देखने जाने वाला है।"

"कल ?"

"हां।"

"पहली चीज घराना है। क्या मर्द क्या औरत, अपने परिवार का महत्व हर कोई दिखाता है। फिर देखना है कि लड़की साथ चलने लायक है कि नहीं ! तीसरी बात है······"

राजन कुछ जवाब दिए बिना चला गया। अगर नहीं चले तो दादाजी बातें करते ही रहेंगे।

राजन ने कहा तो था कि नहीं जाऊंगा। पर वह जाने को तैयार हो चुका था। कीवरीत की छोटी बेटी लीलाम्मा के पति बेबी को साथ लेने का प्रबंध भी हो गया था। बेबी तालुक कचहरी का मुनीम था। हंसमुख सरस व्यक्ति—राजन का बड़ा दोस्त था। छुट्टी पर आते ही बेबी ने कहा था—"अब की बार राजन को

कहीं फंसाना चाहिए।" सड़क से चलते समय लड़कियों पर टीका-टिप्पणी करते थे। उन्हीं दिनों यह प्रस्ताव आया था······

राजन और बेबी बड़े सवेरे निकले। गांव तीस मील दूर था। सत्ताईस मील मोटर से जाना था; तीन मील पैदल। बीच में दो घाट पड़ते थे। दूसरे घाट के बाद एक गिरजाघर था। गिरजाघर के पड़ोस में ही वह घर था। एकाध आदमियों से घर का पता-धता पूछना पड़ा। फाटक पहुंचने पर भीतर से एक अधेड़ भव्य व्यक्ति बाहर आए और पूछा—"रास्ते में कहीं भटकना तो नहीं पड़ा ?"

बेबी बोला—

"जी नहीं।"

घर अधूरा ही बना था। फिर भी अच्छा घर रहा। लिपाई का काम शेष है। स्वागत कक्ष के द्वार पर एक स्त्री आकर खड़ी हो गयी। राजन ने मन में कहा—"लड़की की मां है। उस स्त्री ने दोनों को बारी-बारी से देखा—इनमें लड़का कौन है? बेबी समझ गया और बोला—

"मैं साथ आया हूं। नाम बेबी। यही लड़का है।"

भव्य प्रकृति के अधेड़ व्यक्ति और मां मुस्कुराए। मां ने शायद सोचा होगा कि साथी बड़ा मिलनसार है।

भव्य व्यक्ति ने कहा—मैं इनका भाई हूं। मेरा घर यहां से आठ-दस मील दूर है। इस गिरजे के स्कूल में ही बहनोई काम करते थे। जमीन खरीदी और घर बनाने लगे पूरा नहीं कर सके······"

बेबी ने पूछा—

"भैया क्या करते हैं ?"

"मैं? मैं भी अध्यापक हूं।"

"ऐसा ही लगा।"

"सो कैसे ?"

"लोगों की बातचीत से समझ सकते हैं।"

भव्य व्यक्ति हंस पड़े। शीघ्र ही फिर गौरव के साथ राजन से पूछा—"कितने दिनों की छुट्टी हैं ?"

"दो महीने।"

"साठ दिन की ?"

"नहीं। छियावन दिन की छुट्टी और यात्रा के दिन भी।"

"सो ठीक ! यात्रा के कितने दिन ?"

" 'वोन वे' छह दिन। पांच दिन काफी हैं।"

"बेबी भैया मानो, क्या कुछ कहना चाहते हैं ?"

"हां।"

"क्या ?"

"भैया भी पलटन में रह चुके हैं।"

अब कमरा ठहाके से भर गया। राजन ने भी उसमें साथ दिया।

ठीक है। 1943 में भरती हुआ। 47 में डिसचार्ज हो लौटा।

मां बोली—"हाथ धुलाइए। कुछ काफी—"

सुनते ही बेबी उठकर बोला—

हां, हां ! कोई हर्ज नहीं।"

जलपान का इंतजाम दूसरे कमरे में था। दोनों हाथ धोकर मेज के सामने बैठे। भीतरी दरवाजे के किवाड़ खुले। एक चमक। लहंगा और चुनरी। हाथ में पकवान का बर्तन। झुका चेहरा। काजल लगी-सी बड़ी-बड़ी आंखें। आंखें कुछ फड़क उठीं। हाथ कांप उठा। ज्योति कम हो गयी।

फिर से पकवानों के बर्तन आ रहे हैं।

काफी के प्यालों से भरा ट्रे। अब पतली नाजुक उंगलियां नहीं कांप रही हैं। घबराहट बहुधा खतम हो चुकी है।

"काफी पीजिए"—मां !

"हां।"

इस बच्ची के पिता अब नहीं रहे। जानते होंगे न ?

"मालूम है।"

"यह बच्ची गर्भ में चार महीने की थी। तभी इसके पिता का देहांत हो गया।"

"हां।"

"तीन लड़कियां हैं। दोनों बड़ी लड़कियों को ब्याह दिया।"

"हां।"

"इसके पिता अभी जिंदा रहते तो······" मां ने आंसू पोंछे।

काफी पीने के बाद उठकर हाथ धो लिया। मां के आग्रह से ही वह ज्योति फिर से दरवाजे पर आयी। अब कमरे में अकेले राजन था।

चुनरी की छोर को उंगलियों से पिरोते हुए खड़ी है। चेहरे पर ऐसी दीनता! मानो अब रो पड़ेगी······

"नाम क्या है?"

············

"एं?"

शांतम्मा। मानो मंत्र जप रही हो।

"किस दर्जे में सीखती हो?"

"सिक्स्थ में।"

"अब सिक्स्थ नामक कोई दर्जा तो नहीं है?"

"दसवें स्टैंडर्ड में।"

"सो ठीक है। स्कूल कितनी दूर है?"

"एक मील।"

"अब मील नहीं है न?"

वह कुछ घबराई-सी पूछ बैठी—

"तो फिर?"

"किलोमीटर!"

लड़की के होठों पर मीनी-सी मुस्कुराहट खिली; पर शीघ्र ही गायब हुई। टपकती ओस की बूंद की क्षणिक चमक सी।

मां द्वार पर आयी—

"बेटा, हम कोई बड़ी दौलत भेंट नहीं कर सकते। तीन बेटियां ही हमारी संपत्ति हैं।"

"हां।"

"इसके पीछे पछताने की जरूरत नहीं पड़ेगी। मैंने इसे बड़ी सावधानी से पाला-पोसा है।"

मां की आंखें छलछला आयीं। बेटी की आंखें भी गीली हो आयीं।

राजन की सांस घुटने लगी। उसने हाथ बढ़ाकर शांतम्मा का हाथ अपने हाथ में ले लिया। वह कांप उठी। घबराकर मां की तरफ देखा। मां का मुखमंडल

इस प्रतिक्रिया को स्वीकृति दे रहा था।

"शांतम्मा"

"क्या ?"

"क्या मुझे पसंद करती हो ?"

शांतम्मा झिझकी। कैसे कहे कि पसंद है।

"बोलो।"

उसने धीरे से कहा—

"राजन भैया को······"

मां का मन खुश हुआ। इस मार्मिक घड़ी में "राजन भैया" पुकारने की अक्ल तुम्हें हुई। बोली—

"राजन भैया ही हैं बेटी !"

"मैं पसंद आयी ?"

हथेली ज़ोर से दबाते हुए राजन ने कहा—"हां।"

"बेटा, तुम उसे पसंद नहीं आओगे क्या ? कहने में सकुचाती है। परमेश्वर के सामने तुम दोनों एक दूसरे के साथ बंध चुके हो। अब सिर्फ रस्म पूरी करनी है।"

विदाई के वक्त बेबी ने कहा—

"अगले हफ्ते में यहां से कोई हमारे यहां आवें। उसके बाद तारीख तय करने और चिट्ठियों की अदला-बदली के लिए यहां आना काफी होगा न ?"

"अच्छा।"

जब राजन लौट रहा था एक नया आदमी था। एक तरह की मीठी बेचैनी थी। मन में एक नया रूप ; नयी आवाज, नयी खुशबू—"क्या राजन भैया को मैं पसंद आयी ?······

दीनाम्मा ने पूछा तो बिना संकोच के कहा—"पसंद आयी, चाचीजी।"

दीनाम्मा ने कई लोगों से कहा कि वह तो उस लड़की पर एक दम लट्टू हो चुका है।

कहे अनुसार रविवार को पुत्तनाट्टुकरा से चार आदमी आये। लड़की के मामा, दो चाचा, धर्म-प्रदेश से एक व्यक्ति। दहेज के बारे में कोई पक्की बात किये बिना ही मंगनी के लिए चलने का निर्णय हुआ। लड़की के घरवालों की

जमीन की एक तिहाई 40 सेंट जमीन और घर मिलेगा। शादी के खर्च के लिए कुछ रुपये भी······। ऐसी मोटी-मोटी बातें तो हुई हैं। मात्तुक्कुट्टी ने इन सबसे संतुष्ट न होने का प्रयत्न किया। मगर लड़की अपने बेटे की मनपसंद थी। इसलिए मान गया······

उन्हीं दिनों एक खास घटना हुई। दूसरे सप्ताह के रविवार को प्रार्थना के बाद सब अपने-अपने घर लौट चुके थे। उस समय एक बूढ़ा मेलोझत्तु घरपर आ गया। सत्तर-पचहत्तर बरस का धूप में चलते-चलते थक गया था। आंगन से ही आवाज दी—

"कुंयेनाच्चन हैं ?"

राजन घर पर नहीं था। वह अपनी मां के घर गया था। दीनाम्मा बाहर आयी और स्वागत किया—"आइए !"

वह आकर कुरसी पर बैठ गया।

"सो रहे हैं ?"

"हां, थकान से ऊंघ रहे हैं।"

"नब्बे के हैं न ?"

"हां।"

"मैं पहले आलप्पुझा में काली मिर्च का सौदा करता था। कुंयेनाच्चन काली मिर्च बेचने आते थे। इन्हीं दिनों से हम दोनों की जान-पहचान रही। कई बार यहां भी आया हूं······बहुत अरसे पहले।"

"हां।"

"क्या उनकी पोती हो ?"

दीनाम्मा कुछ शर्मायी।

"नहीं ! छोटे बेटे की स्त्री हूं।"

"ओह ! तो शादी किसकी हो रही है ?"

"बेटे की ! उसकी मां मर गयी।"

"तुम दुहाज की हो ?"

"हां।"

"हां, मेरी एक बेटी की शादी यहां वेलंकाव घर में हुई है। वहीं जा रहा था। तो कुंयेनाच्चन से एक बात कहने की इच्छा हुई।"

"पिताजी को जगाऊं ?"

"जगाओ ! मुझे जाना है।"

"पिताजी।"

कुयेनाच्चन गुमसुम। कंधे पर हाथ रखकर हिलाया।

"जरा इधर देखिए ! एक आदमी मिलने आया है।"

"कौन ?"

"आंख खोलकर देखिए !"

"पहचानते हैं ? कोनच्चिरा का लोनान।"

"काली मिर्च लोनान।"

लोनान हंस पड़ा।

"हां।"

"कंजि दो बेटी।"

गरम कंजि थोड़ी सी पीने के बाद लोनान को ध्यान से देखा।

"मुझे पहचाना ?"

"हां हां।"

"मुद्दत से, नहीं मिले।"

"तबियत ठीक नहीं। थकावट भी है।"

"क्या अब भी थकावट से बच सकते हैं ?"

"तुम्हारी एक बेटी का ब्याह वेलंकाव पर हुआ है न ?"

"हां। वहीं जा रहा था। तो सुना कि कुयेनाच्चन हमारे गांव के संबंधी होने वाले हैं।"

"कैसे समझा ?"

"कोतच्चिरा से पुत्तनाट्टुकरा सिर्फ चार मील दूर है। शादी की बात ठहरी ! कहते-सुनते खबर मिली। हम लोग और लड़की के घरवाले एक धर्मप्रदेश के थे। इसके बाद अलग गिरजाघर बना और धर्मप्रदेश अलग हो गया।"

"क्या अच्छे हैं ?"

लोनान ने थोड़ी देर सोचा। मुस्कुराते हुए पूछा— अच्छे हैं पूछने का मतलब ?"

"लड़की, घरवाले।"

"हां हां, लड़की अच्छी है, घरवाले भी अच्छे हैं। पुराना अभिजात परिवार है।"

"बाप नहीं है, है न ? कहते हैं, जब यह तीन-चार महीने की गर्भस्थ शिशु थी तभी बाप मर गया।"

थोड़ी देर बाद लोनान बोला—

"बाप है।"

"क्या ?"

"बाप है। एक पादरी है।"

दीनाम्मा को लगा कि एकाएक किसी ने गरदन मरोड़ दी है।

"एं !"

"दस-बीस साल पहले पुत्तनाट्टुकरा के गिरजे में कार्तिकप्पल्लि का एक पादरी नियुक्त था। उसकी बेटी है।"

सहमे हुए कुंयेनाच्चन ने दीनाम्मा के चेहरे की तरफ देखा। उठने की इच्छा इशारे से बतायी। दीनाम्मा ने सहारा दिया और उठाकर बिठाया।

"यह तुम क्या कह रहे हो ?"

"सच कह रहा हूं, कुंयेनाच्चन ! पादरी जी को जानते हो ?"

दीनाम्मा को कहने की इच्छा हुई कि वे पादरी जी मेरे जीजा हैं—बड़ी दीदी के पति। मगर उसके मुंह से ये ही शब्द निकले—

"बुढ़ापे में ऐसी बेकार बातें बकते फिरना छोड़ दीजिये !"

लोनान का चेहरा फीका पड़ गया।

"बेटी। तुम मेरी छोटी बेटी की उम्र की ही हो ! शादी में रोड़ा अटकाने का पेशा मैं नहीं करता। दर्याफत कर लो। कुंयेनाच्चन की दोस्ती के नाते एक सच्ची बात बतलाने आया। उस मास्टर को मरे एक साल बीतने के बाद ही उस औरत ने इस बच्ची को जन्म दिया। पादरी जी उन्हीं दिनों उन्हीं के घर पर रहते थे। उस स्त्री के गर्भ रहने की बात सुनकर उस पादरी ने अपना तबादला करा लिया। सभी यह बात जानते हैं। लोगों ने बिषप से शिकायत की थी कि इस पादरी को सजा देनी चाहिए। बड़ा हल्ला मचा। मगर उस स्त्री ने ही पादरी को बचाया—"

कुंयेनाच्चन के मुखमंडल की व्याकुलता देखकर लोनान ने कहा—

"यह रही दस-बीस साल पहले की बात। हम आसानी से भुला सकते हैं।

मगर मैं यह नहीं कहूंगा कि इन बातों के कारण लड़की हमारे घर के लायक नहीं है। फिर भी अपनी जानी बात आप लोगों को सुनायी।"

खामोशी! दीनाम्मा के दिल ने कहा—शायद सच भी हो! वरना फादर इतनी दिलचस्पी से······मेरे परमेश्वर!

लोनान ने किसी तरह खिसक जाना चाहा।

"तो मैं चलूं कुंयेनाच्चन!"

जवाब नहीं।

"चलूं बिटिया?"

वह भी चुप!

लोनान के जाने के बाद कुंयेनाच्चन ने आवाज दी—"बहू!"

"क्या?"

"शायद सच हो!"

दीनाम्मा ने जवाब नहीं दिया। कुंयेनाच्चन ने सोचा। अगर बात सही है तो भाई और बहन। फादर की रखेल की बेटी। छोटे भाई का लड़का दूल्हा। मामी का बेटा छोटा भाई नहीं तो और कौन? पहले नहीं सुनी है। पुराने नियम के दिनों की बात है। दाऊद का पुत्र अम्नोन अबशालोम की बहन तामार पर मोहित हुआ। उसने चतुर योनादाब के उपदेश के अनुसार पलंग पर बीमार बनकर लेट गया। जब पिता उसे देखने आया तब अम्नोन ने राजा से कहा, मेरी बहन तामार आकर मेरे देखते दो पूड़ी बनाये कि मैं उसके हाथ से खाऊं। तामार आयी और पूड़ियां पकायीं। अम्नोन ने कहा कि वे पूड़ियां कोठरी में ले आ, ताकि और कोई मेरा इस तरह खाना न देखे। वह पूड़ियां कोठरी में ले गयी। कोठरी के भीतर तामार के पहुंचने पर अम्नोन ने ज़बरदस्ती से उसके साथ कुकर्म किया। दो साल के बाद ही सही, अबशालोम ने अपनी बहन के अपमान का बदला चुकाया। एफ्रैम के निकट के बाल्हासोर में भेड़ की ऊन कतराने के पर्व पर अम्नोन जब दाखमधु पीकर नशे में आ गये तब अबशालोम के सेवकों ने उसे मार डाला।

"लात मार-मार कर मार डालना चाहिए।"

"बाबूजी।"

"क्या—?"

"किसे मारने की बात कह रहे थे?"

"हां······सच होगा। होगा न ?"

"·······"

"वह चोंगा पहना बैंलवा पादरी होगा।"

"मुझे मालूम नहीं पिताजी। मुझसे कुछ मत पूछिये। मुझसे कुछ नहीं······"

दीनाम्मा फूट-फूट कर रोने लगी।

"नहीं चलेगी शादी। चिट्ठी लिखो। लड़के को अपने काम पर लौटना पड़ा है और हमारे सम्मिलित निश्चय के अनुसार—।"

"उसके पिता को आने दीजिए पिताजी।"

"क्या ?"

"अगर मुहल्ले वाले सुनें तो बेइज्जती हमारी ही होगी।"

"कैसी बेइज्जती ? उस लंपट पादरी ने बदमाशी ही की न ? वह तुम्हारा जीजा है तो मेरे साले का बेटा भी तो लगता है। तुम्हारे पति के मामा का बेटा। बेइज्जती सबकी होगी। बड़े को बुलवाओ। आज ही चिट्ठी लिखनी है। मेलोझत्तु कुयेना के पोते का ब्याह पितृहीन कन्या से कराना मंजूर नहीं है······"

"चुप रहिए पिताजी !"

शाम को मात्तुक्कुट्टि आया। तीनों चाचाओं और कुंयप्पी को बुलवाया। कीवरीत और कुंयप्पी ही आये। बातें सुनने पर कीवरीत ने तर्क पेश किया—"ब्याह में रोड़ा अटकाने वाले कुछ लोग हैं। इसलिए सावधान रहना है। हो सकता है, उसके बेटे के लिए यह कन्या मांगी हो और वे राजी न हुए हों।"

"हो न हो, कुछ पूछताछ करनी ही पड़ेगी।"

मात्तुक्कुट्टि बोला—"दाल में काला जरूर है। वरना फादर इतनी दूर से ब्याह का प्रस्ताव काहे को ले आते।"

कुयेनाच्चन ने कहा—"यही बात है। उस फादर के मुंह पर फटकारना था।"

कीवरीत ने रोका—

"पिताजी बेमतलब बातें बके बिना चुप रहें।"

दूसरे दिन आदमी भेजा गया और पूछताछ की। सवाल कैसे सीधे पूछते ? कई लोगों से चतुराई से प्रश्न किया। अब तो शुबहा पहले से भी बढ़ा। धोखा हो गया। चिट्ठी लिखने का फैसला किया गया। तभी राजन नैहर से आया। घर पहुंचने के पहले ही उसने सारी खबरें सुन ली थीं। बेबी ने उसे सब कुछ

सुनाया था। वह चौंक उठा। बड़ी उम्मीद से प्यार से बनायी कल्पना की मूर्ति आंखों के सामने नीचे गिरकर चूर-चूर हो रही थी। अमानत का खजाना ठीक जरूरत की घड़ी में मानो, छिपा लिया गया। खाना-पीना सब असंभव। मन के भीतर संघर्ष था। मार्मिक संघर्ष ! आत्मा अस्त-व्यस्त भवन था। अब वह साफ-सुथरा-सा है। द्वार पर एक व्यक्ति मंगलती मोमबत्ती हाथ में लिए खड़ी है। काजल लगी-सी बड़ी-बड़ी श्यामल आंखें। प्रकाश के परिवेश से आवृत सुंदर मुख ! मन में छिपाये प्रेम की अंगूरी से गीले पेलवाधर······"

"देर क्यों कर दी ?"

"क्या ?"

"कितनी देर से राह देख रही हूं। क्या जानते नहीं कि आपके आये बिना खाना नहीं खाऊंगी।"

"तुम तो कुछ और हो। जैसा सोचा था, वैसी तो नहीं हो।"

"क्या ?"

"जैसा सोचा था वैसी नहीं हो ! पहली भेंट के समय तुमने मुखोटा धरा था।"

"कभी नहीं, राजन भैया ! कभी नहीं ! मुझे छूकर देखो।"

"तुम्हारा बाप कौन है ?"

चौंकती है। फीकी पड़ती है। आंखें डबडबा आती हैं।

"बाप।"

"हां ! मुझे जानना है। कार्तिकप्पल्लि के······"

मुंह हाथसे बंद करती है। आंखें विनय करती हैं कि ऐसी बातें मत कहो·····"

"राजन भैया !"

"हूं।"

"यह रोशनी नहीं देख रहे हो ?"

'हूं।"

"क्या इसमें अपवित्रता है ?"

"नहीं।"

"क्या यह मोम नापाक है ?"

"नहीं मालूम।"

"तो मैं यह रोशनी हूं। मैंरा हाथ पकड़कर वचन दिया था न ?······"

"······"

"बोलिये राजन भैया ! कहा था न कि मुझे पसंद करते हैं।"

मात्तुक्कुट्टि कुंयेनाच्चन को खत पढ़कर सुना रहा था कि निर्णय के अनुसार मंगनी के लिए अभी आने की जरूरत नहीं है। राजन ने जाकर पूछा—

"चिट्ठी लिख चुके ?"

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"ठीक है। आज ही भेज दो।"

"जरा देख लूं।"

हिचकने पर भी मात्तुक्कुट्टि ने पत्र राजन के हाथ में दिया।

पत्र पढ़कर देखा। अब राजन ने कहा—

"यह न भेजेंगे पिताजी ! यही शादी करेंगे। लड़की से ही हमारा मतलब है। मुझे वह अच्छी लगी।"

"छि: मान-अपमान न जानने वाले मूर्ख ! तूने क्या कहा ? दे चिट्ठी।"

"नहीं भेजना है।"

उसने चिट्ठी को टुकड़े-टुकड़े करके दूर फेंक दिये। साथ ही मात्तुक्कुट्टि ने बेटे के गाल पर तमाचा दे मारा।

"क्या तेरे लिए वही काफी है ? काफी है ?······"

मात्तुक्कुट्टि गुस्से से कांप रहा था। चार-पांच पल तक राजन पिता की आंखों में अपलक देखता रहा। फिर बोला—

"इसमें शक क्यों ? मुझे जो लड़की पसंद आयी उससे शादी करूंगा।"

"शादी करेगा—"

मात्तुक्कुट्टि एक गंदी गाली देते हुए राजन की तरफ दुबारा बढ़ा। राजन ने उसका हाथ खुद थाम लिया— "नहीं तो। क्या मैंने कुछ छीना—चुराया है कि मुझे मारने चले हैं ?"

दीनाम्मा बीच में पड़ी और बेटे की पकड़ से पति का हाथ अलग करती हुई बोली—

"यह क्या बात है। बाप और बेटे दोनों बेसुध हो गये ?"

कुंयेनाच्चन खटिया से तड़फड़ाकर उठे।

"लड़के को मत मारो। उसने अविवेक की कोई बात कही ही नहीं कि क्या तुम उसे मार डालना चाहते हो?"

सिसिली मुन्नी मां से लिपटकर जोर से रो उठी।

"निकल जा! तू मेरा कोई नहीं है! जा।"

"पिताजी की कमाई मुझे न दें, यह मेरे दादाजी का घर है।"

दीनाम्मा चीख उठी—

"चुप रहो राजन! कुछ भी हो, तुम्हारे पिताजी हैं न?"

"क्या बाप बेटे को इसी तरह मारते हैं चाचीजी? क्या बेटों को सुनाने लायक गाली दी थी?"

कुंयेनाच्चन ने कहा—"मारेगा रे! गाली भी देगा। हां, पिता की निंदा करने वाले को परमेश्वर दंड देगा। मेरा घर मेरे बेटे का—तू जा—जा रे!"

कुंयेनाच्चन हांफ रहे थे। राजन आगे नहीं रुका। वह निकलकर तेजी से बाहर चला गया। अब मात्तुक्कुट्टि ने सारा गुस्सा दीनाम्मा पर उतारा—

"अकेली तू ही इस लड़के को सिर चढ़ाये हुए है। अकेली तू!"

दीनाम्मा ने जवाब नहीं दिया। आग ठंडी हो जाये। दीनाम्मा के दिल में डर था कि वह जल्दी खतम नहीं होने का है। जिस बात पर दिल लगा उसके लिए जान तक दे देगा!······

"उस लड़की ने उसे कुछ दिया होगा!"

कुंयेनाच्चन ने पूछा—

"क्या है? क्या है?"

किसी ने जवाब नहीं दिया। उद्वेगजनक मौन! फैलती आग का पता लगाकर मानो एक मौके पर बुझायी गयी और शांति लायी जा सकी हो।······

कीवरीत और कुंयप्पि फिर से आये। अब की बार कुंयुचेरुक्कन भी आया था। खुद दीनाम्मा ही कुंयुचेरुक्कन और फिलिप्योस को जाकर बुला लायी। फिलिप्योस बागान खरीदने मलाबार गया था।

नयी परिस्थिति पर विचार-विमर्श हुआ। फाड़ डाले हुए पत्र की जगह नया पत्र लखने पर मात्तुक्कुट्टि जोर दे रहा था। कुंयुचेरुक्कन ने ही मना किया। चार आदमियों की बात का खंडन किए बिना कैसे रहे?

"नहीं ! नहीं ! फादर पर किसी के मुंह से गलत बात सुनकर ऐसी बेईमानी नहीं करते।"

कौवरीत ने पूछा—"तू यह क्या कह रहा है ?"

"वही जो कहा था !"

"फादर के प्रस्ताव लाने से क्या नापसंद विवाह भी हमें कराना ही होगा ?"

"नापसंद बात कौन सी ? कहो न ?"

"बात बतावें। पत्थर ! बला से !"

कुंर्यप्पि ने बीच में दखल दिया—"खैर, चाचाजी ! मान लें कि हमने छोड़ दिया।

अगर राजन जिद करें कि इसी लड़की से ब्याह करूंगा तो ? वह अगर लड़की को लेकर रजिस्ट्रार कचहरी में जाकर शादी कर ले तो ? तो क्या करेंगे ?"

"अगर नहीं माना तो जैसा करेगा वैसा ही करने देंगे।"

"वाह ! उसी का बड़ा घाटा हो जायेगा न ? वह सरकारी वेतन पाता है। उसे तुम्हारी मेहरबानी की जरूरत नहीं है।"

"तो ? क्या उससे डरूं ?"

"डरना है। जमाना ऐसा है।"

सल लोग किसी निष्कर्ष पर पहुंचे बिना अपने-अपने घर चले।

राजन फिर से अपने नैहर गया। उसके चार मामा थे। चारों लेन-देन का धंधा करते पैसे कमाते थे। शादी के बाद भी सब मिलकर रहते थे। बैंक, चिट वगैरह का धंधा था। सम्मिलित कमाई और बड़ी दोस्ती। राजन जब वहां गया तब उसका चेहरा एकदम उतरा हुआ था। मामा और मामियां राजन को अपनी आंखों का तारा समझते थे। प्रत्येक ने अलग-अलग होकर उदासी का कारण पूछा—

"क्या हुआ रे ?"

"क्या हुआ राजन बेटा ?"

राजन अपने को रोकने में असमर्थ होकर रो पड़ा। तभी वह जान सका कि कितना कमजोर है। बातें साफ-साफ बता भी नहीं सका। गाल की सूजन देखकर बड़े मामा कोच्चुकुट्टि बोले—

"चलो ! मैं भी साथ चलूंगा। इसका मतलब हम समझ लेंगे।"

मामा और भानजा साथ आये। सांझ तक राह देखने पर ही मात्तुक्कुट्टि से

मुलाकात हो सकी। तब तक कोच्चुकुट्टि ने कुंयेनाच्चन या दीनाम्मा से अपने दिल की बातें नहीं कहीं। दीनम्मा ने मनाने-समझाने के कई प्रयत्न किये, पर बेकार। मात्तुक्कुट्टि को अपने घर के बरामदे पर देखकर कुछ असमंजस में पड़ा।

"अच्छा, देवर कब आए ?"

"दोपहर को !"

मात्तुक्कुट्टि चुपचाप चौके में गया। चतुराई से पत्नी से पूछा कि कहीं बात-चीत तो नहीं हुई। दोनों एक ही उम्र के थे और पहले घनिष्ठ मित्र भी रहे थे। मात्तुक्कुट्टि बाहर आया।

"कोई खास समाचार नहीं है न ?"

"सुना कि यहां कोई खास समाचार है। वह जानने के लिए ही आया।"

"हां, उसने क्या कुछ कहा नहीं ?"

"ठीक-ठीक नहीं कहा। गाल पर सूजन दीख पड़ी।"

"ओह ! क्या पूछने आए हो ?"

"नहीं नहीं ! बेटा तुम्हारा ही है। मारकर कहीं दफना दें तब भी पूछे कौन ?"

"तो फिर ?"

"कुछ नहीं ! नाते-रिश्ते के लोग हैं न ! सुना कि आप लोगों ने शादी की बात सोची थी। सुना कि अब मारपीट तक मामला बढ़ा है।"

"क्या सारे प्रस्तावित विवाह चलते हैं ?"

"नहीं ! तुम्हारे कहे अनुसार वह गया और लड़की को देखा। लड़की पसंद आयी। अब कैसा बखेड़ा हो गया ?"

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"अरे कोच्चुकुट्टि, सुना कि वह मां दुश्चरित्र वाली है।"

"कैसी दुश्चरित्र ? हम मां से नहीं, बेटी से ही तो शादी कराते न ?"

मात्तुक्कुट्टि ने कूटनीतिक उपाय से इस समस्या का हल करने का प्रयत्न किया—

"साला साहब, मन में गलतफहमी रखते हुए बातें न करना। क्या हम शादी पक्की करने के पहले सभी बातें जान लेते हैं ? पुछते-ताछते हैं उचित लगे तो कराते हैं। साला साहब के विषय में भी यही बात लागू है न ?"

अनुकूल मौका पाकर दीनाम्मा ने मात्तुक्कुट्टि का साथ दिया—"राजन बेटे

को कांटों में घसीटने वाला कोई काम क्या हम करेंगे ?"

"सो सब ठीक है। साला साहब के ममेरे भाई कातिकप्पल्लि वाले फादर ही वह प्रस्ताव लाये थे। जिस बात को एक वैदिक देखकर अनुकूल निष्कर्ष पर आ गए उसे मानना ही चाहिए। जाकर देखा तो तुम लोगों को भी रिश्ता पसंद आया। अब कैसे सूझा कि मां का चरित्र कलंकित है ? साफ बताओ।"

मात्तुक्कुट्टि अब उलझन में पड़ गया। दीनाम्मा भी असमंजस में पड़ी। कैसे कह सकते थे कि लड़की फादर की बच्ची ही है। कहना भी शरम की बात ठहरी, इस कथन की नींव ? सुनी सुनायी बात ! इसलिए कुछ गोल-गोल कहने लगे—

"जवानी में पति मर गए। घर पर कोई हुक्म देने वाला नहीं। ऐसी हालत में आसानी से बहक सकती थी न ?"

"छि ! कैसी बात करते हो ?······उस धर्मप्रदेश के गिरजे के पादरी—तुम्हारे मामा के पुत्र—जो गवाही देते हैं वह क्या उस औरत के चरित्र की स्वच्छता केलिए काफी नहीं है ?"

"क्या फादर को सब मालूम होगा ?"

"इतना जानना काफी है। राजन के लिए प्रस्ताव पसंद है। वही करो।"

मात्तुक्कुट्टि ने कोच्चुकुट्टि के चेहरे की तरफ ध्यान से देखा। यह तो लड़ने के लिए तैयार होकर आया है। अब मनाने-रिझाने से लाभ नहीं।······

कुंयेनाच्चन ने पूछा—

"कोच्चूट्टि ने क्या कहा ?"

"यही ब्याह करावें।"

"नामुमकिन।"

मात्तुक्कुट्टि बोला—

"सो बात छोड़ो साला साहब ! उसकी उम्र अभी अठाईस तीस तो नहीं हुई न ?"

"उसकी दलील भी तो कहो, ं हनोई।"

दीनाम्मा ने कहा—

"कोच्चुकुट्टि भैया, वह तो राजन के चाचा भी।"

"तुम भीतर जाओ।"

"राजन की इच्छा है कि यही नाता हो।"

मात्तुक्कुट्टि के होंठों पर व्यंग्य हंसी बिखरी—

"आदमी की सभी इच्छाएं सफल कैसे हों ? अगर यही हुआ तो फिर सारी झंझट खतम समझो।"

"खैर अगर वह कहीं से एक लड़की को लेकर आ जाए तो साला साहब क्या करेंगे ?"

"यह तो हठ है। अगर यही हुआ तो देखा जाएगा। किसी भी हालत में वह मेरे काबू से खिसककर कहीं नहीं जाएगा। मैं अपने बाप के इशारे पर ही जीता रहा हूं।"

"सो बात छोड़ो। सो तो सभी जानते हैं।"

"क्या जानते हैं ?"

"कहना ठीक नहीं !"

"कहो न, सुनेंगे !"

"क्या पिताजी के आदेश से ही सैंतीस वर्ष की उम्र में, एक बालिग लड़के का बाप होने के बाद अठारह साल की लड़की से मोहब्बत करके शादी की ?"

"तो तुम्हारी बहन के मर जाने पर क्या मुझे सन्यास लेना था ?"

तभी दीनाम्मा दरवाजे की आड़ से बाहर आयी।

"हर एक अपनी सुविधा के अनुसार चलता है। इस सज्जन की कोई बेटी पढ़ने गयी और किसी को लेकर आयी न ? उसके बारे में क्या कहते हैं ?"

मात्तुक्कुट्टि ने मुड़कर पत्नी को एक थप्पड़ दिया—"कुलच्छनी ! भीतर जाओ !"

"वाह ! इस बरामदे पर आकर मेरे मुंह पर अंट-संट कहें तो क्या चुप रहूं ?"

"कैसी अंट-संट ?"

"बात न बढ़ाना ही अच्छा है।"

"नहीं बढ़ायेंगे।"

कुंयेनाच्चन छड़ी टेककर उठे—

"क्या मेरे लिये पानी गरम कर देनेवाली लड़की को गाली देने के लिये ही तुम आये हो ?"

कोच्चुकुट्टि उठे और चलते-चलते बोले—

"अगर शिष्टता की बात होती हो तो सबके लिये अच्छा होता। अगर शराफत छोड़ने की बात हो तब भी कोई डर नहीं है!"

फिर से विचार-विमर्श, बहस, मुबाहिसा, बेकार बातें—सब चलीं। राजन ने सप्ताह भर घर पर भोजन नहीं किया। उसने सबको सूचित कर दिया कि यदि यह ब्याह न चले तो वह जिंदगी में दूसरी जगह से ब्याह न करेगा। मातृहीन पुत्र होने के नाते उसकी सब बातों को चुपचाप मानता आया था। मगर, इस बात पर मात्तुक्कुट्टि समझौते के लिये तैयार नहीं था।

एक दिन सवेरे-सवेरे कीवरीत ने मेलोझत्तु घर आकर मात्तुक्कुट्टि को जगाया। कुंयेनाच्चन तो जागे हुये लेटे थे। ब्याह का सवाल उठने के बाद नींद हराम हो गयी है। कुंयेनाच्चन उस शासक की तरह थके-मांदे व उदास थे जिसके शासित देश को दूसरे लोग कब्जा करके बांट रहे थे। उनके शय्याग्रस्त होने से ही यह सब हुआ था। उनकी सत्ता के दिनों में ऐसा दगा करने की हिम्मत कोई नहीं रखता था।

कीवरीत ने कहा—

"पिताजी, मैं पिताजी का सबसे बड़ा बेटा हूं। पिताजी के अस्वास्थ्य के कारण आपके दायित्व के निर्वाह का भार अब मुझ परहै। मेरा निर्णय पिताजी को मानना होगा। मात्तुक्कुट्टि भी अस्वीकार न करे।"

"क्या है भैया?"

"राजन की शादी उसी लड़की से हो। सपने में परमेश्वर ने मुझे यही फैसला सुनाया।"

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"भाई-बहन हैं।"

चुप रहिये। बकवास न करें। चाहे वही ठीक है, तो भी इतना घनिष्ठ भाई-पन नहीं कि शादी न हो।"

दीनाम्मा बोली—

"राजन के मामा ने यहां आकर जो कुछ कहा सो भैया ने सुना?"

"सब सुना। अपनी बुराई का ढिंढोरा क्यों पीटें? और एक बात भी सोच लो। वह चालीस-पचास जो भी भेजता है उसीसे तुम होशियार बनकर दिन बिताते हो। हकूमत चलाकर उसे बिगाड़ दो तो फिर क्या करोगे?"

मात्तुक्कुट्टि घुटनों के बीच में सिर छिपाये झुका हुआ बैठा है। मुख उठाया नहीं। कुंयेनाच्चन आंखें खोले; मुंह आधा खोले यों लेटे हैं मानों ये सारी बातें समझ में नहीं आ रही हैं। देहली पर खड़ी दीनाम्मा नाखून खुरचती किसी अज्ञात दिशा में देख रही थी।

"पिताजी।"

"एं।"

"क्या मैंने सच नहीं कहा ?"

"मैं उसे मान नहीं पाता"

"सो क्यों ?"

मात्तुक्कुट्टि बोला—

"भैया के इस प्रश्न का मतलब कुछ नहीं। भैया को वही ठीक लगे तो करो।"

कुंयेनाच्चन ने कुछ नहीं कहा। दीनाम्मा ने भी। वे चुपचाप हार मान रहे थे।

सात

शादी की व्यस्तता छायी है। पर कोई भी बहुत खुश नजर नहीं आता। कोई हर्षविभोर है तो सिसिली मुन्नी ही। उसे दो-तीन नये साथी मिले हैं। राजन के तीसरे मामा की बेटी सूसन, एल्लुपरंप की एलुक्कुट्टी की बेटी कोच्चुमोल, कुंयप्पि का बेटा अजयन। चारों मिलकर पंदाल में, अहातें में, घर के भीतर—हर जगह दौड़ लगाते फिरे। शादी के इंतजाम के लिए कुंयप्पि की मां तथा कीवरीत और कुंयुचेरुक्कन की पत्नियां भी आयी हैं। चारों घरों की दूसरी औरतें आती-जाती रही हैं। आज मंगल है। कल बुधवार और परसों सवेरे शादी। बुधवार शाम को निमंत्रित लोगों का जलपान होगा। शादी में लड़की की तरफ से कम से कम पचास आदमी होंगे। उन्हें दावत देनी होगी। मंगनी और चिट्ठियों की अदली-बदली के लिए दो मोटरों में ग्यारह आदमी गए थे। धर्मप्रदेश के पादरी, घर से कीवरीत, फिलिप्पोस, कुंयप्पि और कोच्चुकुट्टि। धर्मप्रदेश के और छह आदमी। कार्तिकप्पल्लि के फादर को शादी का निमंत्रण नहीं दिया गया। कुंयुचेरुक्कन ने पूरे जोर से इसका विरोध किया। मगर और लोगों ने इसकी परवाह नहीं की।

मंगनी के दिन भी खलबली होने वाली थी, कीवरीत ने ही शुरू किया—

"शरीफ घर का लड़का है। सरकारी वेतन पाता है। यह न समझना कि लड़कियां न मिलने से इधर आये हैं।"

"यहां भी शराफत की कमी नहीं है। पूछताछ कर लेना।"

"पूछ लिया।"

"तो क्या खबर मिली ?"

"कुछ नहीं। हमारा मतलब सिर्फ लड़की से है।"

अब कुंयप्पि बीच में पड़ा—

"काहे को बेमतलब बातें कहते हैं ? हम जिस बात के लिए आये उसे तय कर जायेंगे।"

"गोल-मटोल बातें करना छोड़ो। अगर दिल में किसी तरह का एतराज है तो छोड़ दो। हमें कोई जिद नहीं।"

"इसकी तरकीब तो पहले से कर ली !"

"कैसी तरकीब ?"

कानाफूसी शुरू हुई। इधर-उधर लोग धीरे-धीरे एक दूसरे से बात करने लगे। बहस छिड़ गयी। पुरोहित जी के अनुरंजन-प्रयत्न से मामला ज़्यादा नहीं बिगड़ा। चिट्ठी ली दी गयी। जलपान और भोजन के बाद लौटे······

पूरबी आंगन में पंदाल बना है। फिलिप्योस के घर से लाए सेटी-कुरसी वगैरह पंदाल में सजे हैं। कुयेनाच्चन आराम-कुर्सी पर लेटे हैं। दक्खिनी तरफ बने ओसारे में औरतें दावत की तैयारी में लगी हैं। भंडारे की कुंजी दीनाम्मा के ही हाथ में है। सब देखती-भालती सुनती-बताती फिरती है !

"सिसिली मुन्नी, कहा न कि ऊधम न मचाना। कटहल के पेड़ के नीचे जाकर खेलती रहो—जाओ।"

"सौंफ कहां है दीनाम्मा ?"

"अभी लाई चाची—वाह ! अंपाट घर की मौसी खड़ी ही हैं ? बैठिये न ?"

"री, मुल्लत्तरा घर से करछुली मंगायी ?"

"आदमी गया है ?"

मात्तुक्कुट्टि यों ही ऊपर-ऊपर से मस्त दीखता है। किसी बात में उसका जी नहीं लगता। मंगनी के बाद उसने पिताजी या स्त्री से दिल खोलकर बातचीत तक

नहीं की है। बेटा और बाप एक दूसरे के अभिमुख होकर बोले नहीं। बड़े भाई का प्रस्ताव मान तो लिया। पर बाद में लगा कि वह पराजय की स्वीकृति थी। बेटे के भेजे हुए पैसे का खयाल करके भी इस लाचारी में पड़ना नहीं चाहिए था। उसकी मां के मरने पर दूसरी शादी जरूर की। फिर भी उससे प्रेम जरा भी कम नहीं हुआ। बड़ी तकलीफ झेलकर कर्जा लेकर पढ़ाया था। फिर भी एन मौके पर उसने उसे ठुकराया। सो बात सोचने पर दिल रोता है। दुःख और लाचारी सब मिलकर पत्नी के प्रति क्रोध का रूप धारण करते हैं।

"पिताजी।"

"एं।"

"कंजि या काफी—कुछ चाहिए तो कहियेगा।"

"अभी नहीं। लड़का कहां है।"

"राजन ? नैहर गया है। अभी नहीं आया।"

"क्या ऐन घड़ी में वहां जाकर ले आना पड़ेगा ?"

दीनाम्मा ने कोई जवाब नहीं दिया। शादी की बातें जब से चलीं तब से राजन ज्यादातर वक्त अपनी मां के घर पर ही बिताता था। जिस दिन नौकरी की जगह से घर आया उस दिन से दीनाम्मा चाची ही पीछे रहती और पूछती—ठंडा पानी चाहिए कि गरम पानी, चाय पिओगे या काफी। अब वह चाची उसकी कोई नहीं है। आखिर वह औरत उसकी कोई नहीं। जब उसकी उम्र बारह-तेरह साल की थी तब पिता कहीं से दूसरी स्त्री के रूप में इस औरत को ले आये थे। उसके बाद घर पर ही जो घनिष्ठता बढ़ी······बस वही।"

सारी आफत की जड़ ब्याह का यह प्रस्ताव है। अपने आपको सांत्वना देनी पड़ेगी कि परमेश्वर की इच्छा है। उसके लिए प्रभु ने इस बहू को सजाया है। प्रभु की इच्छा का खंडन करने वाले हम कौन ? अय्यूब के ग्रंथ में लिखा है कि मेरा पांव तूने बंधन में जकड़ दिया है। मेरी गति का पूरा ब्योरा तूने लिख रखा है। मेरे पदचिह्नों के चारों ओर तूने लकीरें खींची हैं। स्त्री के कोख से जन्मा मानव अल्पायु और दुःखी होता है।"

पेट्रोमाक्स आ गया। अवरान लाया था। उसके साथ कीवरीत का बेटा अच्चनकुंयु, कुंयुचेरुक्कन का बेटा सण्णि और फिलिप्पोस का पुत्र सांक्कुट्टि आये।

सण्णि ने पूछा—

"राजन भैया कहां है, दादाजी ?"

"वह यहां नहीं है।"

"कहां गये !"

"मुझे क्या मालूम ? तुम्हारा बाप कहां है।"

"बछड़ा काटने की जगह पर है।"

"क्या ?"

"बछड़े को मारने की जगह पर खड़े हैं।"

"हां, पंद्रह बीस मुर्गे भी हैं। मेहमानों को मुर्गा और बैल दोनों खिलायेंगे।"

"हूं।"

"मेरी शादी के दिन तीस बतख और बीस मुर्गे थे। बछड़े को नहीं मारा था। उन दिनों मुर्गे का भाव कितना था ? सिर्फ दुअन्नी !"

"बस !"

"हां ! मैंने ही मना किया था कि बछड़े नहीं चाहिए। उन दिनों किरियान काका ही घर के बुजुर्ग थे। मर गये। बड़े कानूनदां थे। शादी हो या मातम, फौरन पहुंचते और हुक्म जारी कर देते। 'चावल इतना लेना—बछड़ों की गिनती यह होना' आदि कहने लगे। मैं बोला—काकाजी कष्ट क्यों उठावें। ऐन वक्त आ जाइये। तिस पर उन्होंने कहा—"क्या मैं पराया हूं, जो सिर्फ खाने के वक्त पर आऊं वह तो और कोई होगा।" तो ठीक है काकाजी फिर बुजुर्ग नहीं आये। कहीं भी नहीं गये। ज़्यादा दिन दुनियां में रहे भी नहीं।"......

चार वृद्ध बुजुर्ग पंदाल में आये। सण्णि और साथी चले गये।

"क्या ? आंगन पर पहुंच गए ?"

ध्यान से देखा तो पहचान सके। कोच्चुपाप्पी। और ? कुंयुम्मन, पेण्णुक्करा वाले साला, कोलाम्पि मत्तायि।

"अब रास्ते पर उतरेंगे।"

"आगे सफर !"

"वक्त हो गया ?"

"हां, हां सांझ हो चुकी। अब बहुत हुआ तो आधी घड़ी।"

वृद्ध लोग हंस पड़े।

"सच है, पाव या आधी घड़ी शेष है।"

"बैठिए······अरे बच्चो।"

"क्या है दादजी ?"

"पानदान ले आ रे।"

पानदान आ गया। मत्तायि ने पानदान अपने पास खींच लिया और आराम से पान बनाने लगे। मत्तायिजी के लिये भोजन से अधिक महत्त्व पान का है। पान मुंह में रखे ही सोते। पहले भैंस का व्यापार करते थे। आलप्पुझा जाकर भैंसों को कम कीमत पर ले आते। खिला-पिलाकर गाभिन भैंसों को अच्छे दाम पर बेचते। कभी-कभी सौ-दो-सौ रुपये पाते थे, अब शरीर ने जबाब दे दिया है······दूसरी पत्नी की छत्रछाया में गुजारा करते हैं।

कोच्चुपाप्पि ने पूछा—

"शादी की तैयारी कहां तक हो गयी ?"

"क्या ?"

"शादी की तैयारी कहां तक बढ़ी है ? क्या तुम्हारे कान नहीं हैं ?"

ताड़ी की बदबू आयी। कुंयुम्मन चारों में सबसे वृद्ध हैं। पचासी के होंगे। पर अब भी सेहत अच्छी है। मसखरे हैं। शाम को थोड़ा सा पी लेते हैं। इसके बाद सिर पर अंगोछे की पगड़ी बांधे दूकान के सामने से घर तक देहाती गीत गाते चलते हैं।

"हम नुक्कड़ पर खड़े थे तो कुंयुम्मन जी पश्चिम से गाते आ रहे थे। तब सब ने मिलकर तय किया कि कुंयेनाच्चन जी से मिलेंगे। शादी है न !"

दबी प्रकृति के हैं साला साहब। शांतिवादी। कहीं कुछ बहस-झगड़ा हुआ तो समझौता इन्हीं के द्वारा होता है। साला साहब, जो पूरे गांव के साले ठहरे।

साला बोले—

"मेरे बड़े भाई की एक लड़की का ब्याह पुत्तनाट्टुकरा में हुआ है। इस घर की बहू और उसकी मां आदि को जानती है।"

"जानती है ?"

"हां हां, उनका भी घर गिरजे के नजदीक है।"

"कैसे हैं ?"

"उसने कहा कि बड़े आस्तिक हैं।"

"तो लड़की विनीत होगी।"

"हमें तो वही चाहिये।"

जानता था कि अफवाह सच है या झूठ। मगर अब गड़े मुर्दे उखाड़ना गलत है। शक नहीं होना चाहिये। कितने ही घनिष्ठ क्यों न हों, हमें ऐसी बातें सावधानी से कहनी चाहिये। वरना तूफान में पड़ी आग की बात हो जायेगी······

"कुंयेना ने सुना ?"

"क्या······?"

"मुल्लत्तरा के छोटे सरकार मर गये।"

"छोटे सरकार······"

"मर गये।"

"कब ?"

"आज सुबह को तार आया। वेल्लूर के अस्पताल में थे। वहीं मर गये।"

"दिनों से बीमार थे।"

"नासूर था······"

"नहीं, कंठमाला थी।"

"दोनों एक ही हैं।"

"अच्छे जवान थे। करीब पैंतालीस के ही थे। बड़े सरकार के देहांत के बाद ये ही सारी गृहस्थी संभालते थे।"

"बीमारी अच्छे-बुरे का फरक नहीं मानती। पहले अच्छे लोगों को निगल लेती है।"

"मात्तुक्कुट्टि कहां है ?"

"यहीं था। भीतर कहीं होगा।"

अब दो औरतें आ गयीं। वृद्ध लोग उठें। कुंयुम्मन बोला—

"हम चलते हैं। बेकार क्यों कष्ट दें ? अगर कोई युवक होते तो कम से कम कुछ न कुछ काम कर देते।"

दीनाम्मा पंदाल में आयी। बोली—

"थोड़ी सी काफी पीकर जाइएगा, दादाजी।"

"नहीं, बेवक्त काफी नहीं पीते।"

कोलांपि बोला—

"कल आयेंगे।"

"हम चलते हैं, कुयेनाच्चन।"

"अच्छा!"

दोनों औरतें कुयेनाच्चन के पास आयीं।

"बाबूजी इसे नहीं पहचानते?"

कुयेनाच्चन ने सिर हिलाकर सूचित किया कि "नहीं।"

"राजन बेटे की मौसी है।"

"पत्तनंतिट्टा में ब्याही हुई।"

"हां, यह बड़ी ननद।"

"कोच्चुकुट्टि की औरत?"

"हां।"

"अच्छा, भीतर जाओ।"

"बाबूजी की तबीयत कैसी है? खास कष्ट नहीं है न?"

"चलता है।"

औरतें चली गयीं। खास कोई कष्ट तो नहीं। कुछ न कुछ पूछना भी है न? सो एक सवाल पूछा……।

"पिताजी!"

"कौन?"

"मैं हूं, कुयेचेरुक्कन!"

"क्या है, रे?"

"पिताजी ने काफी, कंजी कुछ पीली!"

"काफी पी चुका।"

"शादी का न्योता क्या सबको दिया?"

"और क्या? दिया होगा!"

"क्या कार्तिकप्पल्लि के फादर से कहा?"

"नहीं।"

"सो क्यों?"

"सो क्यों? कौन जाने?"

"लो, यही मुझे अखरता है। बुजुर्गों से पूछता हूं तो कहते हैं कि उन्हें नहीं मालूम। लड़के के पिता से पूछूं तो, वह बोले कि मुझे पता नहीं। आखिर जिम्मा

किसका है ? परिवार के एक वैदिक को शादी का न्योता न देने में कोई तुक नहीं है। हर भाई की लड़कियों के ब्याह हैं वे आये और चालीस-पचास रुपये की भेंट भी दी। मेरी दोनों लड़कियों की शादी में आये······"

"तो क्या हुआ ? भैया के लड़कों की शादी में बुला लीजिए।"

कुंयुचेरुक्कन ने मुड़कर देखा। फिलिप्योस है। जरा रुककर सोच लिया। उससे बातें करते वक्त सावधान रहना है—

"तो क्या सब अलग-अलग हैं ?"

"तो फिर क्या सब एक हैं ?"

"क्या है पिताजी ?"

"थके पड़े पिताजी से क्या चाहते हो ? जब तक वे जिंदा हैं तब तक अलग-अलग का ख्याल मेरे मन में नहीं रहेगा। मेरे बड़े भैया भी नहीं रखेंगे।"

"काहे को यह राम कहानी सुनाते हो ? सौ बार यह सुन चुके हैं। लोगों से कुछ सुन सकते हो ? सब कुछ जानते हुए कुंयुचेरुक्कन भैया काहे को उलझन में डालते हो ?"

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"बस है रे ! जाओ ! जाकर अपना-अपना काम संभालो।"

"जा रहा हूं। मगर, अच्चन को न्योता न दें, तो शादी के पूरी होने तक मैं इस अहाते में कदम न रखूंगा। न पानी पिऊंगा।"

अब मात्तुकुट्टि आ पहुंचा।

"कदम रखना न रखना अपनी-अपनी पसंद की बात है। एक नींद से रात खतम थोड़े ही होती है। यह भी खूब रहा।"

बहस बढ़ जाती ! मगर पुरोहितजी और सहायक आ गये।

"मात्तुक्कुट्टि ने कहा—"सवेरे खोजा तो पुरोहितजी वहां नहीं थे।"

"हां, कायंकुलम तक गया था।····· तो शादी की तैयारी कैसी है ?"

"ओह ! करना क्या है ? कुछ लोगों के लिए दावत तैयार करनी है !"

सहायक ने प्रश्न किया—

"औ······औ······और कुछ नहीं ?"

"और······लड़के को लड़की के गले पर मंगलसूत्र पहनाना है।"

"वाह ! ······वैसा बो······बो—बोलो।"

सब हंसे। पुरोहितजी भी उनकी हंसी में शामिल ए

"कुंयेनाच्चन क्यों चुपचाप लेटे हैं?"

"क्या है?"

"हमारी बातें नहीं सुनीं?"

"सुन नहीं पाया।"

"शादी की बात कह रहे थे। कल आयेंगे। हालचाल जानने के लिए थोड़ा आ गये।"

पुरोहित जी और सहायक चले गये। गोश्त काटने चार-पांच जवान लोग पंदाल में आये। कड़ाही में नारियल लिये चार-पांच लोग और आये। नारियल कसने लगे। इनकी हंसी-मजाक से पंदाल गूंज उठा। जब कुछ बताते हुए जोर से हंस उठते थे तब कुंयेनाच्चन पूछते—"क्या-क्या?"

जवाब मिलता—"कुछ नहीं, कुछ नहीं दादाजी।"

फिर धीमी आवाज में कहते—"बुढऊ क्या चुप लेटे नहीं रह सकते?"

नौ बजे फिलिप्योस की पत्नी अन्नाम्मा ने आकर आवाज दी—"बाबूजी!"

"हूं।"

"आइये। खाना खाकर पश्चिमी बरामदे में सोयेंगे। खटिया वहां बिछायी है।"

"यहीं सोऊंगा बिटिया!"

"इस रोशनी में नींद कहां से आयेगी? आइये।"

उठे। अन्नाम्मा हाथ का सहारा देकर उन्हें धीरे ले चली और पश्चिमी बरामदे की खटिया पर बिठाया। उसके बाद थाली में चावल परोस लायी······

"तुम कब आयी?"

"थोड़ी देर हो गयी।"

"क्या तुम्हारी बेटियों में से कोई आयी है?"

"रोसाम्मा आयी है।"

"बड़ी के तीन बच्चे हैं न?"

"हां, चिट्ठी आयी थी कि कलकत्ते से पति और बच्चों के साथ इस महीने में आ रही है, मगर अभी नहीं आयी।"

"शौहर के साथ तेरा झगड़ा क्या खतम हो गया?"

"क्या है बेटी ?"

"सो तो इस दुनिया में खतम नहीं होगा।"

"मसीह ने कहा है कि साठ-सत्तर दफे क्षमा करना चाहिए।"

"सात सौ बार माफ किया। अब मुमकिन नहीं, पिताजी। मेरे माफ करने, न करने से उनका कुछ बनता बिगड़ता नहीं। रही मसीह के माफ करने की बात। मालूम पड़ता है, अब उन्हें उसका भी भय नहीं रहा।"

"वह औरत चली गयी ?"

"चली गयी। सुना कि अब उधर जाकर मिलते हैं।"

"अपने बराबर बेटे। दो-तीन बच्चों वाली बेटियां। फिर भी सोच रहा है कि नौजवान है।" कुंयेनाच्चन ने कहा।

कह तो दिया पर तुरंत सूझा कि सरासर भूल हो गयी। मानो अचानक किसी कांटे पर पांव पड़ा······

"हम भी दगाबाज हैं न ?······"

"फा।"

"जाऊं पिताजी। सब औरतें भीतर कुछ न कुछ काम कर रही हैं। सिर्फ मैं यहां बैठी रहूं। यह क्या ठीक है ?"

"जाओ।"

"सो जाइये। अगर न सोवें तो बड़ी थकावट महसूस होगी।"

"हूं।"

लेट गये। पंदाल की रोशनी छन-छनकर आती है। जमीन पर चटाई बिछी है। चार-पांच बच्चे चटाइयों पर सुलाये गये हैं। खटिया के नीचे कड़ाही, करछुली, हांडी सब कहीं से ला रखे हैं।

नींद नहीं आती। दिन के वक्त सो जाने पर तो रात को कभी एक झपकी आयी तो गनीमत है······

सावन का महीना था। मौसमी बारिश के बाद नदी-नालों में बाढ़ सी आयी है। बारिश नहीं। दो बड़े और मोटे-तगड़े बैलों को लेकर पंपा नदी घुसकर पार की थी। हाट से आ रहा था। एक चिकना दूसरा बुंदकी वाला। दोहरे रस्से। घाट पर आये तो बाजगा दूसरे किनारे था। उसका इंतजार करने का धीरज नहीं रहा। बैलों के रस्से थामे हुए घाट की नाव पर चढ़ गया। नाव लोगों से लदी थी। नदी

के बीच में पहुंचने पर दोंनो बैल नाव को खींचते हुए बहाव की तरफ तैरने लगे। नकेल पकड़कर काबू में लाने की कोशिश की। पर बैल नहीं रुक रहे थे। नाव दूर नीचे की तरफ बह चली। यात्रियों का होहल्ला मचा। बैलों की रस्सी छोड़ो। कैसे छोड़ें ? नदी में कूद पड़ा और तैरता गया। उंगलियों को चीरती धार और ठंडक। किसी न किसी तरह किनारे लगा। कहां ? घाट से दो-तीन मील नीचे। आज याद आते-आते डर लगता है। कपड़े निचोड़कर पहन लिये। बिलकुल नयी जगह थी। किसी से पूछा तो एक गली दिखाई दी। उधर से चला। लाल रंग की मिट्टी थी। चारों तरफ छाये काजू के पेड़। छोटे टीले और झाड़······

चलता रहा। प्रधान पथ पर पहुंचने के लिये छह-सात मील चलना था। सांझ होने में अब ज्यादा देर नही थी। क्या करता ? सांझ होते-होते एक घर के फाटक पर पहुंचा। खपरैल वाला अच्छा घर था ! बाड़ा था। आगन में बड़ा कटहल का पेड़ भी। आवाज दी—"कोई है ?"

कोई जवाब नहीं !

हिम्मत बांधकर बैलों को कटहल के पेड़ पर बांध दिया। अभी एक स्त्री सीढ़ियां चढ़ती आयी। नहाकर आ रही थी। बालटी में धुले कपड़े। भीगा गमछा ओढ़ लिया था। करीब पैंतीस की होगी। नहीं तो अड़तीस की—जरूर चालीस से कम थी। गुलाबी गाल ! काले-लंबे केश टखनों से लिपटे थे। स्त्री थोड़ी देर उसकी तरफ देखती रही। वह भी उसे देखता रहा······

"कौन है ? क्या चाहिये ?"

बात बतायी। रात को सोना है। बैलों को रात भर के लिये बांध देना है।

"बरामदे पर बैठ जाओ।"

"क्या घर के मालिक नहीं हैं ?"

कुछ नहीं कहा। भीतर गयी। धुले कपड़े सुखाने डालने के बाद कपड़े बदलकर आ गयी।

बैल को बाड़े में बांधे। पास ही फूस का ढ़ेर है। बैलों को बांधा और फूस की गठरी उनके सामने ढाल दी। लौटा तो मेज पर एक गिलास में काफी थी।

बरामदे पर और एक औरत भी थी। उन्होंने पूछा—

"क्या यही पेण्णम्मा का बड़ा भाई है ?"

"हां, मामी। भैया दिनों से बाहर थे।"

"अच्छा। हाट जाकर लौटते वक्त दहन की याद आयी न—यही गनीमत है। कितने बच्चे हैं ?"

"छह ।"

"लड़कियां कितनी ? लड़के कितने ?"

"पांच लड़के और एक लड़की ।"

"छोटे भाई को मैं जानती हूं। यहीं आते देखा है ।"

"हां।"

"कपड़े की दूकान चलाता है न ?"

पसीने से तर हो गया। यह क्या मायाजाल है ?

"ओह ! भैया कभी किसी काम पर डटे रहनें के आदी नहीं हैं। अब पहाड़ों पर थोड़ी जमीन सरकार से मिली है । वहां खेती करने गये हैं ।"

बच गया ।

"जाऊं पेण्णम्मा ?"

"अंधेरा होने के पहले घर पहुंचिये ।"

वे गयीं ।

"क्या नहाना नहीं है ?"

"एं।"

मुस्कुराहट। मानो, चांद निकल आ रहा हो। तब खुद पैंतालीस का था। उम्र कम ही दीखती। सबसे बड़े ने शादी की थी। उसके बच्चे थे ? याद नहीं। पर अलग रहता था······

"झूठ क्यों बोली ?"

हंस पड़ी।

"कैसा झूठ ? सिर्फ भाई ही बनाया न ?"

"यह भी कोई गुनाह है ?"

मन में कहा—गुनाह नहीं। पर तुम्हारी दशा तो मूर्तिमान प्रथम पाप जैसी है।

"पानी गरम कर रखा है। नहाकर आइये।"

स्नान कर आया और दोनों बातें करते रहे। पति किसी बागान में मिस्त्री है। महीने में एक बार आता है। बच्चे नहीं हैं।

चावल परोसा। घूम की दावत है, मानो समझ-बूझकर तैयार की है। हर चीज प्यार से आग्रह से खिलायी। सब सपना-सा था। दिनों के बिछोह के बाद फिर से मिलने का सा अनुभव हो रहा था। भोजन के बाद भी बातचीत जारी थी। मन की बात नहीं निकलती। जो बात कहते हैं उस पर दिमाग नहीं सोचता। कुल मिलाकर एक तरह की बेचैनी-सी थी। खतरे का डर······

काफी रात बीती तो भीतरी कमरे में बिस्तर लगा दिया।

"अब सो जाइए।"

एक चटाई बरामदे में बिछा दें बस।

"ठंड! कहां की ठंड! भीतर गरमी है। पसीना! हांफ रहा है! इतनी लंबी यात्रा में कभी ऐसा महसूस नहीं हुआ है। न देखा भी है।······"

दो व्यक्तियों के लेटने के लिए तैयार बेल-बूटों से सजी खाट। मोटा बिस्तर! मुलायम और रंगीन चादर······

जैसा कि सलोमोन ने गाया था—हे प्रभु कुमारी! तेरे पांव क्या ही सुंदर हैं। तेरी जांघों की गोलाई ऐसे गहनों के समान है जिसको किसी निपुण कारीगर ने रचा हो। तेरा पेट गेहूं के ढेर के समान है जिसके चहुं ओर सोसन फूल हों। तेरे दोनों स्तन मृगनी के दो जुड़वे बच्चों के समान हैं। तेरा गला हाथीदांत का गुम्मट है। तेरी आंखें हेशबोन के उन कुंडों के समान हैं जो बतन्नीम के फाटक के पास हैं। तेरी नाक लोबानोन के गुम्मट के तुल्य है जिसका मुख दमिश्क की ओर है।

हे प्रिये, प्रेमभोग में तू कितनी सुंदरी है। तेरा डीलडौल खजूर के समान शानदार है और तेरे बाल ताड़ के गुच्छों के सदृश हैं।

नब्बे साल की अवस्था में सोचने पर भी नशा चढ़ता है।

यरूसालेम की बेटी की तरह उषःकाल में ठंड बढ़ने पर छाती की गरमी से तुम्हारे दिल ने कहा होगा—

अपना चोगा मैंने उतार दिया है।

वह फिर से कैसे पहनूं?

पांवों को धोया है।

उन्हें कैसे गंदा करूं।

दिन के निकलने के पहले ही उठी। काली काफी तैयार कर दी। एक मामी

को धोखा दिया। अब किसी की नजर में पड़ने के पहले जाओ। चूम लिया।

"पेण्णम्मा को कुछ दे नहीं सका।"

"वाह ! बहुत अच्छी बात कही। अभी जो दिया सो ? आज तक मैंने यह नहीं जाना था, नहीं भोगा था—"

गले में बाहें डालकर बच्चों की तरह रो उठी।

शाम तक घर पहुंचा। घर पर लोग छाती पीटते रो रहे थे। सुना था कि पानी में डूबकर मर गया।

लोग अलग-अलग दिशा में खोजने चले थे।

शुरूआत इसी तरह हुई। सफर में प्यास लगी थी। पहरेदार से रहित अहाते में घुसकर एक डाब तोड़ लिया था। उसे उसी वक्त भूलना चाहिए था। मगर भूल नहीं सका। फिर से देखने की इच्छा हुई। कई बहाने बनाये। तिजोरी का वजन कम होता गया। स्वास्थ्य भी गिरता गया।

एकाध मास बाद एक दिन गया तो प्रसन्नता भरे संकोच से कहा—"जिसके बारे में सोचा था वह हो गया है।"

"क्या ?"

"डरने की कोई बात नहीं। आदमी इस बीच दो-तीन बार आये थे।"

"ओह !"

दिल हलका हुआ। कुछ दिन बीते तो दिन के वक्त पहुंचने की मनाही हो गयी। पड़ोसियों को शक होने लगा। रात को चोर की तरह जाता, बड़े सवेरे चला आता।

एक दिन पत्नी कह रही थी—

"यह कहने वाले भी दगाबाज हैं—।"

"......"

"समझो कि एक नयी बहन मिली है।"

जिस बूढ़ी को वह मामी पुकारती थी उसी ने सब गड़बड़ कर दी। पूछती-ताछती आयी और कान भरके चली गयी।

बात वहीं खतम नहीं हुई। चुंबक की सी बात थी। मन पर काबू नहीं रहा। पागलपन-सा था। एक बार वहां जाते समय उसके "वे" वहां थे। उन्हीं के सामने पहुंचा। उस वक्त उसकी चतुराई का दूसरा पहलू देखा। उसने अनजान

सा पूछा कि "कौन है ? क्या चाहिए ?"

"चेंपझंयि घर कहां हैं ?"

उस समय वही नाम सूझता था ।

पति व पत्नी ने एक दूसरे की आंखों में गौर से देखा । कैसा चेंपझंयि घर ? उन्हें पहले ही संदेह था । किसी तरह बच गया । पर, घर लौट नहीं सका । नहीं लौट सका का मतलब है कि लौटने की बात नहीं सूझी । वहां से दो मील दक्खिन में एक मद्यशाला है । षाप में घुसकर खूब पिया । पीने पर हिम्मत मिली । यही नाड़ी की महिमा है । उसके हाथ से छीनकर भोगने की बात सूझी । लाचारी तो थी । फिर भी उस औरत ने पूछा कि कौन है ? मेरा बीज पेट में लिये चलती औरत । नीतिवचनों में जो कहा वह सही निकला । पराई स्त्री के ओठों से मधु टपकता है । उसकी बातें तेल से भी अधिक चिकनी हैं । परंतु उसका परिणाम नागदौना सा कड़ुआ और दो धारी तलवार सा पैना होता है ।

नशे में था कि पत्तियों के दरार मे देखा कि ताड़ीपाप के सामने की सड़क से चार-पांच आदमी दौड़े आ रहे हैं । पानवाले से पूछते हैं—

"एक दक्खिनी बैलवाला इधर से आया तो नहीं ?"

"एक तगड़ा ?"

"हां ।"

"षाप के भीतर है ।"

षाप के दरवाजे पर आये और देखा ।

"अरे ! बाहर आ ।"

छुरा हाथ में लिया । छुरा हमेशा साथ रहता । पान वाले ने कहा—"बाहर जाकर मिलो ।"

पेट में नाड़ी जरूर है । फिर भी डर लगा । नयी अनजान जगह । कमर कसके दुश्मन । कहीं फंसा तो नहीं जायेंगे ? मगर डर ज़ाहिर होने नहीं दिया ।

"हूं ? बात क्या है ?"

जवाब में एक थप्पड़ मिला । उसे रोका । छुरा खोला । छुरा छीनने की कोशिश जिसने की उसका हाथ चीर दिया । मगर दूसरे ने डंडे से छुरा हाथ से उछाल कर कहीं गिरा दिया । बाद की बातें याद नहीं । लिया-दिया । जब महसूस हुआ कि चित गिर जायेगा तब अंधेरे की आड़ में भाग गया । जान बची ।

सात-आठ दिन बाद सांझ को बाहर से घर लौटा तो बरामदे पर पेण्णम्मा बैठी थी। दरवाजे पर लोगों की भीड़ थी। पेण्णम्मा के पति ने लात मार-मारकर उसका गर्भ गिरा दिया था। अब घर से निकाल भी दिया। इस दुनिया में अब और कोई सहारा नहीं है। इसलिए बचाना चाहिये। खबरें जानकर बड़ा बेटा आया और जो कहा वह अब भी याद है—

"पिताजी पुत्रों को बहुत अच्छी दौलत विरासत में दे रहे हैं। बस।"

कोच्चुपाप्पी और मत्तायि ही उसे लेकर गये। उस दिन कहीं विश्राम कराके दूसरे दिन बिदा कर दिया। कुछ पैसे भी दिये। उसके बाद वह दिखायी नहीं पड़ी। आठ-दस साल बाद सुना कि वह मर गयी······

मुर्गे ने बाग दी।आधी रात का मुर्गा होगा। प्यास ! तरस ! ,बराहट······

"बेटी !"

कोई आहट नही। सब लोग कहीं सो तो नहीं गये ? पंदाल में दिये जल रहे हैं।

"दादाजी !"

"कौन ?"

"मैं हूं कुट्टिअम्मा।"

"तुम कब आयीं ?"

"थोड़ी देर हो गयी। मां को चक्कर आ गया था। इसलिए सबको खाना खिलाकर ही चल सकी।"

"प्यास लगी है, कंजी ही सही।"

कुट्टिअम्मा ओसारे में गयी। दीप जलाया। दिया लेकर लौटी।

"कंजी गरम नहीं हैं। काफी बना लाऊंगी।"

"क्या तुम जानती हो कि काफी शक्कर वगैरह कहां रखी है ?"

"देख लूंगी।"

कुट्टिअम्मा फिर से ओसारे में गयी। बरतनों के टकराने की आहट आयी। चूल्हे की आग की लाल लौ। वेचारी, एक बार आवाज देते ही जग गयी। दूल्हा लड़का उससे सात-आठ साल छोटा है। अपने ही परिवार में दस-बारह छोटी बहनों की शादियों में उसने भाग लिया होगा। उसका ऐब तो यही है कि वह फलना पेड़ है। कितना बड़ा स्वार्थ ! वह काम करके दस पैसे लाती है। इसलिए खैरियत है। दस दिन वह चल फिर न सके तो कौन उसे गरम पानी को भी पूछे ?

मान लो कि छोटे भाई के साथ रहती है। जब दिन बीतेंगे तब उसकी बेटी की उम्र की छोटी भाभी पति के कानों में मंत्र फूंकेगी—

एक बहन आ पड़ी है। न कोई पूछता है—न मौत के घाट ही उतरती है।

भाई कहता है—

"यों मत कहो। अगर यह बहन न होती तो हमारे घर के लोग सड़क के भिखारी बन जाते।"

"मैं कुछ नहीं कहती। क्या आपको याद है कि यहां गाढ़ी कमाई से कितने मुश्किल से निर्वाह होता है ?"

रुलाई शुरू होती है। पति महाशय का दिल दयार्द्र होता है। लड़कपन में होशियार था। पर अब शांत है। उसकी बात भी तो सही है। क्या बहिन अब किसी के साथ रह नहीं सकती ? मन में यह ख्याल जम जाने से बर्ताब में नफरत का रंग ! बातचीत में नफरत ! मां-बाप से बच्चे भी नफरत का सबक सीखते हैं। कई दिन बरदाश्त करके हार जाने पर वह एक छोटी बहिन के यहां जाने को तैयार होती है। उसकी कम उम्र की एक स्त्री को—जो कि अब दादी हो चुकी—रास्ते पर देखती है—

"कुट्टिअम्मा कहां चली ?"

"तंकम्मा के यहां जा रही हूं।"

"एकाध साल छोटे भाई के साथ थी न ?"

"हां।"

बातें कम करती है और थकावट बाहर प्रकट किये बिना ही चलती है। तुम्हारी साथिन के दो लड़के हजार-हजार रुपये वेतन पाते हैं। लेकिन उस साथिन की हमदर्दी से तुम्हारा क्या लाभ ?······

"दादाजी, काफी।"

"हूं।"

"देखिये कि गरम ज्यादा तो नहीं।"

उंगली से छूकर देखा।

"ठंडा करो।"

थोड़ा-थोड़ा कर ठंडा करके पिलायी। चाव से पिया। गरमी जब धीरे-धीरे पेट में पहुंचती है तब कुछ आराम मिलता है।

"तुम सोयी क्यों नहीं ?"

"मुझे बड़ी देर से ही नींद आती है।"

"मेरे बराबर ही तुम भी हो।"

"दादाजी की नींद उम्र के कारण बिगड़ी है। सुना है बुढ़ापे में नींद कम होती है।"

"बैठो। खाट पर बैठो।"

"पैर की मालिश करूं ?"

"करो।"

"पहले जब मैं छोटी लड़की थी तब दादाजी मालिश करने के लिये पैसे देते थे। इस पर दानिक्कुट्टि, जोणिक्कुट्टि और मैं झगडा करते। जीत मेरी ही होती।"

"दानि सीधा है! कालायि का जोणि बडा ऊधमी था। है न ?"

"वह तो लड़कपन की बात थी दादाजी। अब वह भी शांत है।"

"क्या तुम्हारे लिये और कोई प्रस्ताव आया ?"

"............"

"बोलो, बेटी।"

"हूं।"

"कहां से ?"

कुट्टिअम्मा बिना जवाब दिये मालिश करती रही।

"बोलती क्यों नहीं ?"

"प्रस्ताव की बात नहीं है दादाजी। मेरे साथ स्कूल में सिखाने वाले मास्टर हैं।"

"कौन? कहां के हैं ?"

"सिर्फ कहा कि ऐसी इच्छा है।"

"क्या कहा ?"

कुट्टिअम्मा उलझन में पड़ी। जैसा कि कहना नहीं चाहिये था।

"बिटिया।"

"क्या ?"

"बोलो री कि बात क्या है ?"

हिम्मत बांधकर बोली —

"तोटुपुझा के हैं। नाम है थॉमस। दुहाज है। मगर, बच्चे नहीं······"

"और"

"मां से मैंने कहा। मां मेरी तरफ देखती हुई रो पड़ी। उस सज्जन ने गोपालन नायर मास्टर के जरिये पिताजी के पास प्रस्ताव रखवाया। पिताजी ने उस मास्टर पर गालियों की बौछार कर दी।"

"तुम्हारे बाप के पास पैसे कहां? इसलिए?"

"पैसे की जरूरत नहीं। दहेज देनी नहीं है। शादी का खर्च मैं दूंगी।"

"तुम दोगी?"

"हां"

"किस सभा के हैं?"

"सो पूछा नहीं।"

कुंयेनाच्चन ने मन ही मन कहा—

'सभा' पूछने की क्या जरूरत है? घर, परिवार, उम्र, सभा सब देखकर अच्छा वर लाने का फर्ज पिता का था। उसने सो नहीं किया। अब जो इसे पसंद करके खुद आया है वही लायक है······

"मैंने एक बात तय की है, दादाजी!"

"एं!"

आंसू की दो गरम बूंदें कुंयेनाच्चन के पैरों पर टपक पड़ीं।

"बिटिया!"

"क्या?"

"रो रही हो?"

"अगर वे आकर बुलावें तो, मैं उनके साथ जाऊंगी दादाजी!"

"एं"

"············"

"उसकी ज़रूरत नहीं पड़ेगी बेटी। तुम्हारे पिता के आने पर मैं कहूंगा। रास्ता निकलेगा।"

"अभी तक जो रास्ता नहीं खुला वह आगे कहां से खुले? छोटी बहनें जब अपने पतियों के साथ आ जाती हैं तब मेरे सोने के लिये जगह नहीं रहती। फिर तो बकरी बांधने के छोटे दालान पर सोना पड़ता है। बारिश में फुहार का पानी

गिरता है। उन लोगों को यह ख्याल ही नहीं रहता कि वहां ऐसा कोई है।

कुट्टिअम्मा ने दादाजी के पैरों पर पड़ी आंसू की बूंद आंचल से पोंछी।

"जाओ। सो जाओ। अब दिन निकलने में देर नहीं है।"

हरी चादर से दादाजी को ओढ़ाकर कुट्टिअम्मा चली। फौरन लौट आयी और पूछा—

"दादाजी, काफी थोड़ी और पिलाऊं।"

"नहीं, तुम सो जाओ।"

वह तो गयी। फिर भी उसकी मूर्ति सामने है। उसकी बतायी बातें दिल में अटकी हैं। उसने कहा कि अगर बुलायेंगे तो जाऊंगी। सुनने वालों को लग सकता है कि बदतमीज लड़की है। मगर है लाचार। यही बात हमेशा होती आयी है। यहूदा की बहू तामार ने क्या किया? यहूदा का जेठ पुत्र 'पर' जब मर गया तब दूसरे पुत्र ओनान से यहूदा ने कहा—अपनी भौजाई के पास जा और उसके साथ देवर का धर्म पूरा करके अपने भाई के लिए संतान उत्पन्न कर। ओनान ने इसका पालन नहीं किया। यहोवा ने अप्रसन्न होकर उसे मार डाला। अब यहूदा ने तामार से कहा—जब तक मेरा पुत्र शेला सयाना न हो तब तक अपने पिता के घर में विधवा के जैसे बैठी रह। तामार अपने पिता के घर में जाकर रहने लगी। मगर शेला के सयाना होने के बाद भी यहूदा ने तामार को नहीं बुलवाया। उन दिनों यहूदा भेड़-बकरियों का ऊन कतराने के उत्सव के लिए तिम्ना को चला। तामार ने यह खबर सुनी। उसने अपना विधवापन का पहरावा उतारा और घूंघट डालकर अपने को ढांप लिया। और एनेम नगर के फाटक के पास जो निम्ना के मार्ग मे हैं, जा बैठी। जब यहूदा ने उसको देखा, उसने उसे वेश्या समझा। उसने नहीं पहचाना कि वह अपनी बहू है। अतएव उससे कहा, मुझे अपने पास आने दे। और वह कहने लगी कि यदि मैं तुझे अपने पास आने दूं तो तू मुझे क्या देगा। उसने कहा, मैं अपनी बकरियों में से एक अच्छा बच्चा तेरे पास भेज दूंगा। तब उसने कहा, भला उसके भेजने तक क्या तू हमारे पास कुछ रेहन रख जायगा? उसने पूछा, मैं तेरे पास क्या रेहन रख जाऊं? उसने कहा, अपनी मुहर, बाजूबंद और अपने हाथ की छड़ी। तब उसने उसको वे वस्तुएं दे दीं और उसके पास गया और वह उससे गर्भवती हुई। तब वह उठकर चली गयी और अपना घूंघट उतार के विधवापन का पहनावा फिर पहन लिया।

यहूदा ने रेहन की चीजें वापस लेने के लिए बकरी का बच्चा भिजवाया। मगर वह स्त्री न मिली। करीब तीन महीने बीते तो यहूदा ने कहा, उसको बाहर ले आओ कि जला डालूं। इस पर तामार ने सारा भेद प्रकट किया। तो यहूदा पछताये। उसने कहा कि तामार मुझसे कम दोषी है। तामार ने जुड़वें बच्चों को जन्म दिया। उनके नाम थे 'पेरेस' और 'जेरह'······

मन में यों बातें सोच रहा था कि आसमान में एक ज्योति दीख पड़ी। आकाश के द्वार खुले हैं। स्वयं के पदकों से जड़ा आकाश का गोपुर। गोपुर के द्वार पर द्वारपालक देवदूत गब्रियेल और मिखाएल। सुनहली सीढ़ियों पर पांव रखते-रखते धरती की तरफ उतर रहे हैं। सूर्य की ज्योति से रचित ऊर्ध्ववस्त्र। हिम-सा स्वच्छ धवल श्वेत केश! पास आ रहे है। मुस्कुरा रहे हैं। मानो पुराने दोस्त हों। मध्य आकाश में खड़े हो गये। पूछना चाहा कि आप कौन हैं। जीभ उठती नहीं। पर दिल का भाव मानो ताड़कर वे बोले—

"पहचाना नहीं ?"

संकोचपूर्वक बोला—"नहीं।"

"शलमोन, दाऊद का पुत्र ।"

अंगोछा कमर पर बांधे, हाथ मुंह पर रखे, विनीत खड़ा हो गया। ज्ञानियों के राजा।

"आते हो ? ले जायेंगे।"

"जी हुज़ूर।"

"क्या ?"

"पोते की शादी है।"

हंसते हैं। हंसी गूज उठी।

"शादियां आगे भी होंगी। क्या सब शादियों में तुम हाजिर हो सकोगे ?"

"जी !"

इस खुशी व दावत मे कुछ नहीं धरा है। जशन मनाने वाले घर पर जाने के बजाय मातम के घर जाना ही अच्छा है। वही सब लोगों का अंत है। चेहरा जब मुरझाया रहता है तब मन सुखी रहता है। ज्ञानियों का हृदय विलाप भवन में है और मूर्खों का हृदय संतोषभवन में······"

"दादाजी।"

"एं, एं !"

"सो रहे थे ?"

"हां, कुछ ऊंघता रहा।"

"दिन निकल चुका। थोड़ी काफी लाऊं ?"

"लाओ।"

रोशनी अभी आ रही है। अंधेरा और उजेला मिले हुए हैं। रोशनी का बढ़ता जाना-पहचाना जा सकता है।

कुट्टिअम्मा काफी लायी। पी ली। बच्चे और स्त्रियां पहले ही जग चुके। पंदाल में जो जवान गोश्त काट रहे थे वे अब गहरी नींद सो रहे हैं। दिन खुलने के दो घड़ी पहले ही वे लेटे होंगे।

जब धूप चढ़ी तब कुयेनाच्चन फिर से पंदाल में कुर्सी पर आ लेटे। भाई-बंधु और बिरादरी के लोग आने लगे। बड़ा शोरगुल मच रहा था। गिरजे का मेला सा। देखते ही लेटे रहे। स्वस्थ युवकों को काम करते देखने पर कुतूहल होता है। दौड़-धूप करने—कुछ न कुछ करने की इच्छा मन में उठती है। मगर जो उठ ही नहीं सकता उसके हौंसलों का मतलब क्या हो ?

दोपहर के बाद निमंत्रित अतिथिगण आने लगे। ज्यादातर अन्य धर्म वाले थे। जो कोई आते-कुशल समाचार पूछते। बीच में एक आवाज—

"अच्छा ! कुयेनामाप्पिला यहीं बैठे हैं ?"

शिवरामकुरुप। दो सप्ताह से मुलाकात नहीं हुई।

"आओ कुरुप जी।"

कुरुप बगल मे कुरसी पर बैठा।

"दिखाई नही देते।"

"एरनाकुलम तक जाना था। बहियां ठीक करनी थीं। दवा पहुंचाने का प्रबंध किया था। क्या मिली नही ?"

"मिली, मिली।"

"तबीयत ठीक ही है न ? आ तो नहीं सका, मगर मन यहीं था।

"सब ठीक हो रहे हैं।"

सवाल का जवाब नहीं था। फिर भी कुरुप ने उसके बाद कुछ नहीं पूछा। मौका भी तो देखना है। ब्याह की व्यस्तता के बीच कुशल पूछने के लिए किसके

पास फुरसत है ? सब व्यस्त हैं। मेहमानों की आवागमन। पंदाल की सजावट ! रसोइयों की तैयारियां······

कुंयप्पी कुरुप के पास आकर बोला—

"आइये ! काफी पियें।"

"हां, जाओ।"

"हां, हां, कोई एतराज नहीं !"

पझेकुलत्तिल रामकृष्णन, और पनच्चविला घर के वासुकुरुप का मानजा, श्रीधरनपिल्ला के साथ शिवरामकुरुप काफी पीने बैठा। वासुकुरुप से दुश्मनी थी। पर उसका मानजा राजन का दोस्त था। परोमने वालों में मुख्य अवरान था। वह बड़े सवेरे ही आ गया। अपने को सच्चा हितैषी सिद्ध किया। अच्छे रसोइये की तरह कमर पर अंगोछा बांधे दौड़-धूप कर रहा है। कुंयेनाच्चन पछताए कि इस अच्छे लड़के को कठोर शब्द सुनाए। बेचारे का यही कलंक है कि उसका बाप कसाई था। दावतारी के लिए नौकरों को बुलाने चले मालिक की उपमा में प्रभु ने जैसा कहा है—पहले वाले लोग पीछे रह जाते हैं, पिछड़वाले पहिले होंगे। राजा और सेनापति पल भर में गिर जाते हैं।

मंदबुद्धि मानव इसे नहीं समझता······

काफी पीने के बाद कुरुप एवं दोस्त बिदा लेकर चले गये। रात की दावत की तैयारी शुरू हुई।

"मात्तुक्कुट्टि !"

"क्या है पिताजी ?"

कुंयुचेरुक्कन नहीं आया ?"

मात्तुक्कुट्टि कुछ भी कहे बिना और किसी काम में लग गया।

"बेटी ! दीनाम्मा !"

कीवरीत की औरत कुंयुमरियाम्मा ने आकर पूछा—"पिताजी को क्या चाहिए दीनाम्मा भंडारे में है।"

"कल्लुविल्पा की वेटी और बच्चे क्या नहीं आये ?"

इस सवाल का जवाब फिलिप्योस ने दिया—

"आये न आये ! पिताजी को क्या चाहिए ? जो आना पसंद करते हैं आते हैं। क्या वे नहीं आये ? क्या ये नहीं आये······ ?

रात की दावत खतम हुई। बिना मांगे ही उपदेश—आदेश देने टीका-टिप्पणी करते, कुंयेनाच्चन कुर्सी पर बैठे रहे। घुप अंधेरा फैलने पर पश्चिमी बरामदे पर जाकर खटिया पर लेट गए। भोर होते-होते पलकों में झपकी आयी उस समय भी रसोइए काम कर रहे थे।

नौ बजे तक गिरजाघर जाने की तैयारियां हुई। बच्चे, औरतें सब ने पंदाल में बैठकर काफी पी। तीन बहनें, कुंयुमरिया, राजन की बड़ी मामी, एक चाची —इतनी स्त्रियां दूल्हे के साथ जाने के लिए तैयार हो गयीं। पुरोहित पादरी और सहायक आ गये।

"बैठिये, फादर।"

"दुलहिन और उसके घरवाले कब आ रहे हैं?"

"सवेरे निकलेंगे। ग्यारह बजे के पहले पहुंचेंगे।"

"राहुकल कब है?"

"बृहस्पत है न? दोपहर के बाद ही पड़ता है।"

"तो प्रार्थना करके निकलने का वक्त हो गया।"

"क्या गिरजे में उनके पहुंचने के बाद हमारा निकलना काफी नहीं है?"

"काफी है, तैयार रहेंगे।"

"हाथ धुलाइये। थोड़ा सा पानी पीयेंगे।"

"सिर्फ काफी ही चाहिये। क्या कुंयेनाच्चन गिरजाघर आ रहे हैं?"

"नहीं आ सकता, अच्चन!"

"ओह! पिताजी गिरजे में आकर खड़े नहीं रह सकते।"

"नहीं नहीं। सिर्फ पूछा था।"

बेबी राजन को पंदाल में ले आया। प्रार्थना के बाद सजी कुर्सी पर बिठाया। अच्चन ने कहा—

"अब दक्षिणा देने आशीर्वाद लेने का क्रम चले। पहले कुंयेनाच्चन के पास जाओ!"

"पिताजी।"

"एं।"

"दक्षिणा लीजिये।"

अवरान ने कुंयेनाच्चन के हाथ को सहारा देकर उठाया। राजन ने पान सुपारी

दादा के हाथ में दिया। वह लेकर उसे अपनी छाती से सटाकर खड़ा किया और सिर चूम लिया। सिर पर हाथ रखा, आंख के तारे आसमान की तरफ किये प्रार्थना की—

"हे ईशो! अपनी करुणा के अनुसार मुझपर अनुग्रह कर, अपनी बड़ी दया के अनुसार इसके अपराधों को मिटा दे। यह मेरे बीज से निकला छोटा सा अंकुर है। इसे तू आंधी और घोर बारिश से बचा। तेरे आदेश के अनुसार यह पसीने की रोटी खा सके। इसकी खोज में तेरी दी लड़की को लेकर निकलना चाहता है। वह इसकी बांहों की ताकत हो।

आंसू की एक बूंद राजन के सिर पर गिरी।

"हां, कुंयेनाच्चन बैठ जायं।"

औरों को भी दक्षिणा दी। अब सांकुट्टि ने साइकिल पर आकर सूचित किया—

"वे सब आ गये हैं। तीन मोटर हैं।"

"तो चलें।"

उसी समय दीनाम्मा बाहर आयी। भंडारे में थी। इसलिये नहाकर कपड़े बदलने में देर लगी।

"आज्ञा दीजिये चाचीजी।"

मां के दुलार से दीनाम्मा राजन से लिपटकर रो पड़ी।

"वाह! रोने का वक्त देखा!"

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"उसे हो आने दो बिटिया!"

खुशी की घड़ी तो है। फिर भी यह माताओं के लिये शंका और व्यग्रता की भी घड़ी है। यह एक मोड़ है। दुलार-पुचकारकर, साधना-तपस्या कर एक बच्चे को बालिग बना दिया। अब कहीं की एक छोकरी उस पर अपना हक जमाने के लिये आती है। आगे वे दोनों एक होंगे। उनके सोने का कमरा अलग। कमाई अलग। आगे क्या वह दुतकारी नहीं जायेगी? अंतिम घड़ी में क्या वह उसे बूंद भर पानी पिलायेगा?

दीनाम्मा और दूसरे लोग सबको फाटक पर से जाते हुए देखते खड़े रहे। काफी देर बाद गिरजे से घंटी की आवाज आयी।

रसोइयों में से किसी ने कहा—

"घंटी बज रही है। ब्याह के बंधन का प्रारंभ है। जल्दी करो। वे आधी घड़ी में यहां आ जायेंगे।"

कुंयेनाच्चन ने सोचा।

साथी और साथिन दूल्हा और दुल्हिन के अगल-बगल में होंगे। असल में दूल्हा तो ईश्वर है। सभा दुलहिन है।

तुमने उसे महत्त्व के वस्त्र पहनाये। लिखा है कि जल और आत्मा से ब्याह का निर्णय किया गया।

"कौन है ? चेरियान है न ?"

"क्या है भैया ?"

"सफेद कपड़े और ऊनी चादर बिछाओ। देखते क्यों खड़े हो ? वे अभी आ जायेंगे।"

अंगूठी पहनने का क्रम शुरू हुआ होगा। अंगूठी पर हाथ रखे "विशुद्ध सभा-संतानों की प्रसन्नता के लिए" वाला आशीर्वाद देते हुए पुरोहित जी दूल्हे के दायें हाथ की अनामा पर अंगूठी पहनाते हैं—स्त्रियो ! तुम पतियों को ईश्वर-सा मानो और उनकी आज्ञा का पालन करो। जैसे मसीह सभा का सिर और शरीर के रक्षक हैं वैसे ही पति-पत्नी का सिर है। सभा जैसे मसीह की आज्ञा के अधीन है वैसे ही पत्नी को हर बात में पति के अधीन रहना चाहिए······

"दीनाम्मा !"

"जी।"

"भंडार में सब ठीक है ?"

"पूवन केले शायद कम पड़ेंगे······।"

"तो ?"

"सण्णि को साइकिल देकर हाट भेजा है।"

"हां, वह लायेगा पिताजी।"

"क्या है रे ?"

"कुछ काफी पियेंगे ?"

"नहीं।"

"खाना खाने के समय का कुछ ठिकाना नहीं।"

"ठीक है।"

कुंयेनाच्चन ने सोचा—

"किरीट-सेवा होगी। दूल्हा सिर झुकाये खड़ा रहता है। स्वर्णहार का क्रूश बायें हाथ में लिये और दायां हाथ सिर पर रखे पुरोहितजी "क्लीलोबी देतु मोरोन" पारायण करते होंगे।

मंगलसूत्र बांधने के लिए दूल्हे को दूल्हिन के पीछे खड़ा कर देते हैं। गांठ ठीक पड़नी चाहिए। वरना पुरोहितजी दुबारा बंधवायेंगे। शरमिंदा होना पड़ेगा। विवाह का मंगलवस्त्र ओढ़ा देता है। उसके बाद दूल्हिन पर दूल्हे की बहिनों का ही हक होता है। वे उसे छूती हैं, संवारती हैं, मंगलवस्त्र ठीक कर देती हैं।

"यह हमने विशुद्ध पिताओं से पाया है। आदरणीय पूर्वजों ने हमें यह सौंप दिया है। पुत्रो! याद रखो कि अब तुम प्रभु के सामने, हमारे प्रभु ईसा मसीह की गद्दी जीवमेश और खलीबा के—स्वच्छ एवनगलियों और इस जनता के मध्य में हो। अब इस क्षण से लेकर तुम दोनों का दायित्व तुम्हीं को सौंपता हूं। मेरे और तुम्हारे बीच में ईश्वर मध्यवर्ती रहे। तुम जो कुछ नियमों के खिलाफ करो उसके विषय में मैं बेकसूर रहूंगा······"

"गुलाब जल छिड़कने को दो लड़कियां चाहिये।"

"एक कुंयप्पि की लड़की।"

"मैं भी छिड़कूंगी, पिताजी!"

"शाबाश। उनके आते समय दोनों यहीं दरवाजे पर खड़ी रहना।"

"नींबू, अगर-बत्ती, चंदन—सब ले रखो।"

अच्चनकुंयु गिरजाघर से पसीने से तर हो दौड़ आया।

"क्या है बेटा?"

"ब्याह की रस्में अभी पूरी होंगी।"

"तुम्हारे आते समय क्या चल रहा है?"

"राजन भैया और उस लड़की के हाथ मिला रहे थे।"

"अच्छा! ठीक है।"

कुंयेनाच्चन ने पूछा—

"क्या? क्या?"

"हाथ मिला चुके।"

"हां, अब एक ही उपदेश शेष है।"

"यह अपने लोगों को छोड़ पति से जोड़ी गयी है। इसलिये पति को इसे खुश रखना चाहिये। इस पर दया करनी चाहिये। उसे अपनी पत्नी को प्राणों से भी अधिक प्यार करना चाहिये। खुद भूखा रहने पर भी पत्नी को खिलाना चाहिये। खुद प्यासा रहने पर भी उसकी प्यास बुझानी चाहिए। इस लड़की को भी न्यायोचित ढंग से पति की सेवा करनी चाहिये······"

एक गाडी फाटक पर आयी। बच्चे फाटक की तरफ दौड़ पड़े। औरतों ने झांककर देखा—

"वे ही हैं।"

कुंयेनाच्चन कुरसी से उठे। देखा कि सहारा देने के लिये पास कोई है तो नहीं। सबके सब दूल्हिन को देखने दौड़े हैं। घड़ी भी नहीं दीख पड़ती। दुल्हिन के पक्ष-वालों का मुखिया कौन? सफेद दाढ़ी-मूंछ वाला या जरीदार दुपट्टे वाला है? जमीन ठोस नहीं लगती कि पैर जम जाय। पंदाल डांवाडोल हो रहा है।

"बच्चो!"

"······"

"पकड़ लो रे।"

कोई दौड़ा आया। तब तक कुंयेनाच्चन गिर पड़े।

आठ

रोशनी अभी आने लगी है। बड़े सवेरे जलायी लालटेन अब भी धुंधुआ रही है। राजन ने फिर से बक्सा खोलकर देखा। कहीं कुछ भूल तो नहीं गया! पे बुक, रेल वारंट; लीव सर्टिफिकेट—सब कुछ है। बक्सा बंद करके दरवाजे की तरफ देखा। बेबी अभी नहीं आया। कहा था कि उसके आने के बाद ही चलेंगे। बक्सा बिस्तर ले चलने के लिए चात्तन आंगन पर हाजिर है······

घड़ी देखी। साढ़े पांच बजा है। रेलगाड़ी छह बजकर चालीस मिनिट पर आती है।

दीनाम्मा बोली—"प्रार्थना करें बेटा! तब तक बेबी आयेगा।" कुंयेनाच्चन ने खाट पर लेटे-लेटे पूछा—

"मात्तुक्कुट्टि अभी नहीं आया ?"

"कह गये थे कि देर से ही सही, रात को ही जरूर पहुंच जायेंगे। उनका इंतजार करने पर राजन कैसे अब जा सकता है ?"

"हां, छोटी बहू ! ग्रंथ जरा पढ़ो।" भजनसंहिता।

शांतम्मा ने अपना मुख पोंछ लिया। चाहती थी कि छलछलायी आंखों और सूखे आंसुओं के गाल पर किसी की नजर न पड़े। रात को पल-भर पलकें झपकी तक नहीं।

"जो पन्ना मिला वही पढ़ो—फल विदित होगा।"

धर्मग्रंथ खोलने पर आंखें फिर छलछला आयीं यह प्रकट होने न दिया। और पढ़ा—

"हे यहोवा ईश्वर, मेरी रक्षा कर क्योंकि मैं तेरे ही शरण हूं। कभी किसी दिन मुझे लज्जित न होने दे। अपनी नीति के बल मुझे छुड़वा दे ! तू मेरी मजबूत चट्टान और मेरा रक्षा केंद्र बना रह ! ......"

अब वह आंसुओं को छिपा नहीं सकी। धर्मग्रंथ के पृष्ठों पर आंसू की एकाध बूंदें टपक पड़ीं। अक्षर स्पष्ट दीख नहीं रहे थे।

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"डरने की कोई बात नहीं। यहोवा साथ में है। तेरे हाथ में अपनी आत्मा को मैं सौंप देता हूं। ईश्वर यहोवा। तू ने मुझे अपना लिया है......"

"प्रार्थना करें पिताजी !"

प्रार्थना समाप्त होते-होते बेबी आ गया। बक्सा और बिस्तर चात्तन के हाथ स्टेशन भेजा।

"आज्ञा दीजिये दादाजी !"

"जाओ ! यहोवा सुरक्षित रखेंगे।"

"हो आऊं, चाची ?"

"हो आओ बेटा। पहुंचते ही चिट्ठी लिखना।"

शांतम्मा अब किवाड़ पकड़े खड़ी है। राजन नजदीक पहुंचा तो वह कमरे के भीतर कुछ खिसक गयी। दोनों ने एक दूसरे के चेहरे की तरफ देखा। एक दूसरे को गले लगाया। राजन ने उसके गीले गालों को चूम लिया। लगता था कि वह उस आलिंगन से छूटना नहीं चाहती थी।

सिसिली सो रही थी। दीनाम्मा ने उसे जगाकर कहा—राजन भैया जा रहा है, मुन्नी !"

"राजन भैया जाकर जल्दी आऊंगा, मुन्नी !"

दीनाम्मा ने कहा—"खत की बात न भूलना !"

"हूं।"

फाटक पार करते ही शांतम्मा की सिसकियां फट पड़ीं।

कुंयेनाच्चन बोले—"रो मत, बेटी !"

दीनाम्मा ने समझाया—

"छह महीने के बाद छुट्टी लेकर आयेगा न ? तब तक प्रर्थना करते हुए राह देखती रहना !"

कहना बड़ा आसान हैं। मगर मन जाने, तभी तो ! कहा था चाहे जंगल जायं चाहे रेगिस्तान, मुझे भी साथ ले चलें—अब मेरे लिये अकेले राजन भैया ही हैं—सिर्फ राजन भैया। विनती कर निवेदन किया था। सच भी तो है ! अब उसका और कौन है ? घर जाने पर वह मेहमान ही रहेगी। भाई बंधु-और पड़ोसी कहेंगे—"पनच्चिमूट से शांतम्मा गयी है। मेल-मुलाकाती लोग कुशल-समाचार के बाद पूछेंगे—"कब जा रही है ?" यहां आने पर राजन की पत्नी ! यह नाता उसे इस घर से बंधे रखता है। राजन ! आदमी की इच्छा पसंद आदि पहचानने का—नजदीक से कुछ समझने का मौका तक नहीं मिला ! नौ दिन और नौ रातें एक घड़ी की तरह बीत गयीं······

दीनाम्मा ने कहा—

"अब सो जाओ। आधी रात बीत गयी।"

"नींद नहीं आती।"

"क्या पूरी रात जागती रहेगी ?"

'आज ही की बात है।"

"कहा न कि रोना नहीं। सो जाओ।"

अपनी भुजाओं में लेकर छाती से कस लिया मानो यह बताना चाहती हो कि किसी भी तूफान और आग से तुम्हें बचाने की ताकत मेरी बांहों में है। फिर भी एक पलक तक झपकी नहीं आयी।

"शांतम्मा !"

"जी !"

"आओ ! थोड़ी काफी पिओ !"

"नहीं चाहिये।"

"सो क्यों ? मैंने कहा न ! दुःख मन में छिपाना चाहिये। औरत की किस्मत है—लो पिओ। एक गिलास पिताजी को भी दे आओ।"

अब प्रतिवाद नहीं किया। एक घूंट काफी पी। इसके बाद काफी का गिलास लेकर दादाजी के पास गयी।

"दादाजी।"

"एं।"

"काफी।"

कुंयेनाच्चन ने देखा कि आवाज छितराई हुई है। उठकर गिलास ले लिया और कहा—

"दुःख न करना बिटिया ! विवेकी स्त्री अपने पति का मुकुट है। वह विवेक से पति का घर बसाती है। जो सुंदर स्त्री विवेक नहीं रखती वह थुथुन में सोने की नत्थ पहिने हुए सुअर के समान है।"

"हां।"

"कहां।"

"नीतिवचन।"

"हां वही।"

"पूरा धर्मग्रंथ दो बार पढ़ा है, दादाजी ! संडे स्कूल में पढ़ाती थी।"

"अच्छा !"

"माताजी महिला समाज की कार्यदर्शी हैं। एक भी दिन शाम या सवेरे प्रार्थना भंग होने नहीं देती है।"

"क्या कार्तिकप्पल्लिवाले फादर तुम्हारे घर आते थे ?"

"कभी-कभी आते थे।"

"क्या फादर को तुमसे ममता थी ?"

"हां, मुझे बेटी ही पुकारते थे। फादर हमारे घर में कुछ दिन रहे हैं। मगर याद नहीं। मैं छोटी बच्ची थी।"

यही तो बात है। क्या सिर्फ रहते ही थे ? तुम फादर की बेटी हो। ध्यान से

देखने पर मालूम हो जायेगा। नुकीली नाक। घुंघराले केश! यों नाकनकशे जांचने पर रंगे हाथ पकड़ी गयी चोरी का माल जैसी लगती है! मगर, यहां ये खुद चोर के पक्ष में हैं। इसलिये कुछ बोल नहीं सकते। जाने दो। नुकसान किसका? फादर का ही! इसके पहले परिवार के सदस्य पुरोहित थे। दीनाम्मा बहू के सम्मान के पात्र थे। बातचीत के दौरान में वह कहती थी कि मेरे जीजा एक पादरी हैं। मगर आज? वह पके खेत की मेंड़ पर या अधूरे मकान के आगे दृष्टिदोष से बचाने के लिये रखा हुआ दाढ़ीवाला व पुच्छल पुतला है।—पुतले को पहनाये हुए चीथड़े ही उसकी पोशाक हैं। जमीन की मिट्टी। विवेक का फल खाये हुए आदम यहोवा के सामने जैसे पकड़े चोर के रूप में खड़े थे वैसे ही वह आज सामने खड़ा है। उनका और बेटों का कोई नुकसान नहीं! प्यारी भोली सुंदर लड़की। विवेकी है और ईश्वर से डरती है! लड़के के साथ चलने लायक।"

"दादाजी!"

"एं।"

"काफी पीजिये! ठंडी न हो जाय!"

"कुंयेनाच्चन को छोड़ शेष सभी के यहां दावत के लिये गयी न?"

"हा, एक चाचीजी के यहां नहीं गये।"

"हां, वही। तुम्हारे ससुर के दूसरे बड़े भाई!"

"वहां की चाची आदि तो यहां आकर मिल चुके।"

उसके दिल में अभी एक गांठ है। वह शादी में आया तो कुछ छुआ तक नहीं। यही नहीं वह चार पैसे खर्चने के मामलों में हाथ पीछे खींच लेता है। कोई कहे तो जवाब यही देगा कि गरीब हूं। चार अच्छे आदमियों के बैठने लायक कोई पक्का घर तक नहीं है। बात भी तो सही है न? हरिजन की झोंपड़ी से भी गयी-बीती हालत है।······

"रेयिन (ट्रेन) है न बेटी?"

"हां।"

"लड़का उसमें होगा।"

बातें एक-एक करके याद करना होगा। कल सवेरे मद्रास! वहां से ट्रेन बदलने पर अड़तालीस घंटों के बाद दिल्ली। और एक दिन बीतने पर अमृतसर!

सारे साथी मिलकर हंसी उड़ायेंगे। फोटो देखकर राय देते होंगे।·····

"शांतम्मा।"

"जी।"

"मुझे पहली भेंट पर क्यों राजन भैया पुकारा ?"

"मेरे दिल ने कहा कि पहले भी देखा है। ऐसा ही आदमी मेरे भीतर था।"

"झूठ।"

"सच राजन भैया।"

आगे कुछ कहने नहीं दिया। जब देखो, शरारत। मजाक! कहीं चैन से काम करने दें, तभी न। गंभीरता का स्वांग किया! रूठ जाने का अभिनय किया। इस पर कोई चुटकुले सुनाते या शरारत कर हंसा देते। वे सभी बातें अब याद आती होंगी······"

खाली गिलास लेकर शांतम्मा चौके को लौट रही थी। एक आदमी फाटक से आ रहा था जवान! शांतम्मा को गौर से देखा! मुस्कुराया। शांतम्मा सिर झुकाये चौके में गयी।······

"दादाजी।"

"कौन है ?"

"मैं हूं।"

"मैं हूं का मतलब ?"

दीनाम्मा बाहर आयी।

"अच्छा! यह कौन है ? बाबूजी ने पहचाना नहीं ?"

"कौन है, बेटी ?"

"कालायि का जोयिक्कुट्टि है, बाबूजी।"

"राजन चला गया, है न ?"

"सवेरे गया।"

"कल सवेरे मैं उससे चौराहे पर मिला था।"

"इधर पास आओ रे।"

"दादाजी, मैं आज वयनाड जा रहा हूं।"

"वलंयवट्टम जा रहे हो ?"

दीनाम्मा हंस पड़ी।

"ऊंचा सुनते हैं—पिताजी, वलंयावट्टम नहीं, वयनाडा मलाबार में है।"

"वहां क्यों जा रहा है ?"

"वहां सौ एकड़ बागान खरीदा है।"

"क्यों ?"

"मैं आगे वहीं रहूंगा। जाने के बाद जल्दी इधर नहीं लौटूंगा।"

दीनाम्मा ने पूछा—

"सो क्यों जोणिक्कुट्टि ! क्या तुम वहां अकेले रहोगे ?"

"अकेले रहना ही बेहतर है। एक नौकर को रख लेंगे।"

"मामला क्या है ? बोलो न जोणिक्कुट्टि ?"

"बात यह है कि पिताजी और मैं आगे एक घर में रह नहीं सकते।"

"क्या झगड़ा हो गया ?"

"चाची को सारी बातें क्या मालूम नहीं हैं ?" अब 'खून' होना ही शेष है। उसके पहले ही चला जाऊंगा।"

कुयेनाच्चन ने पूछा—

"क्या······क्या है री ?"

"ओह ! कुछ नहीं पिताजी······अन्नाम्मा—चाची ने क्या कहा ?"

"मां क्या कहे ? कुछ कहने दें तभी न ? मां की तबीयत भी अब ठीक नहीं है।"

कुयेनाच्चन ने आगे कहा—

"तेरे पिता की बात है न ?······उसको फैसला सुनाने का तेरा क्या हक ?"

"फैसला नही करता। मगर क्या इस मुहल्ले में जिंदा नहीं रहना है, दादाजी ?"

"कैसा मुहल्ला ? कैसा देश ? कौन सा देश है, जो मैंने नहीं देखा है ? इतना नेक कौन है ?"

"धीरे बोलिये। बहू उस तरफ खड़ी है न ? बाबूजी के लिये आज के दिन के लिये इतना काफी है।"

कुयेनाच्चन ने इस पर ध्यान नहीं दिया।

"रही खुद समझ बूझकर काम करने की बात। उसकी सजा तो ईश्वर देगा।"

"फिर भी क्या लोगों से डरना नहीं है, दादाजी !"

"ओह ! इस जमाने में वैदिक भी ईमानदार नहीं होते। औरों की बात क्या ?······"

दीनाम्मा ने कुछ हड़बड़ी से उत्तर दिया—"चुप भी रहिये पिताजी !"

"आज्ञा दीजिये, दादाजी !"

"जाओ !"

"हो आऊं चाचीजी ?"

"हो आओ जोणिक्कुट्टि !"

जोणिक्कुट्टि के चले जाने पर दीनाम्मा बोली—

"बाबूजी !"

"एं !"

"क्या याद है कि क्या-क्या कह रहे हैं ?"

"क्या ?"

"क्या भूल गये कि बहू भीतर है ? वैदिक पुरोहित आदि की बात सुनकर मैं घबरा गयी।"

"भीतर बहू के खड़े रहने की बात मैं भी भूल गया।"

"यह क्या ? यों सोचे-समझे बिना बात करें तो ?······बड़ी शरम की बात हो गयी।"

"क्या ?"

"जोणिक्कुट्टि के बाप की बात।"

"बरदाश्त करना होगा। तुम्हारे बदन में घाव लगे तो तुम्हीं को सहना पड़ेगा। और कोई चारा नहीं है।"

"जाने दीजिये। पिताजी अब इधर-उधर की बातें सोचकर बड़बड़ाइयेगा नहीं।"

दीनाम्मा के भीतर जाने के बाद कुंयेनाच्चन ने सोचा—

मैं आगे किसी से कुछ नहीं कहूंगा। मेरा क्या बिगड़ता है ? नमक जो खावे वही पानी भी पिये। कयामत के दिन वह हिसाब मांग लेगा। तब यह बहाना करके बच नहीं सकते कि जाना-सुना नहीं। प्रभु के ग्रंथ में सब कुछ बताया गया है। मैंने एक दिन अपने घर के झरोखे से झांका। तब मैंने भोले लोगों में एक जवान

को देखा। वह उस स्त्री के घर की सीढ़ी के पास की सड़क पर चला जाता था। एकाएक उससे एक स्त्री आ मिली जिसका भेस वेश्या का सा था। वह बड़ी स्वार्थी थी, चंचल भी और उसने निर्लज्जता के साथ उससे कहा—मुझे मेलबलि चढ़ानी थी। मैंने अपनी मन्नतें आज ही पूरी की हैं। इसी कारण मैं तुझसे भेंट करने निकली हूं। मैंने अपने पलंग के बिछौने पर मिस के वेलबूटों वाले कपड़े बिछाये हैं। मेरा पति घर में नहीं है। वह दूर देश को चला गया है······ आओ!

उसके पीछे चलने वाले को······कयामत के दिन में हिसाब चुकाना ही पड़ेगा······

बाहर हरिजन स्त्रियों की आवाज।

सिसिली दौड़ी आयी, बोली—"शांतामणि को देखने के लिये चात्तप्पुलयन की मां आदि आयी हैं।"

"चात्तप्पुलयन की मां?"

"हां, मुझे बड़ी सरकार बुलाने वाली अझकि"

"हूं।"

"अझकि कहती है कि शांतामामी अच्छी है।"

"क्या मामी तुम्हारे नजर में बुरी है?"

"अच्छी! सोने की शांतामामी है। शांतामामी को बहुत गीत मालूम हैं।"

"गाना मालूम है?"

"हां, दादाजी कहें तो गायेंगी।"

"बड़े सरकार!"

"क्या अझकि है?"

"जी हुजूर। छोटी सरकार को जरा देखने आयी। मैं कटनी के लिये गयी थी। गुजर गयी छोटी सरकार की ही तरह खूबसूरत है।"

कुंयम्मा की तरह—है न?"

"हां, चेहरा देखने पर मालूम होता है, सरकार!"

"हूं?"

अपनी छोटी सरकार की याद आते ही बड़ा दुःख होता है। मैं अहाते में केले के पौधों में खाद डालके आती तो कहती—अझकि क्यों इतनी जल्दी आ गयी?

कितने पौधों को खाद डाला ? देख आने के बाद ही मजदूरी दूंगी।······

"वह मेरे घर की दीया थी। उसके जिंदा रहते समय मैंने जो कुछ पाया-कमाया वही है। दीपक जलाके दिखाया, लुमाया और बाद में बुझा दिया······"

"हां, बड़े सरकार।"

"क्या तेरा बेटा तुझे कुछ देता-पूछता है ?"

"उसकी एक औरत और चार बच्चे हैं न बड़े सरकार ? उन्हीं को खिलाना-पिलाना भी बड़ा मुश्किल है।"

"हूं। जा। चात्तन को इधर भेज दो।"

कुंयेनाच्चन को याद आया।

नेवन अझकि को जब ले आया तब अझकि की उम्र तेरह-चौदह साल की थी। होशियार हरिजन छोकरी थी। रोपने, गाडने, काटने, पीटने, खाद डालने—करपा लगाने—हर काम में होशियार। देखने में भी अच्छी। बहुत मेहनत की। मगर अब कोई उस काम की याद नहीं करता। आजकल के जवान काम के हिसाब से पैसा मांगते हैं तो उसमें गलती कैसी ? दिन-रात खेत की मेंड़ पर और केले के पौधों की जड़ में मेहनत कर उन्होंने क्या पाया ? भूखा रहकर बड़ी मेहनत करते-करते अपनी आयु के बीच में ही चल बसते हैं। खाद का बोझा सिर पर उठाये आते-आते तेवन का छोटा भाई कंटनकालि रास्ते में पांव फिसलते लुढ़क गया और मरा भी। उन्होंने खून-पसीना एक किया और उसका मजा तो दूसरे लूटते हैं। यह सरासर अन्याय है। मगर धर्मग्रंथ में इसका भी स्पष्टीकरण है। पुराने नियम के अनुसार ही दुःख झेलने वाले एवं सुख भोगने वाले दोनों हैं। प्रभुवाणी में कहा है कि वह निर्धन का पैसा लेकर धनी को देगा। यही क्यों, हाथ की दस उंगलियां क्या बराबर हैं ? केले के दस पौधे लगाने पर क्या दसों एक ही तरह खिलते हैं ? एक ही ईश्वर ने छोटों और बड़ों की सृष्टि की है······

"पिताजी। दतौन करें—काफी पियेंगे।"

कुंयेनाच्चन ने देखा। शांतम्मा के चेहरे पर दुःख का निशान है। फिर भी उसने दुःख को मन ही मन छिपाया है।

काफी पीते समय शांतम्मा दरवाजे पर इंतजार में खड़ी थी कि कोई जरूरत तो नहीं। कुंयेनाच्चन को याद आया कि कुरुप कुछ दिनों से नहीं दिखाई पड़ा। ब्याह के बाद सिर्फ एक बार देखा था। शायद आज दोपहर को आयेगा।

उस दिन दोपहर को भी कुरुप नहीं आया। बातचीत करने के लिये कोई न मिला तो कई बातें मन ही मन सोचते-सोचते समय काटते रहे। आधी रात के बाद पलकें झपकीं। इस उनींदी हालत में किसी ने खटिया के पास आकर आवाज दी—"चाचा नहीं हैं ?"

"कौन ?"

"मैं हूं, दादाजी।"

"बहू।"

"जी।"

"दीया जलाओ।"

शांतम्मा और दीनाम्मा एक साथ जग गयीं। दीनाम्मा दीया जलाकर बरामदे पर ले आयी। डर गयी। घनी दाढ़ी-मूंछों का कोई आदमी खड़ा है।

"चाची ने क्या मुझे नहीं पहचाना ?"

गौर से देखा।

"दानिक्कुट्टि !"

"हां"

"हे प्रभु ! मैं तो समझ नहीं सकी। कैसे पहचानूं ? यह घनी दाढ़ी-मूंछ देख कर लोग डर जायेंगे।"

दानिक्कुट्टि हंस पड़ा।

"छोटे चाचा कहां गये हैं ?"

"कोल्लम गये हैं। बाबूजी ने क्या नहीं पहचाना ? कल्लुविला का दानिक्कुट्टि······"

"कौन ?"

"कुंयुचेरुक्कन मैया का बेटा······"

"दीया जरा दिखाओ !"

दीनाम्मा ने दीपक पास लाकर दिखाया। सिर से पांव तक देखा। शिशोन की तरह छत को छूता लंबा सा आदमी। पैंट, कोट और पेटी······

"तू अब कहां से आ रहा है रे ?"

"बंबई से आ रहा हूं, दादाजी।"

"कहां से ?"

दीनाम्मा ने जोर से कहा—

"बंबई से !"

"क्या सांझ के बाद निकला ?"

दानिक्कुट्टि ने हंसते हुए कहा—

"निकले दो दिन हो गये दादाजी ! बंबई जाने के लिये दो दिन का सफर करना पड़ता है।"

"अच्छा ! इतने दिनों के बाद आया और दो ही दिन बाद क्या चला भी जायेगा ?"

दानिक्कुट्टि कुछ न समझ सका। ताकता रहा। दीनाम्मा बोली—"कान बिलकुल कम सुनते हैं दानिक्कुट्टि। और नींद की बड़बड़ाहट भी तो है।"

"क्या तू अपने बाप को कुछ नहीं भेजता ?"

"किसने कहा, दादाजी ?"

"वह हमेशा बड़ी मुश्किल में हैं। कैसी-कैसी चालाकी और छल-कपट से तुम लोगों को उसने पाल-पोसकर बड़ा किया। वह हमेशा नंगा रहा करता है। अब उम्र भी बढ़ गयी। कुदाली खुरपी चलाने या बोझ उठाने कैसे जाये ?"

"यह सब बहाना है दादाजी। दादाजी की आंखों में धूल झोंकना चाहते हैं।"

"एं।"

"हर महीने ढाई सौ रुपये खर्च के लिये भेजता हूं—क्या वह काफी नहीं है ?"

कुंयेनाच्चन ताकते रहे।

"दस-पंद्रह हजार के मकान के नक्शे के लिये भी लिखा था।"

दीनाम्मा बोली—"मैंने पिताजी से उसी दिन कहा था न कि कल्लुविला पर घर बनवाने वाले हैं।"

दानिक्कुट्टि ने आगे कहा—

"पास कितना ही क्यों न रखें, 'नहीं' ही करते हैं। वही तो सीखा है।"

"तो उसने मुझसे ये बातें नहीं कहीं।"

"किसी से सच नहीं कहते।"

दीनाम्मा बोली—

"मिलने पर नाराज होते और झल्लाते हैं। मगर पिताजी को मन ही मन सब बच्चों से बड़ी ममता है।......"

"कुछ दिनों से दादाजी से मिलने की इच्छा हो रही थी। एक बार सपना देखा कि पिताजी सख्त बीमार हैं।"

"कमजोरी है। कमजोरी दिनोंदिन बढ़ती जाती है।"

दानिक्कुट्टि ने पेंट की जेब से सौ रुपयों के नोट का एक बंडल निकाला। उससे पांच नोट लेकर दीनाम्मा के हाथ में देकर कहा—

"लीजिए चाची—दादाजी की जरूरतों के लिए खर्च करें।"

"नहीं चाहिए बेटा।"

"यह क्या ? क्या मैं कोई पराया हूं ? बूढ़े दादाजी के पैरों पर बैठकर उनकी सेवा करने का जिम्मा मेरा भी है। वह कर नहीं पाता। अब अपनी कमाई का एक हिस्सा दे रहा हूं, बस !"

दीनाम्मा ने लेने में फिर भी संकोच किया।

"चाची, संकोच न करें। मेरे पास पैसे होते तो मैं पांच सौ ही क्यों, पांच हजार तक खर्च करने में नहीं हिचकिचाता।"

दीनाम्मा ने नोट लेकर हथेली में रख लिये।

"दादाजी !"

"एं।"

"चलूं ?"

दानिक्कुट्टि घुटने टेककर दादाजी के पैरों के पास बैठा।

"दादाजी मुझे आशीर्वाद दें।"

दानिक्कुट्टि के सिर पर कुंयेनाच्चन ने हाथ रखा, आसमान की ओर नजर की। बच्चों और पोतों ने आज तक जो नहीं मांगा वह इसने मांगा है। हृदय से प्रार्थना की—"लेनाओं के प्रभु यहोवा, इस पर कृपा कर। दुष्कर्मकारियों के षड्यंत्र से और अन्यायियों के कलह से इसे बचा ले। नदी तट के उपवन की तरह, यहोवा के लगाये चंदनवृक्ष की तरह और जलांतिक के देवदारू के समान इसका पालन कर—"

"तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होगी। जाओ।"

दानिक्कुट्टि दादाजी के पैरों को चूमकर चला गया। दीनाम्मा ने हथेली खोल कर नोट गिने। कहीं सपना तो नहीं देख रही है, अचरज की बात थी। इतनी बड़ी रकम पहले कभी हाथ से छुई नहीं है। सिसिली मुन्नी के पिता से कहूं ?

नहीं, दादाजी और मैं—दो ही जन यह जानते हैं। कपड़े की पेटी में छिपाकर रखूंगी। सख्त जरूरत पड़ने पर दिखाकर अचरज में डालना चाहिए।

दानिक्कुट्टि की जेब सौ रुपये के नोटों से भरी है। तो जो कुछ सुना, ठीक ही है। जहाज से आने वाली चीजें बिना सरकार की खबर के खरीद कर बेचता है। एकाध महीने में एक बार किसी के जाने बिना ही रातों-रात कल्लुविला जाया करता है। खैर, इन सब बातों की जानकारी से मेरा क्या नफा-नुकसान? जो भी हो प्यार तो है, आधी रात को आकर यह रकम दादाजी को देने का जी तो हुआ।

"बेटी।"

"क्या?"

"कितना है?"

"पांच सौ।"

"क्या पांच सौ हैं?"

"हां, एक तो ऐसा भी हो, जो प्यार जाने······बेटे से कहना है?"

"एं।"

"बाबूजी के बेटे से कहूं?"

"नहीं। अगर कहो तो वह तुम्हें फुसलाकर पैसा ले लेगा और उड़ा देगा।"

"कपड़ों की पेटी के अंदर रख दूंगी। बड़ी जरूरत पड़ने पर दे देंगे।"

"हां, वही ठीक है। बड़ी-बड़ी जरूरतें आनेवाली हैं।"

"कैसे?"

"कब्र बनवानी है, दावत खिलानी है······।"

"बाबूजी को इन्हीं बातों की याद रहती है। उसका खर्चा सौ लोग करेंगे।"

फिर भी चार पैसे हमारे हाथ में रख लेना ही बुद्धिमानी है, बिटिया। किसी भी हालत में मकबरा बना लेना चाहिए। बड़े-बड़े लोगों के साथ नहीं चाहिए। दूर बना लेना काफी है। अकेले खड़ा रहूंगा। ख्रीस्त के जन्मोत्सव और पुनरुत्थान के दिन मोमबत्ती जलानी चाहिए। ईश्वर के दूसरे आगमन के समय बंदा हाजिर है। कहते हुए उठ चलना चाहिए।"

"बाबूजी जरा सो जाइए। सूरज निकलने का समय हो रहा है।"

दीनाम्मा भीतर गयी। कपड़े की पेटी खोलने की आवाज कुंयेनाच्चन ने

सुनी। घंटी बजानेवाला ताला है। खुलते वक्त घंटी बजती है। बंद होते समय फिर से घंटी बजती है। गौने में लायी पेटी है······

ईश्वर की लीला अद्‌भुत है। उसके पथ किसने देखे ? अफीम के पैसे तक के लिए तरसते थे तो पांच सौ रुपये मिले। प्रभु परेशान नहीं करेंगे। आज तक कष्ट नहीं दिया। कितने ही अनुभव ! जैसा कि दाऊद के बासठवें भजन में कहा है कि मैं चुपचाप ईश्वर की ओर मन लगाये हूं मेरा उद्धार उसी से होता है। वही मेरा गढ़ है। मैं बहुत न डिगूगा।

"बत्ती बुझाकर सो जाओ बेटी।"

"······"

"सुना नहीं ?"

"······"

"हंस रही हो ? कौन ?"

"मैं हूं पिताजी, कुंयम्मा।"

बढ़िया कपड़े। कच्चयुरि, चट्टा, कवणि[1] वही है।

"इतने दिनों तक तू कहां छिपी थी ?"

"नित्यराज्य में। मेरे साथ और एक आदमी है।"

"कहां ?"

"आंगन में हैं।"

"कौन ?"

"मां।"

"तेरी मां ?"

"हां······हम पिताजी को ले चलने आयी हैं। यहां पिताजी की देख-माल कौन करे ? मीठी चुपड़ी बातें करनेवालों का भरोसा न रखना। उठकर आइये। हम अपने घर चलें।"

"कौन-सा घर ?"

"अमर घर।"

"तेरी मां बाहर क्यों खड़ी है ? बुला।"

"कहा कि भीतर नहीं आयेंगी।"

[1]केरलीय ईसाई स्त्रियों की खास पोशाक।

"सो क्यों ?"

"ऐसी बातें रास्ते में मां से खुद पूछ लेना !"

"कैसा रास्ता ? क्या बहुत दूर है ?"

पास ही है, पिताजी। लीजिए, देखिये। स्वर्गदूत गब्रियल पंख पर बैठाकर ले जायेंगे। पहरेदार देवदूत ज्योति का वस्त्र पहन कर खड़े हैं।

कुयेनाच्चन ने देखा। आसमान पर एक दरवाजा खुला है। दरी बिछी हुई। पत्थर की सीढ़ियां······

"पिताजी के पहनने का चोगा लायी हूं।"

बात की बात में उसने नया चोगा पहना दिया। नयी फुरती। उठकर चलने में कोई कठिनाई नहीं।

"क्या छड़ी चाहिये ?"

"नहीं।"

उठकर चलने पर छड़ी की जरूरत ही नहीं। छोटे बच्चों की तरह दौड़ने का जोश है। फिर भी उसने कंधों पर हाथ रखा। अपने बराबर है। आंगन पर पहुंच-कर पूछा—"तेरी मां कहां है ?"

अगल-बगल झांककर देखा। नहीं है।

"क्या वह चली गयी ?"

कुंयम्मा चुप। उसके मुख की तरफ दृष्टि डालो। यह तो कुंयम्मा नहीं पेण्णम्मा है। प्रेमविलास से जिसने उसे मस्त बना दिया था।······

"जहां मैं हूं, वहां क्या वे आयेंगी ?"

"तुम—"

"कितने दिनों से आपकी राह देख रही हूं। और कोई साथ नहीं देता। हमारी पहली मुलाकात क्या याद है ?"

"हां।"

"हे मेरे प्रेमी, आ, हम खेतो में निकल जायं और गांवों में रात बितायें। फिर सवेरे उठकर दाख की बारियों में चलें और देखें कि दाखलता में कलियां खिली हैं या नहीं। अनार फूले हैं या नहीं। वहां मैं तुम्हें अपना प्रेम दूंगी।······"

"पेण्णम्मा, क्या तुम नहीं देखतीं कि मैं वृद्ध हो गया हूं।"

"किसने कहा ? नित्ययौवन हमें वापस मिला है। मेरी तरफ देखो। मेरे गालों

को देखो। आंखों को देखो। साठ रानियां, अस्सी रखेलियां और अनेकों कन्याएं मुझे 'भाग्यवती' पुकारती हैं। हे प्रिय, मुझे चूम लो—"

चूमने के लिये पास खड़ा कर लिया······नहीं, कुछ नहीं······

धुएं की तरह, बादल की झोंकों की तरह वह हाथों से गायब हो गयी !

सूनापन !

·········

"बाबूजी, उठिए !"

चौंक उठे। घबराकर देखा। कई लोग खड़े हैं। कुंयम्मा नहीं है, पेण्णम्मा नहीं है······

कोई ढाढें मारकर रो रहा है।

अब लोगों को पहचान सकते हैं। दीनाम्मा, शांतम्मा, मुन्नी······फिर ?

कुंयुचेरुक्कन की पत्नी, उसका छोटा लड़का······

"बाबूजी !"

"एं।"

"दानिक्कुट्टि को पुलिसवाले हथकड़ी पहनाकर ले गये। कुंयुचेरुक्कन भैया को भी ले गये।"

"हथकड़ी ?"

"मेरे बच्चे को ले जाकर मार डालेंगे, दादाजी ! अब मेरा आसरा कौन है, दीनाम्मा ! ······"

"रोइये मत चाची !"

दीनाम्मा उसका हाथ पकड़कर भीतर ले गयी। कुंयेनाच्चन आंखें खोले पड़े रहे। रोशनी आ रही थी। सपना और सच एक दूसरे से मिले हुए हैं। समझ में नहीं आता कि सच क्या है, झूठ क्या है। सोचते लेटे थे कि फाटक पर एक मोटर के रुकने की आवाज सुनायी पड़ी। चारों भाई गाड़ी से उतर आये। आगे कीवरीत। सबके पीछे पकड़ा गया चोर सा कुंयुचेरुक्कन !

कीवरीत ने कहा—ऐरे-गैरों की दौलत तुम्हें क्यों चाहिये ? ले जावे। जो नमक खाये वह पानी पिये। बेटा हो या भतीजा।······

फिलिप्योस ने कहा—"चालाकी और बुद्धिमानी बढ़ने से यही होता है। सोचा कि जल्दी से घर बनाकर गृहस्थी जमायेंगे।······

कीवरीत ने फिर से कहा—"मरे को मत मारो।"

इसका उत्तर मात्तुक्कुट्टि ने दिया—

"मरे को मारते हैं ? डी. एस. पी. चीफ इंजिनीयर के साथी ठहरे—चीफ इंजिनीयर से फिलिप्योस भैया की जान-पहचान थी। तभी जामिन पर ले आ सके वरना, बेटे की चोरी पर बाप को भी हवालात का प्रसाद मिलता।

कुंयुचेरुक्कन ने कोई जवाब नहीं दिया। कंधे का अंगोछा कुंयेनाच्चन की खटिया के पास जमीन पर बिछाया और लेट गया। कुंयुचेरुक्कन की पत्नी शोशाम्मा ने पूछा—

"दानिक्कुट्टि कहां है कीवरीत भैया ?"

"उसे बंबई ले गये हैं। मुकद्‌मे के बाद छोड़ेंगे।"

"हे मेरे प्रभु !"

कुंयेनाच्चान ने दीनाम्मा और शांतम्मा से सारा समाचार समझने के बाद पूछा—

"क्या उसे भी नहीं छुड़ा सकते थे ?"

फिलिप्योस ने कहा—

"पिताजी उधर जाइये। छुड़ा लाइये। अब रोने से कोई लाभ नहीं। चोरी डाका करके आधी रात मुंह अंधेरे जब लाता था तब लेकर जमा करते थे। उस वक्त सोचना था। पांच हजार रुपये का चोरी का माल घर से बरामद करके ले गये हैं।—"

कीवरीत ने शांतिपूर्वक कहा—

"क्या ये सब समझ-बूझकर ले रखे थे ? क्या इसने सोचा होगा कि ऐसा होगा।"

फिलिप्योस चुपचाप मोटर में बैठकर गया।

बड़ी दीन वाणी में कुंयुचेरुक्कन ने कहा—"मैंने क्या गुनाह किया है पिताजी जो कि यह हालत की गयी है ?"

"हां ! गुनाह ! शांत रहो। उसे किसी तरह छुड़ा लायेंगे।"

यों समझाकर कीवरीत चला गया······

कुंयेनाच्चन लाठी टेकते हुए उठे। शांतम्मा के हाथ के सहारे आंगन में उतरे।

छड़ी के बल मुश्किल से दो कदम बढ़े। दीनाम्मा को पास बुलाकर कानों में कहा—

"कपड़े की पेटी में रखे रुपये कुंयुचेरुक्कन को दे दो बेटी, उसके पास कम से कम उतना ही तो रहे !"

नौ

शांतम्मा ने स्लेट पर दस लकीरें खींचीं। अब सिसिली मुन्नी से पूछा—"कितना ?"

सिसिली ने सोचा। उंगलियों पर गिनती लगायी। मन ही मन फुसफुसायी। फिर कहा—"दस।"

शांतम्मा ने चार लकीरें मिटा दीं—

"अब ?"

सिसिली ने फिर से उंगलियों पर गिनती लगाकर कहा—"छह।"

"होशियार। अब एक से सौ तक लिखके दिखाओ साफ लिखना।"

सिसिली स्लेट को बच्चे की तरह छाती से सटाये लिखने लगी। शांतम्मा ने फिर से खत खोलकर पढ़ा। चौथी बार। खत एक हफ्ते तक इंतजार करने पर मिलने वाला अनमोल कोष है। उस कोष के बनाये शांत्वना के तंबू में दो दिन बीत जाते। अगले खत के लिए दिन गिनकर प्रतीक्षा करनी पड़ती।

सिसिली मंत्र की तरह दुहराती—"एक, दो, तीन, चार, पांच······"

अकेली रहने का दु:ख मिटाने के लिये पूरे चार-पांच पन्ने लिखकर भेजते। रोज शाम को भोजन कर सोने के पहले डायरी की तरह उसे भेजने के लिये कुछ लिख रखते। चार दिन हो जाने पर एक साथ भेजते।

"······किसी कारण दु:खी न होना पत्र में चार-पांच बार यह दुहराया है।"

बेचारे। अगर जान लेते तो बरदाश्त न कर पाते। "सत्रह, अठारह, उन्नीस······"

कोई भी सब्र न करेगा। एक आदमी के संबंध में इससे बढ़कर बेइज्जती की बात हो भी क्या सकती है ?

पहले सोचा था कि कार्तिकप्पल्लि के फादर शादी में किसी असुविधावश नहीं आये थे और किसी संदेह की गुंजाइश नहीं थी।

मगर पता लगा······

आज तक वह पिता मानकर जिसकी पूजा करती थी वे उसके पिता नहीं ? पति के देहांत के बाद उसकी मां बदचलन रही थी और उसीका निशान वह स्वयं है। और क्या ? असली पिता कार्तिकप्पल्लि के फादर हैं। यह भेद छिपाकर फादर ने शादी का प्रस्ताव किया। बात खुलने पर खिसकने लगे थे। नहीं नहीं, इन बातों की याद करते डर लगता है।

दु:ख रोकने में असमर्थ होने से पूरी रात रोती रही। चाची खटिया पर पीठ संवारती हुई सांत्वना देती रही। जिन्होंने उनसे ऐसी बातें कीं उनको फटकारा। उस समय सोचा था कि सब बातें लिख भेजूंगी। मगर चाची ने उपदेश दिया— "नहीं लिखना बेटी, राजन किसी समझौते के लिये राजी नहीं होगा। यदि पता लगे कि तुम्हें कष्ट दिया तो वह खून कर डालने में भी नहीं हिचकेगा।"

"······अगले महीने में 'स्कीम' पर जाना है। कहा है कि उसके बाद जुलाई में छुट्टी देंगे। नीलगिरि के लिये तबादले की भी कोशिश कर रहा हूं। वहां क्वार्टर्स हैं। शायद मिलें। सब कुछ तुम्हारी किस्मत पर निर्भर है। प्रार्थना करो······"

अच्छा ! इसके अलावा मेरे मन में भी और क्या इच्छा है ? और क्या मांगती ? साथ रहना है सेवा करना है······

"शांतामामी !"

"हुं।"

"क्या सोच रही हो ?"

"कुछ नहीं। बिटिया ने लिखा ?"

"कब की लिख चुकी !"

स्लेट लेकर देखा।

"तुम होशियार हो।"

"अब शब्दों में लिखूं ?"

"हुं।"

"कल मास्टर ने शब्द बोलकर लिखाये तो सिरदेवी के सारे शब्द गलत निकले।"

"सिरदेवी नहीं बेटी—श्रीदेवी।"

"शिरदेवी।"

तब आंगन से किसी को गीत गुनगुनाते सुना। धीमी आहट भी आ रही थी।

"इंद्रधनुष के निचुड़े हुए सार !
हे सौंदर्य ! तुम धीरे-धीरे दूर होती गयी।
मुझे दु:ख न देना। सौकुमार्य नदी की लघु तरंग ! हे कपोत !"

थोड़ी देर बाद शिवरामकुरुप भीतर आया। शांतम्मा उठी।

"बैठो, बैठो। सिसिली मुन्नी को सिखा रही हो न ?"

शांतम्मा ने कोई जवाब नहीं दिया।

सिसिली बोली—"मैं एक-दो से लेकर सौ तक लिख रही थी कुरुप मामाजी !"

"होशियार ! सिसिली मुन्नी की मां किधर है ?"

"जवाब शांतम्मा ने दिया—"चेन्नित्तला गयी हैं। चाची की एक ममेरी बहन की शादी वहां हुई है। अभी आ जायेंगी।"

"अच्छा ! यों ही पूछा था। मैं कुंयेनामाप्पिला के पास बैठूंगा। सिसिली मुन्नी होशियारी से सीखना। उसके बाद कालेज जाना। एम. बी. बी. एस. वगैरह पास करके डाक्टर होना।"

"शांतामामी जैसी हो जाने पर कालेज जाऊंगी। तब साड़ी भी पहनूंगी।"

कुरुप जोर से हंसा। शांतम्मा मुस्कुरायी।

"हंसी सुनकर कुंयेनाच्चन ने दूर से आवाज दी—"कौन है ? कुरुप हैं न ?"

"हां, कुंयेनामाप्पिला, एकाध बार आवाज दी, पर आप जगे नहीं। ऊंघते देख इधर आया—"

"जगा ही हूं। आओ।"

कुरुप कुंयेनाच्चन के पास गया।

"बातें करने को कोई नहीं था। बड़ा परेशान था।"

"बेटे की खबरें सुनीं। कलिजुग है न ?"

"क्या ?"

"कुंयुचेरुक्कन और उसके बेटे की गिरफ्तारी की बात······"

"ओह !"

"इससे बढ़कर कौन सी बेइज्जती घर पर आ सकती है कुंयेनामाप्पिला ?"

"·············"

"मेरा कहना बुरा न मानें—कुंयेनामाप्पिला के चारों बेटों में—और कोई इतनी ईर्ष्या, घृणा और दूसरों के प्रति विद्वेष नहीं रखता। ठीक है न ? कहिए।"

कुंयेनाच्चन ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। कुरुप को गौर से देखा।

"कुछ दिन हवालात में रखना था।"

"कुरूप के कोई संतान नहीं है न!"

"नहीं। क्या आपको मालूम नहीं?"

"वरना मुझसे ऐसी बातें न करते।"

"सो······"

"पिता के लिये सब पुत्र समान होते हैं। शायद अधिक प्यार लंगड़े बकरे के प्रति होता है। जैसा कि ईश्वर ने कहा है। सौ बकरे वाला गड़रिया अगर एक को नहीं देखता तो निन्यानबे को रेगिस्तान पर छोड़कर गायब बकरे की तलाश में जाता है। पिता अपने पुत्र को दोषी ठहरा नहीं सकता, कुरुपजी। वह दुश्चरित्र शराबी और और सब कुछ हो फिर भी वह पुत्र ही है। कभी कहते काश! तू मेरा बेटा न होता।" झूठ बात! खरची लड़के की वापसी से खुश होने वाले पिता के लिये प्रभु ने एक उपमा दी है। झगड़ा करके छोटा बेटा घर का हिस्सा लेकर परदेश गया। बड़े पुत्र ने पिता के साथ रहकर परिवार की सेवा की। पिता की शुश्रूषा की। कुछ दिन बीतने पर अपना सारा धन उड़ा देने के बाद निराश और अपमानित छोटा पुत्र वापस आया। उसने कहा—"पिताजी! मैंने आपके और स्वर्ग के प्रति अपराध किया है। अब मैं 'पुत्र' नाम के योग्य नहीं हूं। आपके मजदूरों में मुझे भी जगह देना।"

पिता दौड़े हुए उसके पास गये। उसे चूमा। बढ़िया चोगा लाकर उसे पहनाया। पला हुआ बछड़ा कटवाया।

"यही पिताजी का दिल होता है कुरुपजी।"

कुरुप फीकी हंसी हंसे।

"नहीं। सब बातें मुझे भी मालूम हैं। फिर भी परिवार की इज्जत—"

दीनाम्मा आ गयी। उसके चेहरे पर किसी दुर्घटना की व्याकुलता थी। चेन्नित्तला से आ रही थी।

"बाबूजी!"

"एं।"

"सुना?"

"क्या?"

"एल्लुपरंप की कुट्टिअम्मा कल स्कूल जाने के बाद नहीं लौटी।"

"स्कूल से लौटी नहीं ?"

"नहीं।"

"कहां है ? ओह—वह आयेगी री !"

"हां हां ! चौराहे पर लोग कहते हैं, सहाध्यापक के साथ भाग गयी। यह भी कहते हैं कि रजिस्टर शादी की है।"

कुरुप ने पूछा—

"कुट्टिअम्मा माने कीवरीतमाप्पिला की बेटी है न ?"

दीनाम्मा ने लापरवाही से कहा—

"हां, हां।"

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"वे एक काथलिक हैं।"

"क्या पिताजी को मालूम है ?"

"देखा नहीं है। दुहाज है। पहली पत्नी से कोई बच्चा नहीं है।"

"पिताजी को ये सब बातें कैसे मालूम ?"

"कैसे मालूम ?"

"हां।"

"उसने मुझसे सब कुछ कहा बिटिया ! यह भी कहा कि अगर वे बुलायेंगे तो साथ जाऊंगी।"

"हे मुक्तिदाता ! पिताजी ने फिर किसी से यह बात क्यों नहीं कही ?"

"किसे बताना ? क्या बताना ? जब लड़की सयानी हो जाय तब शादी कर देना, यही बाप का फर्ज है। है न कुरुप जी?"

"हां, हां। हमारे समाज में लड़की मांगी जाती है। देना न देना लड़की के घरवालों की इच्छा पर निर्भर है।"

"हां, यहां भी कई प्रस्ताव आये। किसी को पास फटकने दें, तभी न ? पूछने पर कहना—देखेंगे पिताजी ! सोचेंगे। कब सोचेंगे ? कौन जाने ? शायद इसी तरह आये ? जाने दो। एक मर्द के साथ ही गयी है न ? वह उसको सुरक्षित रख लेगा।"

दीनाम्मा बोली—

"क्या-क्या देखने के बाद ये आंखें मूंद सकेंगे। मैं कुछ समझ नहीं पाती।"

"सब देखना पड़ेगा। नब्बे साल से मैं क्या-क्या देखता आ रहा हूं। भुगत रहा हूं। स्त्री चली गयी। दुलारी बेटी गयी। आधार स्तंभ बना था बड़ा बेटा वह भी गया। परकटे पंछी की तरह, पानी से चारों ओर घिरे टापू में सब कुछ देखते-सुनते मैं अशरण हो बैठा हूं। देने-लेने वाला ऊपर बैठा है। जैसा कि नीतिमान अय्यूब ने पूछा था—

निर्जन देश में और जंगल में जहां कोई मनुष्य नहीं रहता मेघ बरसाकर उजाड़ ही उजाड़ देश को भी कौन सींचकर हरी घास उगाये ? किसके गर्भ से बर्फ निकलता है और आकाश से गिरे हुए पाले को कौन उत्पन्न करता है ? हम कुछ नहीं जानते कुरुपजी !

"ठीक है। हम तो घास और कीड़े के बराबर हैं। सब पराशक्ति की महिमा समझें। सबका नाश करने वाली मृत्यु और भाविकल्प-प्राणियों का उद्‌भव सब कुछ जगदीश्वर ही हैं—

"मृत्युः सर्वहरश्चाह—
मुद्‌भवश्च भविष्यताम्
कीर्तिः श्री वाक् च नारीणाम्
स्मृतिर्म्मेधा धृतिः क्षमा।
बृहत्साम तथा साम्नाम्
गायत्री छन्दसामहम्
मासानाम् मार्गशीर्षोह्म्
ऋतूनाम् कुसुमाकरः।"

"दाऊद ने अपने प्रायाश्चित की प्रार्थना में निवेदन किया है—हे ईश्वर ! यहोवा ! तू सबसे महान है। तू वैभव, महत्त्व और ऐश्वर्य का वस्त्र पहने हुए है। तू उजियाले को चादर की नाई ओढ़े रहता है। आकाश को तंबू के समान ताने रहता है······"

"पिताजी !"

"कौन ?"

कीवरीत। पिताजी के चेहरे को देखता हुआ खटिया के पास खड़ा रहा।

कुरुप को लगा कि अब वह यहां फालतू आदमी रह गया। खिसक जाने का निश्चय कर बोला—

"मैं चलता हूं कुयेनामाप्पिला !"

किसीने जवाब नहीं दिया। कुरुप चला। दीनाम्मा दरवाजे पर आयी। कीवरीत ने पूछा—

"क्या पिताजी ने नहीं सुना ?"

कुंयेनाच्चन ने कुछ नहीं कहा।

"लड़की कल सवेरे स्कूल जाने के बाद अभी तक नहीं आयी, पिताजी !"

"हुं।"

"मैं अब क्या करूं ?"

"एं ?"

"मैं क्या करूं ?"

"ये सब पहले से सोच लेना था। मैंने तुमसे कितनी बार कहा था कि उस लड़की के गले पर मंगलसूत्र बंधाकर भेजो। जब कहता तब तुम टूट पड़ते थे न ?"

दीनाम्मा ने कहा—"अब ये सब बातें क्यों कह रहे हैं बाबूजी ?"

"फिर कब कहना है, री। जो कुछ करना है ठीक समय पर करना है।"

"पिताजी की नजर में भी मैं ही कसूरवार हूं। है न ? बच्चों के प्रति निर्मम ! मैंने तो सोचा कि वह मेरे लिये एक आसरा रहेगी। इतनी सी बात है। भूखा रहने पर भी उसके वेतन का एक हिस्सा बचाकर चिट के पैसे जमा करता था। उसके पैसे लेकर उसे बिदा करने की बात सोची थी।"

"नोटुपुझा या आसपास के उस मास्टर ने क्या गोपालन नायर मास्टर के द्वारा तुमसे निवेदन किया कि उससे ब्याह करना चाहता है ? कहने पर तुमने उसे फटकारा। है न ?"

"दुहाज है, काथलिक है। क्या हमारे लायक है पिताजी ?"

"अरे ! तब तो वह बात तमीज से बतानी थी। तुमने अभी तक तमीज की बात नहीं सीखी है ! यह मत सोचो कि बेटियों को घर पर बांधे रखूंगा। बेटे भी अपने बराबर हो गये तो तुम कहकर संबोधन करना होगा। क्या बेटे, क्या औरत, क्या पिता बात करते ही एकाएक झपट पड़ते हो।"

कीवरीत सिर झुकाये खड़ा रहा।

"उसकी छोटी बहनों के दो-दो तीन-तीन बच्चे हो चुके। सबके मालिक हैं।

सिर्फ वही अकेली ठहरी। तुम्हारी आंखें मूंद जाने पर उसका कौन होगा ? जरा सोच लो।"

दीनाम्मा ने मन ही मन सोचा कि बाबूजी बिलकुल सही बात कहते हैं। कुट्टि-अम्मा ने उससे एक रोज़ कहा भी था। सबसे छोटी बहन लीलाम्मा की शादी हुई थी। पहली बार पति के साथ आयी थी। दूसरी बहनें और उसके पति भी थे। सब लोगों के लिये आराम से सोने का सुभीता नहीं है। जितनी जगह मिल सकती थी, बांट ली। आखिर कुट्टिअम्मा को चौके में ही जगह मिली। बड़े सवेरे उसने काफी बनायी। कीवरीत को जागते ही काफी पीने की आदत है। काफी लेकर बरामदे पर आयी तो देखती क्या है ? उससे दस साल छोटी बहन बरामदे की खटिया पर नंगी पड़ी खुर्राटे भरती सो रही है। साथ सोये हुए आदमी की हालत भी वैसी ही थी। वह खड़ी-खड़ी गल गयी। करे क्या ? किससे कहे ! किवाड़ की आड़ में खड़ी आवाज दी। सुने, तभी तो ! कहीं कीवरीत या चाची ने आकर देख लिया तो ! सोचा कि कुछ भी हो, खटिया के पास गयी और पैरों में एक चुटकी दी ! ······

कीवरीत ने कहा—

"मेरी सारी भूलों का दंड प्रभु दें। अब करूं क्या ? क्या उसी के रास्ते पर छोड़ दूं ?"

ये शब्द सुनते हुए मात्तुक्कुट्टि आया। उसने कहा—"मुकद्दमा दायर करना होगा। इसमें बहुत सोचने को क्या धरा है ? और किसी पर इल्जाम लगाने से कोई लाभ नहीं। कीवरीत भैया और भाभी ही जिम्मेदार हैं। लड़कियों को भोजन के साथ अनुशासन की शिक्षा भी देनी चाहिये। जो नालायक निकलती है उनके घुटने तोड़कर कमरे के भीतर बंद कर ताला लगाना चाहिये। पूरा गांव गंदा कर दिया न ?"

मात्तुक्कुट्टि के साथ कुर्यापिप भी था—

"कैसा मुकद्दमा ? बालिग लड़की अपनी पसंद के आदमी के साथ अगर गयी तो उसमें मुकद्दमा खाक है ! एक रजिस्ट्रार के सामने जाने पर वे हमेशा के लिये पति-पत्नी के रूप में रह सकते हैं।"

"अगर मुकद्दमा नहीं है तो गढ़ना होगा रे। लड़की के गले का पांच-छह गिन्नियों का हार चुराया। उसे जबरदस्ती ले गया। तो ?"

कुंयप्पि ने शांतिपूर्वक कहा—"हां हां ! जबरदस्ती ले चलने की बात लड़की को भी कचहरी में बतानी पड़ेगी—छोटी बच्ची तो नहीं है।"

"अगर मानती नहीं तो स्वीकार करायेंगे। तुम उसकी चिंता मत करो। वकील उम्मन जी से सलाह लेकर आया हूं। उसके लिये कायदे-कानून हैं। गवाहों का इंतजाम मैं कर लूंगा।"

"झूठे मुक़द्मे की कोशिश क्यों करें चाचाजी ?"

"क्या गांव में सिर ताने चलना नहीं है ? अभी चौराहे पर लोग गाते हैं। इज्ज़त नहीं तो फिर जिंदा लगने से क्या लाभ ?"

कुंयेनाच्चन ने कहा—"नालिश-मुकद्मे के लिये मोटी-मोटी रकम चाहिये न ? क्या उसके हाथों में कुछ है ?"

"अग़र नहीं है तो भीख मांगे। रुपया नहीं है !"

कुंयप्पि समझाने की कोशिश करता ही रहा—"बिना सोचे-विचारे कुछ कर डालने से कोई लाभ नहीं है, चाचाजी। जो हुआ सो हुआ।"

"तुम चुप रहो कुंयप्पि। मेरी भुजा फड़क रही है। अगर मेरे घर की औरतें यह करतीं तो कहीं भी जाकर उन्हें खींच लाता और इसी बरामदे पर छुरा मारता। हां।"

खामोशी। दीनाम्मा ठुड्डी हाथ में लिये देहली पर खड़ी है। कुंयेनाच्चन उठकर बैठे हैं। खटिया के पास हथेली में मुंह छिपाये कीवरीत बैठा है।

"कीवरीत भैया क्यों मौन है ?"

"मुकद्मा देना हो तो देंगे।"

"देना हो ? किसके लिये ? मेरे लिये मत दो।"

"सिर्फ तुम्हारे लिये नही। तुम्हारे बड़े भाई फिलिप्योस ने चौराहे पर मुझे ऐसा लताड़ा कि सिर्फ पीटना ही शेष रहा। जैसे कि तुमने कहा वैसे ही वह भी कहता है कि लोगों के सामने चलना मुश्किल हो गया है। सो बोलो कि क्या करना है ? वही करूंगा। मैं कमजोर और निराश्रय हो गया। कोई बालिग आदमी मुझे सहारा देने नहीं रहा।"

कुंयेनाच्चन ने कहा—"वाह ! उसकी इज्ज़त। अपने बराबर लड़के का बाप नौकरानी को रखेली बनाये हुए हैं। शरम के मारे क्या उसका लड़का गांव छोड़ चला नहीं गया !"

दीनाम्मा डांटती सी बोली—"चुप रहिये। क्या किसीने यह बात पूछी थी? आये दिन बाबूजी को कुछ याद नहीं कि क्या कहना है, क्या नहीं कहना है।"

"यह सुनने पर जवाब दिये बिना कैसे रहें?"

"हां, बड़े काम के बीच में छोटी बातें—मात्तुक्कुट्टि।

कुंयप्पि ने आगे कहा—"दादाजी ने ठीक ही तो कहा। इसे जाने दो—कुंयु-चेरुक्कन चाचा के बेटे को चोरी के मामले में पुलिस ले गयी। क्या यह इज्जत की बात थी?"

"अरे वह अब ठीक है। मगर घर की औरतों की बदचलनी तो ऐसी बेइज्ज़ती है कि बरदाश्त नही हो सकती। तुम सुबह से शाम तक दफ्तर में घुसे बैठे रहते हो। मैं देर तक घूमनेवाला हूं।"

वे बात कह ही रहे थे कि एक टैक्सी फाटक पर रुकी। टैक्सी का दरवाजा खोलकर दो व्यक्ति बाहर निकले। सब दंग रह गये। कुट्टिअम्मा और नोटपुस्ता-वाले तोमस मास्टर!

कीवरीत उठा। दीनाम्मा और कुंयप्पि ने एक दूसरे की आंखों में देखा। मात्तु-क्कुट्टि ने कीवरीत को देखा। न जाने कहां से एक-एक करके आंगन में बीस-तीस आदमी जमा हो गये। खतरे से डरते हुए कुट्टिअम्मा कदम फूंक-फूंक रखती भीतर आयी। पीछे तोमस मास्टर भी थे। कोई कुछ नहीं बोले। कुट्टिअम्मा कुंयेनाच्चन की खटिया के पास आकर खड़ी हो गयी और भयभीत दृष्टि से सबके चेहरों की तरफ देखा। हत्यारे को देखती आंखे! कुट्टिअम्मा कीवरीत के पैरों से लिपटकर रो उठी।

"मैं यह सहन नहीं कर सकती, पिताजी। सहन नहीं कर सकती······"

कीवरीत ने मौन हो बेटी को उठाया।

मात्तुक्कुट्टि तोमस मास्टर के पास जाकर बोला—"क्या तुमने शरीफ मर्दों के लायक काम किया! किसने तुम्हें इस अहाते में पांव रखने की अनुमति दी? निकलो बाहर······"

कुंयप्पि ने आगे आकर कहा—

"कुछ न बोलना। चाचाजी, एक लफज तक न बोलना।"

तोमस मास्टर बोले—"गाली दो या मारो-पीटो। मैं कुट्टिअम्मा के लिये सब कुछ बरदाश्त करने के लिये तैयार होकर आया हूं। स्कूल से कुट्टिअम्मा को घर

ले जाने की बात सही है। अपनी बीमार मां को दिखाने के लिये ले गया था। और कोई अविवेक नहीं किया। मगर, एक बात है। हमने साथ जीने का निश्चय किया है। उसकी अनुमति देकर हमें अनुगृहीत करें······"

आगे भी बड़ी देर तक खामोशी रही। दर्द की सांस घुटती थी। काफी देर बाद कीवरीत ने कहा—

"पिताजी से माफी मांगो री।"

कुट्टिअम्मा घुटने टेककर बैठी। दादाजी के चरणों को चूमा। आंसुओं से उसने उन चरणों को भिगो दिया। अब मुख ऊपर उठाकर दादाजी को देखा। मेरा अंतरंग मन दादाजी सबसे अधिक जानते हैं। मैंने अपराध नहीं किया है। उड़ते-उड़ते थककर लौटते समय कहीं लेटकर झपकी लेने के लिये एक घोंसला खोज गयी थी। अगर न खोजूं तो रास्ते पर जलकर क्या गिर न जाऊंगी ? उसके दुःख भरे मुखमडल पर ऐसे कई भाव लिखे थे। कुयेनाच्चन ने उन्हें पढ़ लिया और कहा—"कीवरीत !"

"क्या है पिताजी ?"

"भाई-बंधुओं और मित्रों को बुलाकर इस लड़की को इस मास्टर के साथ सम्मानपूर्वक बिदा करो।"

मात्तुक्कुट्टि ने व्यंग्य भरे शब्दों में कहा—

"बिदा करने को क्या रखा है। वे तो हो आये हैं न ?"

"चुप रह रे वदतमीज। वेटी, तुम घर जाओ।"

पिता के साथ कुट्टिअम्मा गयी। टैक्सी में तोमस मास्टर लौटे। धीरे-धीरे भीड़ भी छंट गयी। कुयेनाच्चन वैसे ही बैठे रहे। मन पर बड़ा भारी बोझ दबाता रहा, मानो कोई भारी चीज मन पर रखी हो।

"बेटी ! थोड़ी सी कंजि देना।"

"क्या दवा खाने के लिये पिताजी ?"

"हूं।"

एक गोली निगल ली और कंजी पी ली। आराम मिला। थो ी देर बाद नसों का तनाव कम हुआ। भीतर का भार गलता जा रहा है। पिछले दृश्य अब अधिक स्पष्ट दीखते हैं। भयभीत होती हुई आनेवाली शरण मांगनेवाली दृष्टि······जो हो, यह थोड़ा ज्यादा हो गयी बेटी,······यह भविष्य में तुम्हारा नुकसान करेगा। तुम्हारे

बेटों का नुकसान करेगा। पड़ोस का मुर्गा जब दाने कुतराये तब पड़ोसिन से तुम्हारा झगड़ा शांत भी हो सकता है। तब भी वह कहेगी—

"मैं चार लोगों के आशीर्वाद से किसी के साथ घर बसाने आयी हूं। किसी के पीछे भाग नहीं आयी।"

तुम्हारी बेटी सयानी होने के बाद किसी की ओर देख हंस पड़े तो एक चुगलखोर औरत कहने लगेगी—

"पहले समझना है कि यह किस मां की बेटी है।"

तुम्हारी बेटियों का प्रस्ताव जब होगा तब भी कोई इस कालिख की ओर इशारा करेगा। कोई तुम्हारे झेले मानसिक कष्ट के बारे में नहीं सोचेगा। कोई याद नहीं रखेगा कि तुम एक ही पुरुष की रही थी और वह शुद्ध व पवित्र है। यह संसार की प्रवृत्ति है। उन्हें कहने दो। तुम्हारा अंतरंग स्वच्छ है तो वही काफी है। यही क्यों, किसे जिंदगी में कोई न कोई कलंक की बात सुननी नहीं पड़ी है!

बेचारे कीवरीत ने यहां तक नहीं सोचा था। सच है कि वह अपना बोझ एक लड़के के कंधे पर उतार नहीं सका। और चारों को जवानी में बच्चे मिले—सिर्फ उसके बच्ची हुई—

"ईश्वर की इच्छा है रे!"

एक वृद्ध रूई सी सफेद दाढ़ी और मूंछ को संवारता सामने खड़ा है। हंसता है। निस्संकोच बगल की कुर्सी पर बैठता है।

"मेरे बारह बच्चे हैं।"

"बारह?"

"हां, तुम जानते ही हो। सबसे बड़ा रूबेन। सबसे छोटा बन्यामीन।"

कुंयेनाच्चन ने मुंह हथेली से ढके खड़े-खड़े पूछा—"तो क्या बारहों इसरायलगोत्रों के पिता याकूब हैं?"

"हां, हां।"

"आप कहां से पधार रहे हैं?"

"तुम्हें देखने आया हूं। बूढ़े कमजोर तुमको बच्चों और पोतों के पीछे मन मसोसते देखा।"

"बच्चों में से एक-एक को अलग-अलग तरह का दुःख है पिताजी!"

"तो तुम क्या कर सकते हो; तुम खाली हाथ लड़ाई के मैदान पर आये थे न?

तुमने दुश्मन के हाथ से भाला-तलवार छीनकर युद्ध किया। घातक चोट लगाने पर भी गिरे बिना लड़ाई लड़ी। अब तुम्हारे बच्चे लड़ें। ताकतवार तो डटा रहेगा। वरना गिर जायेगा। उससे तुम्हारा क्या ?"

"जी हुज़ूर !"

"उत्पत्तिग्रंथ—उनचासवां अध्याय तुमने क्या नहीं पढ़ा है ? मेरे बारह बच्चे बारह तरह के थे। सबसे बड़ा रूबेन मेरी शक्ति का प्रथम फल था। मगर उसने मेरे बिस्तर पर चढ़कर उसे अपवित्र किया। कहानी जानते हो ?"

"हां, जानता हूं।"

"दूसरा शिमओनऔर तीसरा लेवी बड़े हिम्मतवर और बिना सोचे-विचारे काम पर कूद पड़नेवाले थे। चौथा यहूदा बालसिंह था। उसे मैंने राजदंड और राज-चिह्न सौंप दिया। सेबलून जहाज का मल्लाह था। यिस्साखान शारीरिक शक्ति का धनी जेसिन गधा था, अक्लमंद नहीं रहा। मगर काम खूब करता था। दान ईमानदार था। लुटेरों के दल ने गादो को बुरी तरह दबा डाला। आशेर राजकीय वैभव के अनुरूप स्वादिष्टभोजन करता।······यों बारह लोग अपनी-अपनी रुचि और शक्ति के अनुकूल जीते रहे। गोत्रों की स्थापना की। उनकी वृद्धि और विकास होता गया।"

"वे सब बातें बंदा जानता है।"

"हां, तो तैयार रहो। अब संसार से तुम्हारा मतलब ?"

"तैयार हूं।"

रूई से पके दाढ़ी-मूंछ के बालों को संवारते मुस्कुराये। मानो पूछ रहे थे कि "मूर्ख ! तुम तैयार कहां ? मुझसे दगा करना चाहते हो ?"

"अरे, यह कौन ? कोई वैदिक आ रहा है।"

कुंयेनाच्चन ने मुड़कर देखा।

"मेरे साले का बेटा है। पर है नीच। पुरोहित के पवित्र वस्त्र को कलंकित किया है। विधवा से अवैध संबंध कर बच्ची पैदा करनेवाला है।······"

"अच्छा ! तो इसे यहां क्यों आने दिया ?"

"निकल जा सांड पादरी ! कीवरीत, कुंयुचेरुक्कन······सब आ जाओ। इस बदमाश को पकड़कर बांध डालो। मेलोझन्निल कुंयुनैना के······"

फादर के मुखमंडल पर वही सहज व्यंग्य की हंसी। वह देखकर क्रोध को दबा

नहीं सके। हाथ बढ़ाकर गाल पर थप्पड़ दे मारा—

"हाय !"

दीनाम्मा और शांतम्मा दौड़ी आयीं। खटिया से नीचे गिरा चाहते थे। मुंह के बल खाट थामे पड़े हैं। दोनों पांव ज़मीन पर।

पकड़कर खटिया पर लिटाया।

"बाबूजी यह क्या कर रहे हैं ?"

"........."

"दादाजी !"

"एं।"

"क्या सपना देखा ?"

"नहीं तो। कार्तिकप्पल्लि के पादरी यहां आकर गये कहां ?"

दीनाम्मा ने कहा—

"यहां न कोई पादरी आये न सहायक !"

दस

मात्तुक्कुट्टि ने दीनाम्मा के केश-मुट्ठी को जबरदस्ती पकड़ लिये हैं।

......हरामजाद !—"बोल ! मेरे जाने बिना किसी के हाथ से पैसे क्यों लिये ?"

बिना झिझके दीनाम्मा ने कहा—

"मैंने किसी से पैसे नहीं लिये।"

"तो तुम्हारे कपड़े की संदूक में पैसे कहां से आये ?"

"मैंने कहा न कि पिताजी ने लिये और उन्होंने ही रखने दिये।"

"तो मेरे आने पर क्यों वह बात बतायी नहीं ?"

अब दीनाम्मा के पास जवाब नहीं रहा। उसने सोचा नहीं था कि यह परिस्थिति आयेगी। पैसे की तंगी होने पर बड़ी रकम पेटी से निकाल कर दिखाने और चौंकाने का ही ख्याल था......

मात्तुक्कुट्टि क्रोध से कांप रहा है। इससे भी बढ़कर बेइज्जती कैसी ? ऐसा

गुस्सा आया कि गरदन मरोड़ दे। कुंयेनाच्चन भयभीत हो गये। खटिया पर उठ बैठे और कई बातें कहीं, दुःखड़ा रोये। बड़बड़ाते रहे।

"बहू की गलती नहीं है रे। उसे डांटो मत।"

"चुप रहिये। मेरी······नब्बे साल के हो गये। अब भी होश नहीं। क्या बेसुध है?······री, मेरे सवाल का जवाब दे—"

बात यहां तक बढ़ी कि अब थप्पड़ पड़ेगा। किवाड़ की आड़ में खड़ी शांतम्मा सामने आयी और दृढ़ स्वर में कहा—

"क्यों चाची को मार रहे हैं चाचा? रुपया देने और लेने की बात मैंने देखी थी। कल्लुविला के दानिक्कुट्टि भैया ने पिताजी को रुपये दिये। चाची ने वह पैसा भीतर सुरक्षित रखा, बस इतनी ही बात है।"

मात्तुक्कुट्टि का हाथ रुक गया। आज तक सीधी आंख उठाकर जिस लड़की ने देखा नहीं जिसने जोर से बातें नहीं की हैं उसी ने······

"अरी, तो क्या वह बात मुझसे नहीं कहनी थी?"

"न कहकर गलती अवश्य की। बड़ी जरूरत पड़ने पर देने के लिये सुरक्षित रखा था।"

मात्तुक्कुट्टि ने केश छोड़े। वह मुड़कर चार कदम चला। और करे ही क्या? आज तक उसने पत्नी के बदन पर चुटकी भर मिट्टी तक नहीं डाली है। बड़ी से बड़ी तकलीफ के वक्त पर भी पैसे की बात को लेकर झगड़ा नहीं किया है। घरेलू बातों का सारा का सारा प्रबंध प्रायः वही करती थी। मगर इतनी बेवकूफी करे, तब?

कुंयेनाच्चन ने कहा—

"तो मैं क्या करू रे? बच्चे अगर चार पैसे दें तो क्या लेकर अपना खर्चा चला नहीं सकता?"

"ले जरूर सकते हैं। मगर ऐसे लोगों से ही लेना चाहिये। क्या पिताजी ने उनकी गंदी बातें सुनीं जो उन्होंने नाके पर बतायी थीं? कह रहे थे कि हम अब तक उनके आयुष्मान के सारे रुपये छीनते रहे हैं। क्या यह आरोप काफी नहीं?"

"उसकी जीभ में हड्डी नहीं है। मां-बाप से प्यार नहीं है।"

"ये सब बातें यहां बैठे-बैठे कहियेगा। अच्छा। लड़के ने दिया। आपने लिया।

तो लौटाया क्यों ?"

"सो मेरे कहने से। पुलिस जब उसे कैद कर ले गयी तब कुंयुचेरुक्कन इस बरामदे पर पड़ा बहुत रो रहा था। उसका दुःख देखकर रहा नहीं गया। मन में दया आयी। इसलिये दिया।"

"पिताजी की दयालुता से ही इन सबकी यही हालत हो गयी।"

दीनाम्मा बोली—"कुछ नहीं कहना। मेरी फूटी किस्मत है। सारे कष्ट झेलने की मजदूरी मिल रही है।"

"मेरी खोटी किस्मत है, बेटी। अपराधी क्या मैं नहीं हूं जो दिन-रात इस घर का कामकाज संभालने वाली तुम पर यह बदनामी आ पड़ी। मेरे पापों को परमात्मा दंड दे रहे हैं। जैसा कि अय्यूब ने विलाप किया था—मेरा विभव उसने हर लिया है। और मेरे सिर पर से मुकुट उतार लिया है। मेरा आसरा उसने वृक्ष की नाई उखाड़ डाला है। मेरे प्यारे दोस्त अनजान हो गये हैं। मेरे घर पर रहने वालों की दृष्टि में मैं परदेशी हो गया हूं।"

"बाबूजी, चुप रहिये।"

मां की डांट सुनकर चौंके बच्चे की तरह कुयेनाच्चन ने झट मौन धारण किया। सहमी नजर से चारों तरफ देखा। जैसाकि मात्तुक्कुट्टि ने कहा, क्या वे बेसुध हैं ? क्या उनका मनोबल टूट गया ? वे अनाथ हो गये हैं कि सरकारी जमीन की तरह उस पर कोई भी कब्जा कर ले। अपने ही तंबू में उनके दुश्मन छल कर रहे हैं......

"आगे कोई मेरी जानकारी के बिना इस अहाते में पांव न रखने पाये। बताये देता हूं।"

मात्तुक्कुट्टि बाहर चला गया। दलीलें पेश तो कीं। फिर भी दीनाम्मा ने सोचा कि गलती मेरी भी तो है। समझ-बूझकर तो नहीं किया। फिर भी भूल भूल ही रहेगी। कोई मर्द इसे बरदाश्त नहीं कर पायेगा। अयाचित रूप से पांच सौ रुपये मिले तो खुद कुंयुचेरुक्कन को कुछ ताज्जुब हुआ। दो दिन बाद औरतों के समाज में फिसुर-फिसुर बातें होने लगीं। दिया होगा हजार ! कौन जाने ? कई दफे दिया होगा ! दीनाम्मा ने सोचा—यह बात जरा टेढ़ी है। सच्ची बात खोल देनी चाहिये। वरना मन में अखरती रहेगी। दीनाम्मा कल्लुविला घर गयी। उसको देखने पर शोशम्मा का चेहरा फूल गया। बड़ी बेटी चेल्लमा का भी। जब घटना

सुनाने लगी तभी मां और बेटी के गालों पर व्यंग्य और अविश्वास झलकने लगा।

"मेरी चाची, आधी रात के बाद दादाजी पुकारते हुए दानिक्कुट्टि आया। मैं सो रही थी। पुकारते सुनकर उठी और जाकर देखा तो पहचान भी नहीं सकी।······"

चेल्लम्मा ने पूछा—"पहचानने का सवाल कैसा ? क्या चाची ने दानिक्कुट्टि भैया को नहीं देखा है ?"

"मेरी चेल्लमा, तीन-चार साल बाद पहली बार उस समय दानिक्कुट्टि को देखा।"

शोशाम्मा ने झट जवाब दिया—

"चुप रहो दीना। कहा कि पिछली बार भी वहां आया था।"

"कौन ? दानिक्कुट्टि ?"

"जाने से क्या हुआ मां ? क्या पराया घर है ?"

"मगर झूठ क्यों बोलती है ?"

इतने पर भी अपने को रोकती हुए कहा—

"इधर कोई झूठ नहीं बोलती। झूठ बोलने का मतलब भी कुछ हो ?"

"मतलब तो तुम्हें मालूम। सच कहने पर क्या सब जान नहीं लेंगे कि घर के भीतर बुलवाकर कितना छीन लिया ?"

अब अपने को रोक नहीं सकी—

"यह तुम्हारा ही धंधा है।"

"छि: जा जा······बाप और भाई का फरक न समझने वाली।"

आगे जो कहा और सुना, कुछ याद नहीं। सुनाया खूब। जब बात इतनी बढ़ गयी तब कैसे चुप रहें ?

घर लौटी तो कुंयेनाच्चन को भी रोष भरी आवाज ही में सब बातें सुनायीं।

कुंयेनाच्चन यह किस्सा सुनकर चौंक उठे ! अंग-अंग ढीला हो गया।

"छड़ी देकर पिटाई खाने की बात हो गयी बिटिया !"

"सब कुछ बरदाश्त करेंगे। जब सिसिली मुन्नी के पिता यह जानेंगे तब खून हो जायेगा। इन लोगों के बीच में चैन से रहना भी मुश्किल हो गया······"

सोचा था कि उस दिन शाम को मात्तुक्कुट्टि के आने पर बिस्तार से सब बातें

सुनायेगी। मगर वह कैसे ? घर पर एक घड़ी तक रहें, तभी तो कुछ कही जा सकती है। आते समय चार खुशामदी साथ लगे रहते हैं। हर कहीं भी जाय, चार-पांच आदमी साथ होंगे। जैसा कि राजन बेटा कहता है, हुकूमत करते फिरते हैं। एरुनाकुलम या निरुवनंतपुरम जाने की तैयारी में कपड़े बदलने के लिये ही आते। आधे घंटे में चले भी जाते। उस बीच ये सारी बातें कैसे बता सकती थीं।

शांतम्मा ने कहा—"यह एक सबक हो जाय, चाची ! अब पछताने से या मन मसोसने से क्या लाभ ? ईशो सब जानता है।"

"फिर भी बिना कुछ किये-सोचे यह बदनामी सहनी पड़ी है न बिटिया ?"

"बिना जाने समझे ही इससे सख्त अपमान झेलने वाले भी हैं चाची। जब अपने ऊपर पड़ता है तभी पता लगता है।"

दीनाम्मा ने समझ लिया कि शांतम्मा का मंतव्य क्या है ? फिर भी कोई उत्तर नहीं दिया। जाकर खाट पर पड़ी रही। अधिक से अधिक संभलकर जीवन बिताने पर भी अप्रत्याशित भंवर में फंस जाते हैं। दानिक्कुट्टि का दिया पैसा लेते समय ऐसे खतरे का सवाल सपने में भी नहीं था। यह सोचकर कि कुछ राहत मिली कठिनाइयों का हल हो गया है। तेल, उबटन, अफीम वगैरह के पैसे के लिये अब किसी को तंग करना नहीं पड़ेगा। सोचा तो यही। पर हुआ कुछ और। कल्लुविला की चाची का आरोप सुनने वाले थोड़ा बहुत यकीन भी करेंगे। कहते हैं कि सिर्फ पांच सौ दिये। इसके लिये गवाही कहां है ? कहते हैं कि एक ही दफा आया। इसका भी कोई प्रमाण नहीं है।

शांतम्मा ने सिसिली मुन्नी को नहलाया। सिर्फ उसके लिये बनाया पकवान और काफी दी। धुली पोशाक पहनाकर स्कूल भेजा। चूल्हे पर तैयार होती कंजी ठीक वक्त पर उतारी। आम की चटनी पीस ली। पापड़ तले। दादाजी को दतौन पानी ला दिया। हाथ का सहारा देकर उठाया। इतना करने के बाद रोज की तरह चाची के पास जाकर बोली—

"उठकर कंजी पिलाइये चाचीजी !"

"कुछ कर नहीं पाती बेटी। दादाजी को पिलाकर तुम भी कंजी पी लो।"

"उठिये चाची ! बूढ़े दादाजी का जी ज्यादा मत दुखाइये।"

हठ करने पर दीनाम्मा ने उठकर हाथ-मुंह धोया और चौके में आकर कंजी परोस दी।

शांतम्मा कंजि लेकर कुंयेनाच्चन के पास गयी तो उस समय वे खटिया पर लेटे थे। चेहरे पर एक दुःखपूर्ण भाव था ! मानो, अचानक किसी ने थप्पड़ दिया हो !

"दादाजी !"

"एं।"

"कंजि पीने के लिय उठिये न ?"

"उसे आने दो।"

"कौन ?"

"सबसे बड़ा। सुबह-सुबह कुछ भी बिना खाये-पिये गया है न ?"

शांतम्मा ताकती रह गयी।

"कुंयहम्मद राउत्तर पिछली सोलह तारीख को कोल्लकटव से वह बुंदकीवाला बैल ले गया। अब तक पैसा नहीं दिया।"

"दादाजी !"

कैसी दीनतापूर्ण दृष्टि ! बंधन में पड़ा एक लाचार बुढवा बैल मार पड़ने पर छुटकर दौड़ने की कोशिश करके हार गया। जैसे सौ मील दौडने की थकावट से हांफते हैं। पसीने से तर हैं। शांतम्मा डर गयी।

"दादाजी !"

कुंयेनाच्चन की आंखों से बिना बादल के, बिना गर्जन के होने वाली बारिश की तरह आंसू उमड़ आये। उन्होंने आंखें बंद कर लीं।

शांतम्मा चीख पड़ी—

"चाचीजी ! यह देखा ?……"

दीनाम्मा दौड़ी आयी

"बाबूजी !"

"दादाजी !"

हिलते नहीं। बेहोशी ! आंखें खोलने की कोशिश तो कर रहे हैं—खोल नहीं पाते। बोलने का प्रयत्न करते हैं—बोल नहीं पाते।

दीनाम्मा ने आत्मगत-सा कहा—

"हे पिता ! यह कैसी सजा है।"

काफी देर के बाद कुंयेनाच्चन ने आंखें खोलीं—मानों अभी नींद खुली।

"पिताजी ! क्या तबीयत ठीक नहीं है ?"

"अरी, कुछ नहीं।"

"कुछ नहीं ? याद है कि अब क्या-क्या बड़बड़ाये थे ?"

"हां।"

"क्या इन तकलीफो से जी नहीं भरा, जो दादाजी अपनी ओर से और भी तंग करते हैं ?"

"............"

"कंजी लाऊं ?"

"लाओ।"

बड़े चाव से कंजि पीने लग। मगर चार चम्मच पीते ही जी भर आया। फिर पसीना छूटा। थककर खटिया पर लेट गये।

दीनाम्मा और शांतम्मा कुंयेनाच्चन को हरी चादर से ओढाकर चौके में गयी। दीनाम्मा बोली—

"मन का कष्ट बहुत बढ़ गया। सहन करने की ताकत नहीं रही।"

दोपहर का वक्त। शिवरामकुरुप कुंयेनाच्चन से बातें कर रहा था कि दो व्यक्ति फाटक पार कर आये एक कार्तिकप्पल्लि के फादर। दूसरा शांतम्मा की मां।

"आइये ! फादर। देखे, बहुत दिन हो गये।"

कुरुप की बातें सुनकर दीनाम्मा बाहर आयी और देखा तो सकपका गयी। चेहरा सर्द हो गया। दोनों साथ-साथ आये हैं। न हिचक न संकोच। चार-पांच महीने पहले ही फादर को देखा था। ब्याह को निमंत्रण देने गयी तो सिर्फ फादर के घर नही गयी बगल वाली बड़ी बहन के यहां जाकर उन्हें न्योता दिया। घर से ताकीद कर दिया था कि फादर के घर पर कदम न रखना। इस घटना के कारण बड़ी शिकायत और लताड़ सुनना पड़ा······

कुरुप के निमंत्रण के उत्तर में फादर सिर्फ हंसे। भीतर आये और कुंयेनाच्चन की खटिया के पास खड़े उन्हें अपलक आंखों से थोड़ी देर तक देखते रहे। लंबी उसांस भरी। शांतम्मा की मां भी पास ही खड़ी थी।

कुरुप ने कहा—

"कुंयेनामप्पिला को आज कुछ ज्यादा थकावट महसूस हो रही है।"

"मामा ने क्या मुझे नहीं पहचाना ?"
"कौन ?"
फादर ने उत्तर नहीं दिया। दीनाम्मा ने कहा—
"कार्तिकप्पल्लि के फादर हैं बाबूजी !"
"कब आये ?"
"अभी आया मामाजी ?"
"क्या यहां कहीं नहीं थे ?"
"क्या डरकर कहीं भाग सकते हैं ?"
दु:ख-भीनी होते हुए भी फादर की सहज हंसी ने कमरे को गुंजा दिया।
"दूसरा कौन ?"
"शांतम्मा की मां।"
कुरुप ने कहा—
"देखते ही मन में संदेह हुआ। पूछने की इच्छा थी। देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई।"
दीनाम्मा बोली—
"पिताजी के दोस्त हैं कुरुप।"
"बिटिया कहां है दीनाम्मा ?"
"नहाने नदी के घाट पर गयी है।"
कुछ व्यग्र-सी शांतम्मा की मां ने पूछा—
"इस दोपहर को ?"
"कपड़े धोने थे। साथ लोगों को भेजा है।"
कुरुप ने कहा—
डरने की कोई बात नहीं है। पूरे इलाके में कुंयेनामाप्पिला के ही घरवाले हैं।"
"मामाजी को कमजोरी महसूस हो रही है ?"
"कमजोरी ?"
"हां।"
"झड़ी हुई पीढ़ी का आखिरी पन्ना ! गांठ डंठल से छूट रहा है।"
"हां मामाजी, तैयार रहना चाहिए।"
कुरुप बोला—
"ओह ! कैसी दार्शनिकता ! अपरंपार ! फादर ? असल में कुंयेनामाप्पिला

से घनिष्ठता हो जाने पर कोई भी ईसाई मन पर विश्वास अवश्य करेगा।"

कुंयेनाच्चन का ध्यान यहां नहीं था।

"मगर, एक बात है······"

"क्या ?"

"दुष्ट लोग जीते हैं। उनकी ताकत बढ़ती है। प्रभु का डंडा उन पर नहीं पड़ता। सो क्यों ? जैसाकि अय्यूब ने पूछा—वह क्यों होता है ?"

"मामाजी, अय्यूब की ही पुस्तक में उसका जवाब भी दिया है। ईश्वर मनुष्य का अकर्म उसकी संतानों के लिए सुरक्षित छोड़ता है।"

कुंयेनाच्चन की बातें जारी थीं—

"यहोवा मूसा से कहते हैं—अहरोन के पुत्र पुरोहितों से यही कहो कि जिस पुरोहित के सिर पर अभिषेक का इत्र डाला गया है, समावस्त्र धारण करके जो प्रतिष्ठित है उस पुरोहित को क्वांरी लड़की से ही ब्याह करना चाहिए। विधवा, परित्यकता, दुश्चरित्रा या वेश्या को स्वीकार नहीं करना चाहिए।"

"हां ठीक है। मगर मामा अब यह क्यों कह रहे हैं ?"

"कारण ?"

"हां।"

दीनाम्मा ने उतावली करते हुए कहा—

"चुप रहिए बाबूजी। याद है कि क्या कह रहे हैं ?"

फादर ने रुखाई से कहा—

"तुम काहे को डरती हो ? मामा का कथन बेहोशी की बकझक भी हो, पर मेरे सुनने से कोई आफत नहीं होगी।"

दीनाम्मा की घबराहट कम नहीं हुई।

"तो कुरुपजी जाइये !"

अब भी फादर हठ छोड़ने को तैयार नहीं थे।

"क्यों ? कुरुप जी यहीं रहें। मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं जो मामा के प्यारे व घनिष्ठ मित्र कुरुप भी सुन लें। दीनाम्मा, तुम मत घबराओ। यह मेरी फूफी का ससुराल है।"

इस पर भी दीनाम्मा ने मनाने का प्रयत्न नहीं छोड़ा—

"फादर की मामी का घर ही है। सो मुझे भी मालूम है। मगर पिताजी के

दिमाग की खराबी से कुछ बक गये तो उससे आप बुरा न मानें।"

"ओह ! यह बात है। दिमाग की चपलता मामाजी को ही है न ? तुम्हारे पति के और बड़े भाइयों के दिमाग दुरुस्त हैं न ? क्या तुम्हारी बातें और बर्ताव ठीक थे ?"

दीनाम्मा में फादर का सामना करने की हिम्मत नहीं रही । शांतम्मा की मां की ओर आंख उठाकर देखने की भी ताकत नहीं। उनकी नजर में कैसी निर्भयता है ?

"ब्याह मेरी फूफी के पोते का। तिस पर इसका प्रस्ताव पुरोहित मैं लाया था। उस ब्याह के लिए मुझे निमंत्रण न भेजने का कारण क्या है ?"

दीनाम्मा पैर के अंगूठे से जमीन पर लकीरें खींचती सिर झुकाये खड़ी थी।

"क्या तुम्हें कुछ जवाब देना नहीं है, दीनाम्मा ?"

"मैं क्या कहूं ? ब्याह का निमंत्रण मर्द ही तो देते हैं।"

"अपनी बड़ी दीदी और बच्चों को तुम्हीं ने तो निमंत्रित किया। सो भी मेरे पड़ोस में। फिर दूसरी दीदी और बच्चों को क्यों निमंत्रण नहीं दिया ?"

दीनाम्मा अब भी चुप।

"जवाब नहीं है। है न ?"

"क्या मेरी इच्छा के अनुसार निमंत्रण भेजने का निर्णय किया जाता है ?"

"अपनी पसंद के अनुसार कुछ मत करो। पर तुम्हें मालूम है कि क्यों नहीं बुलाया। वह कारण तो कहो। सुनें।"

दीनाम्मा परेशान हो गयी।

"हिचकती क्यों हो ? जब रोग छिपाकर दवादारू करने की दशा बीत जाती है तब रोग के बारे में सबको मालूम होगा ही।"

"जो हो चुका सो हो चुका न ? अब वही पुरानी बातें दुहरानें से······"

"क्या हो चुका ? मन से या वाचा कोई अपराध न करने वाली एक लड़की तुम्हारे घर में तड़प रही है। अभागिनी कन्या को अपने पिता का चेहरा देखना तक नहीं बदा था। फिर भी वह एक पिता की मूर्ति अपने मन में रख उसकी पूजा कर रही थी। नबी एलीसा की तरह तुम्हें भी एक दिव्य संदेशा मिला—इस लड़की का बाप दूसरा है। है न ?······"

"ये सब बातें किसने फादर से कहीं ?"

"वाह ! तुम लोगों ने धर्म-प्रदेश के सारे लोगों को बुलाकर जिस बात पर विचार-परामर्श किया वह दूसरे लोग भी नहीं जानेंगे ? यह खूब रही ।"

अब पहली बार शांतम्मा की मां बीच में पड़ी ।

"कोई मेरे अपमान की बात सोचकर चिंतित न हो । अबला और विधवा नारी कितनी ही आस्तिकता से क्यों न जियें, वह मानव-समाज के अपमानकारी अभियोगों से बच नहीं सकती । यह मेरे अपने अनुभव की बात है । इतना ही है कि प्रभु के सामने अपराधिनी न बनूं । मैंने अपनी बेटी को इतनी सावधानी से पाला है कि वह न धूप में मुर्झायेगी, न आग में झुलसेगी । ये सब बातें सुनकर वह आत्महत्या नहीं कर डालेगी ।"

कुरुप बोला—

"मैं अभी फादर के कहने से ही यहां खड़ा रहा । आप लोग जहां पारिवारिक बात की चर्चा करते हैं वहां मेरा कोई काम नहीं । फिर भी जितना सुना, उसके आधार पर कह रहा हूं । सब कुछ गलतफहमी है । ये सब बातें सिसिली मुन्नी की मां या कुंयेनाच्चन को मालूम नहीं हैं ।"

फादर ने कुरुप के चेहरे की तरफ नजर डाली । उपहासपूर्वक मुस्कुराये :—

"कुरुप राजसाक्षी बन रहे हैं । है न ? जब मैंने इसकी दीदी से ब्याह किया तब इसकी उम्र सिर्फ चार वर्ष की थी । यह मेरी छोटी बहन के रूप में बढ़कर बड़ी हुई । मगर किसी चुगलखोर की बातें सुनकर इसने भेदिया का काम किया ।"

"क्या यह संभव है ?"

"थोड़ी देर पहले मामा ने एक पुरोहित की उपमा दी न ? वह मुझे लक्ष्य करके दी थी । नहीं तो मामा ही कहें ।'

दीनाम्मा घबरायी हुई बोली—

"बकझक करते बाबूजी से क्यों ये सब बातें कहलाते हैं ?"

"कोनच्चिरा के एक आदमी ने यहां आकर कहा था ।"

"हां, क्या कहा ? सुनें मामाजी ।"

पकड़े जाने पर अपना अपराध स्वीकार करते मजबूर बालक की तरह कुंयेनाच्चन ने दीन दृष्टि से चारों तरफ देखा । खामोशी । रेत तक गिरे तो सुन पड़े ।

कुछ पके दाढ़ी मूंछों वाले मुंह पर निर्भयता थी । बीच-बीच में उपहास का रंग भी नजर आता था ।

अचानक मिट्टी का घड़ा नीचे गिरकर चकनाचूर हो गया। आंगन से जोर की बातचीत की आवाज आयी। कीवरीत और मात्तुक्कुट्टि !

"तुम उसकी प्रकृति बचपन से ही जानते हो। अब बाली पर खाद देने से क्या फसल सुधरेगी ?"

"और किसी को क्यों कहें ? पिताजी की हां भूल है। दूसरे, यहां की श्रीमती की भी। उस छोकरे के दिये रुपये लेकर रख तो लिये। वह लौटाने की क्या जरूरत थी ? छड़ी देकर पिटा रहे थे न ?"

"अरे, बहुत कमजोर होने पर भी पिताजी को किसी संतान के मन का कष्ट देखने पर चैन नहीं रहता।"

मेहमानों को देखकर दोनों कुछ सकपकाये। घबराहट छिपाये हुए कीवरीत ने पूछा—

"फादर कब आये ?"

"थोड़ी देर पहले।"

"दोनों साथ-साथ आये ?"

"हां।"

आगे पूछने के लिए कुछ नहीं रहा। इसलिए पिता से पूछा—"सुना कि पिताजी की तबीयत कुछ बिगड़ी है, अब तबीयत कैसी है ?"

"कीवरीत है न ?"

"हां, पिताजी !"

"अरे, फादर पूछ रहे हैं कि कोनाच्चिरा वाले लोनान ने यहां आकर क्या कहा। तुम बताओ।"

अचानक बंदूक की नोक पर खड़ा कर देने का सा अनुभव हुआ। कीवरीत और मात्तुक्कुट्टि ने छिपकर शांतम्मा की मां को देखा, दीनाम्मा को भी।

कीवरीत को मालूम हुआ कि संकट को पार करना मेरा फर्ज है। इसलिए कहा—

"पिताजी यह क्या कह रहे हैं ? कौन से कोनच्चिरा वाले ? कौन से लोनान अब भी दिमाग कुछ बिगड़ा-सा लगता है।"

फादर ने कहा—

"नहीं, कीवरीत भैया, मामा ने सच कहा कि मैंने पूछा है। मैं वह जानने के

लिए ही आया हूं।"

छूटने का कोई रास्ता नहीं। बंदूक छाती के सामने साधी गयी है। फिर भी और एक बार कोशिश की—

"ओह! पूछा! सुना! फादर चुप रहें।"

"सो ठीक नहीं कीवरीत भैया। मैं यह बात शादी के पहले ही पूछ सकता था। मगर, शादी रुक जाती। उसे गलत मानकर नहीं आया। अभी सही, इस बात का तथ्य जानना चाहिए।"

दलीलें सुन मातुक्कुट्टि को दिल में कुछ चुभा—"सच व झूठ तो करने वालों को मालूम होगा। वे अब यहां दुहराने से लाभ ?"

फादर कहां छोड़ने वाले थे ?

"अरे, वह तो घर के शोरों की ऊटपटांग बात है। अच्छे लोगों के बारे में गलत-सलत बातें करने के बाद अब कहते हो कि दुहराना नहीं ?"

"गलत-सलत बात कैसी ?"

"क्या कुछ नहीं कहा ?"

शांतम्मा की मां ने कहा—

"तुम लोग चाहे कुछ भी कहो, मेरा कुछ नहीं बिगड़ने का। मगर यदि मुझे मालूम होता कि तुम लोगों के दिल में जरा सी भी कुढ़न है तो मैं इस शादी की स्वीकृति न देती। मैं चौबीस वर्ष की उम्र में विधवा हुई। अपने बच्चों को सिखाने और बड़ा बनाने के लिए भूखी रही हूं। पर किसी का दिल दुखाने की नौबत नहीं आने दी है।"

वातावरण को हलका करने के लिए कीवरीत ने और एक बार कोशिश की—

"सौ घड़ों का मुंह तो बंद कर सकते हो। एक आदमी का मुंह बंद कैसे करोगे ?"

शांतम्मा की मां इस पर ध्यान न देती सी बोली—

"भैया की छोटी लड़की की उम्र की ही हूं। अब छिपाने को क्या रखा है ? आस्तिक के घर में प्रभु पर जीवन समर्पित करती बड़ी हुई थी। दिव्य संदेश के प्रचार के काम में बाधा पड़ने के डर से ब्याह के बाद भी वर्ष भर भाई-बहन बनकर रहने का व्रत लिया गया उसे निबाहा भी था। यहां किस्सा गढ़ लिया गया कि मैंने पति के मरने के बाद एक पुरोहित से गुप्त संबंध कर लिया।"

"किसने कहा ?"

"पता नहीं, किस-किसने कहा ?"

मात्तुक्कुट्टि ने चिढ़कर पूछा—

"किसीने कुछ कहा होगा। उसका जवाब यहां के लोग कैसे दें ?"

फादर भी रियायत करने को तैयार नहीं थे।

"मुंहफट बातें मत करो मात्तुक्कुट्टि। यह कारण बताते हुए क्या तुम लोगों ने ब्याह स्थागित करने का प्रयत्न नहीं किया ? लड़के के हठ को मानकर ही बाद में राजी हुए न ? यह खबर ठीक नहीं है तो बोलो कि नहीं······ईश्वर के नाम पर······"

कीवरीत ने कहा—

"फादर कैसे इस तरह मन पर काबू बिलकुल छोड़ बातें करने लगे ?"

"बड़ा दर्द है कीवरीत। लकवे के मारे खाट पर पड़ी हुई मेरी मस्कियाम्मा ये मनगढंत किस्से सुनकर जहर खाने लगी थी—तुम जानते हो ?"

अपनी उपस्थिति से न्याय करने और प्रतिभा प्रकट करने के लिए कुरुप ने एक सम्मति खुद दी—

"यह तो आप लोगों की घरेलू बात है। फादर के कहने के कारण ही मैं यहां रुका था। ऐसी अफवाह—अभियोग की खबरें फैलाने वाला एक ही आदमी कुंयेनामाप्पिला के परिवार में है······

"कुंयुचेरुक्कन माप्पिला—"

मात्तुक्कुट्टि ने फटकारते हुए कहा—

"चुप रहो कुरुप। कैसी बेमतलब बातें करते हो ?"

इस पर ध्यान दिये बिना फादर बोलते गये।

"अगर आप लोगों को इसमें शक है तो मेरे साथ चलें। पुत्तनाट्टुकरा के गिरजे के कागजात दिखा दूंगा।"

कीवरीत ने शांतिपूर्वक कहा—

"कोई संदेह नहीं फादर ! आगे वह बात मत दुहराइये। किसी चुगलखोर की बातें सुनकर मूर्खता की कमजोर घड़ी में शक हो गया। उसे भूल जाइयेगा।"

आगे शांतम्मा की मां से कहा—

"मुझे अपने पिता के बराबर समझकर क्षमा कर देना।"

फादर बोले—

"हां। क्षमा करना। और क्या चारा है ? मन में सब्र कर न सकने से कह बैठा। पीने के पानी में जहर घोलने की तरह एक बूढ़े ने यहां आकर यह अफवाह फैला दी। आपको बताऊंगा कि वह बूढ़ा कौन है। वह पुत्तनाट्टुकरा के सबसे बड़े धनी पत्तोसमुतलालि का कारिंदा है। पत्तोसमुतलालि ने इस स्त्री को बहुत सताया। बात यह है कि उस धर्म-प्रदेश के पौरोहित्य के दिनों में मैंने उसके बुरे व्यवहारों का खंडन किया। इनके घर में मैं कुछ दिन जो रहा उसके आधार पर उन्होंने हम दोनों को जोड़कर लांछन की अफवाहें फैलायीं। धर्मप्रदेश में फूट करा दी।"

शांतम्मा की मां ने कहा—

"बस, आगे कुछ न कहें। एक ही प्रार्थना है। इस बात के पीछे मेरी बच्ची को और दुःख न देना। मैंने इसके आनंद व सुख के लिए जिंदगी भर कष्ट झेला है। इस अफवाह का कष्ट झेलने की ताकत मुझ में नहीं है।"

उन्होंने जब मुड़कर देखा तो द्वार पर शांतम्मा है। मां को अपराधिनी ठहराती सी देख रही थी।

"बेटी कब आयी ?"

नदी के घाट से बाल्टी भर धुले भीगे कपड़े लेकर शांतम्मा घर आ रही थी। तभी दादा की खटिया के पास जोर की बातचीत सुनी ! मां ! कार्तिकप्पल्लि के फादर ! सीधे आने के बजाय पिछवाड़े से आयी और कपड़े जल्दी ही सुखाने को छोड़े······

मां के सवाल का जवाब न देकर शांतम्मा ने पूछा—

"मां क्या ये सब पूछने के लिये यहां आयीं ?"

"नहीं तो जिंदगी भर यह लांछन सहती रह सकती हो ?"

दीनाम्मा ने कहा—"पूछकर देखिये शांतम्मा की मां, मैंने इसे अपनी सगी छोटी बहन के समान ही माना है।"

शांतम्मा की मां ने कोई उत्तर नहीं दिया। मन ही मन सोचा। अगर छोटी बहन मानती तो और एक स्त्री को घर पर आकर यह नीचतापूर्ण लांछन सुनाने देती ? कड़ी दोपहर को कपड़ों का गट्ठा देकर नदी के घाट क्या भेजती ?"

फादर बोले—

"मैं चलता हूं कीवरीत मैया !"

"थोड़ी-सी काफी तक पिये बिना……"

"ओ ! दोपहर को काफी कैसी ? अभी पत्तनंतिट्टा जाना है।"

दीनाम्मा ने कहा—

"भोजन के बाद जायें फादर !"

"बिना तैयारी के दो बाहरी आदमियों को कैसे भोजन खिला सकोगी ?"

"जो तैयार है बांट लेंगे……"

"अभी तो नहीं चाहिए।"

आगे हठ नहीं किया। उसकी आजादी अब नहीं रही। उसे याद आया कि पहले फादर का छाता छिपा देती। सहजन के पत्ते की सब्जी और सूखी सब्जी तैयार करने के लिये चौके में जाती। दीनाम्मा के मन का कष्ट मानो समझकर फादर न बोले—

"मुझे कोई बैर-विरोध नहीं है बेटी। और मैं क्या तुमसे दुश्मनी कर भी सकता हूं ?"

शांतम्मा की मां ने कहा—

"मैं भी चलती हूं फादर !"

मात्तुक्कुट्टि ने पूछा—

"अब क्या पुत्तनाट्टुकरा की मोटर मिलेगी ? घाट वगैरह पार कर वहां कब तक पहुंचेंगी ?"

"कुलक्कटा के आलीसुकुट्टि के यहां रहूंगी।"

दीनाम्मा ने कहा—

"नहीं। ऐसा तो नहीं चाहिये। अब कल जाइयेगा।"

शांतम्मा ये कहा—

"वही बस है, मां।"

आगे शांतम्मा की मां ने जिद नहीं किया।

फादर कुंयेनाच्चन के पास गये।

"चलता हूं मामाजी !"

हिले नहीं।

"बाबूजी ने नहीं सुना ? फादर जा रहे हैं।"

चौंककर आंखें खोलीं।

"क्या चल रहे हैं ?"

"हां ।"

"अच्छा !"

सिर पर हाथ रखे प्रार्थना करके फादर चले । थोड़ी देर बाद मातुक्कुट्टि भी चला गया ।

आंख खुली । फिर भी कुंयेनाच्चन नींद की खुमारी से छूटने की कोशिश ही कर रहे थे ।

"फादर चले गये ?"

"हां, सिर पर हाथ रखकर प्रार्थना करने के बाद ही गये न ?"

"ऐसा ? दीनाम्मा बेटी किधर है ?"

"भीतर है ।"

"बड़ी परेशानी है । बूंद भर गरम पानी पिला दे ।"

दीनाम्मा ने काफी लाकर दी । पी गये तो ताजगी मिली । ठंडी रात के बाद गरम प्रभात की तरह ।

"ब्याह के बाद तुम्हारी बेटी कुट्टिअम्मा और दामाद क्या यहीं रहते हैं ?"

"हां ।"

"घर का खर्च क्या वे संभालते हैं ?"

"वे ही अब सारा खर्चा करते हैं ।"

"क्या ?"

"अब घर का खर्चा वे ही करते हैं ।"

"हां, अब तुम्हें चिंता की कोई बात नहीं रही । लड़कियों को विदा कर चुके । छोटे लड़के को एक धंधा भी मिले तो पार हो जाय । बाद में तुम और कुंयुमरिया ही हो न ?"

"हमारे लिये पिताजी की दी हुई मिट्टी काफी है ।"

"कुंयुचेरुक्कन की बात कैसी है रे ? वह बड़ा अभागा है । झील भर जाल फैलाने पर भी उसके जाल में कोई मछली नहीं रहेगी ।"

"कोई आफत नहीं है पिताजी ।"

"एं ?"

"लड़के को पुलिसवाले ले तो जरूर गये । तो भी कोई गड़बड़ी नहीं है । कहते

हैं कि उसकी दी हुई पूरी रकम पुलिस के हाथ में नहीं पड़ी।"

"कितना ?"

"सो कौन जाने और कहते हैं कि उसका एक उत्तर भारतीय मित्र हाल ही में आया और कुछ रुपये दे गया।"

"फिलिप्योस अमीर है। पर दुश्चरित्र हो गया।"

"हां। क्या अब उसे डाट डपटकर सुधार सकते हैं ?"

"रही तुम्हारी बात। बड़ी बेटी बीमार हो गयी। छोटी मास्टरनी लड़की को किसी के साथ विदा करना है रे।"

"पिताजी !"

"एं।"

"यह क्या कह रहे हैं ? बीमार लड़की मर चुकी है न ?"

"......"

"कुट्टिअम्मा का ब्याह पिछले हफ्ते ही चला न ? वह बात अभी-अभी कही थी। क्या बिलकुल याद नहीं है ?"

गहरे भंवर में हाथ-पांव मारते आदमी के मुखमंडल की निस्सहायता। सहायता मांगते नयन !

"पिताजी !"

आंखें खुली हैं। पर बोलते नहीं।

"दीनाम्मा बेटी ! इधर आओ।"

दीनाम्मा आयी। भीगे कपड़े से माथे का पसीना पोंछा। हाथ-पांव की मालिश की।

"क्या कीवरीत गया री ?"

"नहीं पिताजी, मैं यही हूं : बोलिये क्या चाहिये।"

"कब्र बनवानी चाहिये। पत्थर में टांक रखना—'मेलोझलिल कुंयुनैना।' अगली पीढ़ी यह देख याद करे कि ऐसा एक आदमी यहां जिंदा रहा था। मेरे पास और है ही क्या ?"

शांतम्मा और उसकी मां खटिया के नजदीक आयी।

दीनाम्मा ने पूछा—

"बाबूजी ये सभी बातें अभी क्यों कहते हैं ?"

"ऐन वक्त पर अगर वह यहां न हो तो ? दिल कहता है कि अब वक्त नजदीक है।"

"बाबूजी ये ही सब बातें सोचते पड़े हैं। तभी कष्ट होता है।"

"परिवार में तुम ही मुखिया रहना। झगड़ा-फिसाद और बैर-विरोध होने पर भी घर तीन-तेरह न होने पावे। अन्य देवताओं की मूर्तियां बना दें और उन्हें नेवता चढ़ायें। फिर भी मूसा ने इसराइल के लोगों का नेतृत्व किया; उन्हें तितर-बितर होने नहीं दिया। इसी तरह तुम्हें भी विचारशील नायक बनना होगा। गुस्सा छोड़ देना।"

"पिताजी को क्या ये सब मुझे सिखाना भी है ?"

"आपस में दमड़ी-दमड़ी का हिसाब बतावें और झगड़ा भले ही करें, लेकिन परिवार के किसी व्यक्ति पर आफत आ पड़े तो एक साथ रहना! परिवार में पैदा हुए सभी बच्चों के धर्मपिता रहना; बपतिस्मा, ब्याह, अंतिम संस्कार आदि सभी रस्मों में शुरू से आखिर तक तुम साथ रहना······"

"पिताजी कुछ काफी और पियेंगे ?"

"पिलाओ, प्यास है !"

"ज्यादा बातचीत न करें।"

"नाम साराम्मा है न ?"

"शांतम्मा की मां का ?" "नहीं पिताजी—मरियकुट्टि"

"मरियक्कुट्टि की बेटी परिवार की प्रतिष्ठा है ; उसके पति का गौरव है। शलमोन पूछते हैं—"दक्ष पत्नी किसे मिलेगी ? उसका मूल्य मोतियों से भी बढ़कर है। अपनी ही कुशलता से वह दाखबारी लगाती है—क्या मरियक्कुट्टि ने पढ़ा है ?"

"हां, पिताजी—सभोपदेशक"

"किताब है। लेकर पढ़ो सुनाओ।"

कीवरीत ने पूछा—

"क्या अभी पढ़ना है पिताजी ?"

"अरे, पढ़ें। तुम भी सुनो। हाल ही में ब्याही मास्टरनी बेटी को भी बताने लायक है।"

शांतम्मा धर्मग्रंथ ले आयी। मरियक्कुट्टि ने पढ़ा—

"वह भोर ही को उठ बैठती है और अपने घराने को भोजन खिलाती है। और

अपनी लौंडियों को अलग-अलग काम देती है। वह किसी खेत के विषय में सोच-विचार करती है और उसे मोल ले लेती है। और अपने परिश्रम के फल से दाख की बारी लगाती है। वह अपनी कमर को बल के फेंटे से कसती है। अपनी बांहों को दृढ़ बनाती है। वह परख लेती है कि मेरा व्यापार लाभदायक है। रात को उसका दिया नहीं बुझता। वह चरखा पकड़ती है। दीन के लिये मुट्ठी खोलती है और दरिद्र के संभालने को हाथ बढ़ाती है। वह अपने घराने के लिए हिम से नहीं डरती क्योंकि उसके घर के सब लोग लाल कपड़े पहनते हैं। वह तकिये बना लेती है। उसके वस्त्र सूक्ष्म, सन और बैंजनी रंग के होते हैं। जब इसका पति सभा में देश के पुरनियों के संग बैठता है तब उसका सम्मान होता है। वह सब के वस्त्र बनाकर बेचती है और व्यापारी को कमरबंद देती है। वह बल और प्रताप का पहिरावा पहने रहती है। और आने वाले काल के विषय पर हंसती है। वह बुद्धि की बात बोलती है और उसके वचन कृपा की शिक्षा के अनुसार होते हैं। वह अपने घराने के चालचलन को ध्यान से देखती है और अपनी रोटी बिना परिश्रम नहीं खाती। उसके पुत्र उठ-उठकर उसको धन्य कहते हैं; उसका पति भी उठकर-उसकी ऐसी प्रशंसा करता है। बहुत सी स्त्रियों ने अच्छे-अच्छे काम तो किये हैं परंतु तू उन सबों में श्रेष्ठ है। शोभा तो झूठी और सुदंरता व्यर्थ है। परंतु जो स्त्री यहोवा का भय मानती है उसकी प्रशंसा की जायेगी। ईश्वर तेरी जय हो—बारक मोर।"

धर्मशास्त्र बंद करके शांतम्मा की मां ने जब मुंह उठाकर देखा तब कुयेनाच्चन आंखें बंद किये लेटे थे।

दीनाम्मा बोली—

"पिताजी फिर बेहोश हो गये।"

कीवरीत ने कहा—"बड़ी कमजोरी है।"

"दो दिनों से ही कमजोरी इतनी बढ़ी है।"

"खास ध्यान रखना। रात को बत्ती धीमी करके पास रख देना।"

"रोज वही करते हैं भैया!"

"चलूं मरियक्कुट्टि! कल आऊंगा।"

"मैं कल सवेरे चलूंगी।"

"उसके पहले आ जाऊंगा।"

कीवरीत को गये एक घंटा बीता तो एक मोटर में कुट्टिअम्मा और उसके पति शहर के नामी डाक्टर जोर्ज को लेकर कुंयेनाच्चन के पास पहुंचे।

डाक्टर जब आये तब कुंयेनाच्चन की बेहोशी दूर हो गयी थी। पर शिथिलता दूर नहीं हुई थी।

डाक्टर कुंयेनाच्चन के चेहरे की तरफ देखकर हंसे। इसके बाद नली कानों में लगायी।

"दादाजी मुझे पहचानते हैं ?"

"क्या ? जोर से कहना ।"

"मुझे पहचानते हैं ?"

"याद नहीं। बतावें तो याद आये।"

कुट्टिअम्मा ने कहा—

"कोट्टारत्तरा के जार्ज डाक्टर हैं दादाजी"

"नोम्मापणिक्कर अप्पोत्तिकीरि के बेटे हैं ?"

"हां हां—थकान है न ?"

डाक्टर ने नली को छाती पर रखा।

"उम्र कितनी है ?"

"क्या ?"

"उम्र ?"

"नब्बे पूरे हो चुके।"

"हुं। आयु की थकान ही है।"

"आंखें देखीं। नब्ज जांच ली ।"

"खुराक की क्या हालत है ?"

दीनाम्मा ने कहा—

"थोड़ा-थोड़ा ही सही, तीनों बार खाते थे। दो दिन से कंजि और पानी को छोड़ कुछ नहीं चलता"

"हूं।"

"पणिक्कर अप्पोत्तिक्करी मुझे अच्छी तरह जानते थे। जानने का कारण भी है।"

"क्या है ?"

"बीस-तीस वर्ष पहले की बात है। ऐराणिक्कुटि पुल के पास……"

डाक्टर ने इस कहानी को जारी रखना नहीं चाहा—इसलिये बोले—

"जीभ जरा दिखाइये।"

दीनाम्मा बोली—

"बिना याद के कुछ न कुछ कहते जाते हैं। कभी बातचीत के बीच में बेहोश होते हैं।"

"हूं।"

"अफीम खाने के आदी हैं।"

"अच्छा!"

जांच के बाद डाक्टर ने कहा—

"बदन को फुर्ती देने वाली कुछ दवाएं देनी चाहिये। खुराक व दिनचर्या में संयम व नियम का पालन करना पड़ेगा। उसके अलावा सेवा-शुश्रूषा की भी बात है। बूढ़ों के लिये सबसे महत्त्व की बात सेवा है। सावधान सेवा से दिल की कमजोरी दूर करनी चाहिये……मेरे साथ कौन आ रहे हैं? कुछ दवाएं दूंगा।"

तोमस मास्टर ने प्रश्न किया—

"क्या अफीम खाने से नुकसान है डाक्टर?"

डाक्टर मुस्कुराये :

"अफीम बुरी चीज़ जरूर है। मगर इस हालत में बंद कर देने से अधिक हानि ही हो सकती है। जहर भी नियत मात्रा में लंबे समय तक खाते जायं तो बाद में वह भी बदन के लिये अनिवार्य हो जायेगा!"

"वह ठीक है।"

"मास्टर ही साथ आ रहे हैं न?"

"हां।"

"आइये।"

डाक्टर के साथ तोमस मास्टर गये। कुट्टिअम्मा शांनम्मा की मां के कंधे पर हाथ रखे बोली—"पता लगा कि आप आयी हैं। हमने स्कूल से आते समय पिताजी को देखा। दादाजी को क्या बड़ी बेचैनी थी?"

"ज्यादा तो नहीं। बातें करते रहते कि बीच में बेहोश हो जाते। कभी तो बिना स्मरण शक्ति के कुछ बड़बड़ाते……"

"दादाजी।"

"एं।"

अच्छी-तरह आंख खोलकर देखा—

"बेटी ! तू काहे को अपोत्तिकीरी को ले आयी ? मुझे खास बीमारी तो नहीं। आयु को कौन रोके रख सकता है ?"

"जब तक जिंदा हैं तब तक तो आराम से रहना नहीं है दादाजी ?"

"तू मुझे हवा पर बिठाकर दौड़ाता है। तूफान में तू मुझे विलीन कर देता है। मैं जानता हूं कि तू मुझे मौत के घर और सत्व जीवों के अंतिम लक्ष्य को ले जायेगा······"

"देखा, बात बात पर यों बेकार बात सोचते रहते हैं। तभी तो बेहोशी आती है।"

"क्या हमारे परिवार में मैं और कोई शादी देख सकूंगा ? तुम्हारी शादी ही अंतिम है—है न बेटी ?"

"············"

"बेटी !"

"क्या ?"

"मेरी बात क्या सुनी नहीं ?"

"सुनी। सुनते हैं कि हमारे परिवार में हम लोगों के जाने बिना ही और एक शादी हो गयी है।"

"सो कहां ?"

"दादाजी से कुछ कहना भी आफत मोल लेना है। जिसे देखते-सुनते सबसे कहने लगेंगे।"

"किसी से नहीं कहूंगा बेटी।"

"नहीं तो वही याद करते लेटे रहेंगे।"

"तुम्हारे पिता ने मुझसे कुछ नहीं कहा।"

"अफवाह है। कहते हैं कि कालायि के जोणिक्कुट्टि ने घर की नौकरानी लड़की को वयनाड ले जाकर उससे शादी की है।"

"एं।"

"वह अब उसी के साथ रहती है।"

कुंयेनाच्चन कुछ समझ नहीं सके। बारंबार प्रश्न किया। उलट-पलटकर पूछा। खबर है कि जिस लड़की से फिलिप्योस की घनिष्ठता थी उसी से बेटे ने शादी की है। कहा था कि पिता के बुरे चाल चलन से अपमानित होकर ही गांव छोड़ गया है। अब सुनते हैं कि उस लड़की के गले पर उसने मंगलसूत्र बांधा है। कैसी माया !

"लड़की और वह पहले ही एक दूसरे को चाहते थे। बाद में पैसे के लालच या अन्य किसी कारण से चाचा के साथ······कौन जाने, लोग कहते हैं। किसे मालूम है कि सच क्या है !"

"अगर ऐसी कोई घटना होती तो तुम्हारे पिता क्या मुझ से न कहते ?"

"मैंने कहा नहीं, दादाजी ? ये सब अफवाहें हैं। दादाजी और किसी से न कहें। दवा अभी लायेंगे। ठीक समय पर दवा खाइयेगा।"

"शायद सच हो। वह उस लड़की को उठा ले गया होगा।"

"देखा ! इसलिये तो दादाजी से कुछ भी कहना मुश्किल हो गया है। वह बात भूल जाइयेगा। मैं जा रही हूं।"

दिल से वह कैसे गायब हो ? सोचने-समझने पर अभी बेटी की कही बात ही सत्य है। वह जवान है—बीस-पच्चीस वर्ष का। वह लड़की भी जवान—अठारह बीस वर्ष की। लड़का अमीर का बेटा, खूबसूरत। वह लड़की निर्धन होने पर भी सुंदर। उसका बाप इन दोनों के बहिश्त का चींटा साबित हुआ होगा। लड़की की उभरी जवानी देखकर वह अपने को भूला होगा। पछताया होगा कि चढ़ती जवानी में इच्छानुसार सुख भोग का मजा नहीं लूटा। इशारा करने पर वह लड़की शायद राजी हुई होगी। नहीं तो सांझ या सवेरे जबरदस्ती करने पर वह छूटे बिना चुप खड़ी रही होगी। शेष बातें वही हैं। जैसी बातें सुनी थीं वही।···

पहले ही कार्यक्रम तय करके वह युवक उसे ले जाता है। झूठा अभियोग जारी कर देता है कि पिता चरित्रहीन हैं। सौ एकड़ रबर का बागान और बीच में बंगला। वह यहां किसी रियासत के राजा की सी शान से उस लड़की के साथ बिताता है। राजकुमार और राजकुमारी !

खबर सुनकर पिता वहां जाते हैं। क्या होगा ? कुछ झंझट की भावना पहले से ताड़कर वह उसका सामना करने के लिये नौकरों में से दस-बारह गुंडे लोगों का इंतजाम कर लेता। लड़का लड़की को भीतर छिपाये हुए अगले द्वार पर खड़ा

रहता। और सब जगह विजयी पिता यहां पराजय के भय से सीधी आंखों में देखे बिना कहता—

"तुम घर चले जाओ। यहां और प्रबंध कर लूंगा।"

"मैं नहीं जाता!"

"हूं? क्यों?"

"नहीं जाता। यहीं रहूंगा। पिताजी कुछ भी न दें। यह बागान मेरे लिये काफी है।"

"क्या यह बाग तुम्हारे ससुर ने दहेज में दिया है।"

"जैसा चाहें, समझें।"

यह तो चुनौती ठहरी।

पिता सोचते हैं। करना क्या है? क्या शारीरिक बल आजमाना चाहिये? पुलिस में रिपोर्ट करें? ताकत से जीत संभव नहीं है। बदनामी रह जायेगी कि बाप व बेटे में मारपीट हुई। जो हो, उस वेश्या युवती को यहां से बिदा कराना ही होगा।......

"अरे, वह कहां है?"

"कौन सी वह? यहां नहीं।"

"दरवाजे से हट जाओ।"

"कहा न कि यहां नहीं है?"

"हट जाओ रे!"

"नहीं हटते।"

"मारो......"

तमाचा। उसने अपने को बचा लिया। फिर से मारने आगे बढ़े तो बांह मरोड़ दी। अब पिता-पुत्र नहीं, एक लड़की के पीछे द्वंद्व युद्ध करने वाले दो मर्द! पिता पुत्र को टांग के दांव से नीचे पटकते हैं। पुत्र की छाती पर बैठकर गला दबाते हैं। इस समय चारों तरफ की झाड़ी से बेटे के प्रस्तुत गुंडे टूट पड़ते हैं। पिताजी अकेले। कटार, माला, तलवार......एं......एं......अपने पुत्र को थप्पड़ और घूंसा लग रहा है! पहले ही कासरोगी है......

"छि: रोको।"

"पिताजी हट जाइये। इन सबको मैं गाजर की मूली की तरह टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।"

"हाय रे ! क्या सिर फूट गया ?······क्या मेरे बच्चे को मार डाला ?"

"पकड़ो उसे—बदमाश !"

"............"

"बाबूजी !"

"दादाजी !"

कुंयेनाच्चन चौंक उठे। उनकी आंखें खुलीं।

"एं, क्या है री !"

"लोगों को क्यों इस तरह परेशान करते हैं ?"

"क्या है ?"

"कौन जाने ?—पिताजी जानते हैं।"

"मन कह रहा था कि मार डाला।"

"किसे ?"

"फिलिप्योस को।"

"यह क्या क्या कह रहे हैं ? कुछ भी मेरी समझ में नहीं आती।—लीजिये। पोते का पत्र आया है।"

"किसका ?"

"राजन वेटे का !"

"क्या खवर है ? पढ़ो।"

"अगले महीने पंद्रह दिन की छुट्टी पर आ रहा है। शांतम्मा को ले जाने के लिये आता है। नीलगिरी में तबदीली होगी।"

"नीलगिरी में।"

"हां। वहां परिवार सहित रहने के लिये उसे घर मिलेगा।"

"अपने साथ उस लड़की के रहने से हमारा सहारा और तुम्हारी एक मददगार भी हो गयी थी न ?"

"लेकिन क्या वह जिंदगी भर हमारे साथ रह सकेगी ?"

"नहीं।"

शांतम्मा की मां ने कहा—"अगर जा भी रही है तो सिर्फ साल भर साथ रहकर आवेगी। उसके बाद यहीं आयेगी।"

सूर्यास्त हो गया था दीनाम्मा और शांतम्मा की मां भीतर गयीं। शांतम्मा ने टीन

की ढिबरी जलाकर कुंयेनाच्चन की खटिया के पास रख दी। दीपक की लाल लौ उसके गालों पर झलक उठी।

"बिटिया !"

"जी।"

"तुम्हारे लौटते समय क्या दादाजी जिंदा रहेंगे ?"

"और क्या ! अच्छी बात करते हैं।"

"इच्छा है। पर अंतरंग कहता है—नहीं। तुम्हें मेरे नाम से अंकित मकबरा ही देखने को मिलेगा।—"मेलोझत्तिल कुंयुनैना।" उस समय तुम एक मां भी बनी होगी। तेरा बेटा······"

"दादाजी !"

"एं।"

"यों बहुत सोचना नहीं। तभी तो गंदे सपने दीखते हैं।"

कुंयेनाच्चन ने सोचा।

बेटी सही बात कहती है। मन खुली सराय सा हो गया। चिंताएं बिना बुलाये ही आकर दिल पर कब्जा कर लेती हैं······

ग्यारह

शाम का वक्त था। दीनाम्मा शीशी से दवा लेकर कुंयेनाच्चन को पिला रही थी कि कुंयुचेरुक्कन आ गया। दोनों ने एक दूसरे को देखा। पर दीनाम्मा बोली नहीं। दवा की शीशी लेकर भीतर चली गयी। पीने की दवा और गोलियां रोज तीन दफे देनी थी। ओवलटिन भी दूध के साथ। बदन के लिये मालिश का तैल। सब थोमस मास्टर खरीद लाते थे। दवा पीने से तबीयत कुछ-कुछ सुधरने लगी। बेहोशी नहीं रही। भूख लगी। खाने की इच्छा होने लगी। छड़ी टेकते आंगन में चलने की फुरती वापस मिल गयी।

हर दिन थोमस मास्टर सवेरे स्कूल जाते हुए और शाम को स्कूल से लौटते समय आते थे। जरूरी चीजें अंदाज से ताड़कर खरीद लाते। जिद करने पर भी पैसा नहीं लेते। थोमस मास्टर जब से जमाई बनकर आये तब से एल्लुपरंप घर

में खुशहाल हो गया। घर लीपा गया। सोने का एक कमरा अलग से बनाया गया। मेज और चार-पांच कुरसियां खरीदी गयीं।

कुंयेनाच्चन ने सोचा—

यहोवा के पथ कितने अद्भुत हैं! किसने यह पथ देखा? तू नहीं जानता कि हवा का रुख कैसा है, गर्भवती के गर्भ में हड्डियां कैसे बनती हैं। इस तरह सब कुछ करने वाले परमेश्वर का काम तू नहीं जानता। तू नहीं जानता कि बोये हुए बीजों में से कौन अंकुरित होगा, कौन फलेगा। तू नहीं जानता कि पैर फिसलकर जब तू गिरता है तब तुझे कौन उठाता है। कब सोचा था कि ऐसी स्थिति होगी। ब्याह की उम्र को पार की हुई क्वारी कन्या को कुछ भी परिश्रम किये बिना ब्याह दिया। अब उसे ही नहीं, पूरे परिवार को वह संभाल रही है। इसीको मारने कैद कराने की साजिश सोची गयी। दिनों के पहले बुझी हुई अनुग्रह की बत्ती इसीने फिर से जलायी। यहोवा के पथ कितने अजीब हैं! उन्हें किसने देखा?

कुंयुचेरुक्कन ने आवाज दी—

"दीनाम्मा।"

"जी।"

"थोड़ा सा गरम पानी पिलाओ।" "पिताजी!"

"एं।"

"अब खास तकलीफ तो नहीं है न?"

"नहीं।"

"मैं परसों नाके पर एक वैद्यजी से मिला था। सोचा कि उन्हें बुला लाऊं और पिताजी की दवा कराऊं। तभी पता लगा कि जार्ज डाक्टर दवा दे रहे हैं।"

दीनाम्मा ने रकाबी में कंजि लाकर दी।

"मात्तुक्कुट्टि कहां है?"

"एण्णक्काट तक गए हैं।"

"बेटी पुनट्टुनाकरा गयी है न?"

"हां, मां के साथ गयी।"

ज्यादा बातें किये बिना दीनाम्मा रकाबी लेकर भीतर जाने लगी तो फिर से बोला—

"क्या पान सुपारी नहीं है दीनाम्मा?"

पानदान सामने रखकर दीनाम्मा चली गयी। सुपारी का छिलका छीलते हुए "कुंयुचेरुक्कन ने पिता से कहा—"कल बंबई से बड़े बेटे का भेजा एक आदमी आया था पिताजी।"

"कुछ दिन पहले भी एक हिंदुस्तानीवाला आया था न ?"

"पिताजी से किसने कहा ?"

"कहा किसीने भी हो। आया भी ?"

"हां, पिताजी से कह नहीं सका। मुकद्मा मामूली है। कहते हैं कि छूट सकता है—कौन जाने ?"

"हुं।"

"दूसरे की चिट्ठी आयी थी। उसने बड़े भाई को जाकर देखा।"

"देखा।"

"हां, पिताजी को उसका दिया रुपया जो मैंने लिया उसको लेकर बड़े लडके ने छोटे से कुछ रुखाई से बातें कीं।"

"हमारा लेना देना उसे कैसे मालूम ?"

"मां ने छोटे बेटे को लिखा होगा। उसने बड़े भाई से कहीं पूछा होगा।"

"हुं।"

"छोटे ने लिखा है कि बड़ा बहुत नाराज है। उसने कहा कि अगर वह पैसा दादाजी को वापस नहीं दिया तो बाद में घर से उसका कोई नाता नहीं रहेगा।"

"अच्छा !"

"वह तो फौरन खर्च हो गया। क्या पिताजी नहीं जानते ? जहां देखें वहीं कर्जा है।"

"हुं।"

कुंयुचेरुक्कन ने कमर से बड़ी सावधानी से एक पोटली निकाली। पोटली खोलकर नोट गिने।

"पचास हैं। छोटे ने भेजा है। यह पिताजी की दवा के लिये रहे।"

"नहीं ! प्रभु की करुणा से कोई तकलीफ नहीं है। तुम मुझे कुछ भी मत दो। मेरे हाथ आया पैसा भी लेकर क्यों न जाओ, फिर भी तुम मेरे बेटे ही हो। सब मेरे लिये बराबर हैं, तुम जाओ।"

"पिताजी ऐसी न कहें। मुझे बड़ा दु:ख होगा।"

"जाओ। दु:खी मत बनो। जब जरूरत पड़े तब किसी को भेजूंगा। अपने पास ही रुपये रख लेना।"

"लो, दीनाम्मा। तुम यह लेकर भीतर रख दो।"

दीनाम्मा दरवाजे पर ही खड़ी थी। सारी बातचीत सुन रही थी। सोचा कि कुछ कहना नहीं चाहिये। मगर ये वाक्य सुनकर जबाब दिये बिना उससे रहा नहीं गया।

"भूल एक ही बार हो सकती है भैया! दीजिये या लीजिये, कुछ भी कीजिये। मुझसे कुछ न कहना।"

"कैसी भूल दीनाम्मा? हमारे यहां की वज्रमूर्ख स्त्री ने कुछ कहा, इसलिये? वह भाड़ में जाय।"

"और भैया ने खुद यहां के सज्जन से जो कहा?"

"क्या कहा? मात्तुक्कुट्टि और और मैंने कुछ कहानियां सुनायीं। वाह! यह क्या मजाक है? यह ले जाओ, भीतर रखो बेटी।"

"मैं नहीं लूंगी। भैया लाख कहें, मारें, पीटें पर मैं नहीं लूंगी।"

"तुम जाओ रे! मुझे अभी थोड़ा सा गरम पानी पिलाती है। इस पर पानी मत फेरो।"

"पिताजी भी ऐसी बेदरद बातें कहते हैं। बड़ा अगर सुन ले कि आपने पैसे वापस नहीं लिये तो मेरी रोटी पर पानी फिरेगा। मैं क्या करूं।"

"बता देना कि लौटा दिया है, कौन जानेगा?"

"यहां आने के बाद वह अगर पूछ ले तो?"

"तब मैं नहीं रहूंगा। अगर हूंगा तब भी बताऊंगा कि तुमने रुपये लौटाये। बस?"

कुंयुचेरुक्कन ने सोचा—

पिताजी की बातें भी सही हैं। उसने नोट कागज़ में समेटकर अपने कमर में रख लिये।

बच जाने की सांत्वना से दीनाम्मा ने कुंयेनाच्चन से पूछा—"गरम दूध लाऊं?"

"हां लाओ।"

कुंयुचेरुक्कन वापस जाने ही वाला था कि चार-पांच आदमी सीढ़ियां पार कर

आते दिखायी दिये। गोधूली का समय बीत चुका था। पूरबी आंगन के कटहल के पेड़ के नीचे दो आदमी खड़े रहे। तीन आदमी बरामदे पर आये। कीवरीत, बेबी, बूचड़ का बेटा अवरान।

कीवरीत ने दबी आवाज में छोटे भाई से पूछा—"तुम कब आये ?"

"थोड़ी देर पहले।"

"मात्तुक्कुट्टि कहां है दीनाम्मा ?"

"सवेरे एण्णक्काट गये हैं।"

"पिताजी।"

"एं।"

सब चुप। साया में खड़े दोनों आदमी धीरे-धीरे बरामदे पर आये। अब तक दीनाम्मा ने ढिबरी जलाकर बरामदे पर लाकर रख दी। कुयप्पि-सांकुट्टि······

हर एक के चेहरे पर घबराहट है ! कोई सिर उठाकर नहीं देखता। बेबी के चेहरे पर कोई भयानक वस्तु देखने का सा भीतिभाव है ! ······

दीनाम्मा ने हैरान होकर पूछा—

"भैया, बात क्या है ?"

प्रश्न का उत्तर नहीं था।

"मात्तुक्कुट्टि कब लौटने की बात करके गया है ?"

"कुछ नहीं कहा है।"

"शांतम्मा पुत्तनाट्टुकरा से कब आयेगी ?"

"उसे लेने किसी को चलना होगा।"

कुयेनाच्चन ने पूछा—

"बात क्या है, रे ?"

"कुछ नहीं, पिताजी।"

"क्या ?"

कीवरीत ने कुछ नहीं कहा। कुंयुचेरुक्कन को इशारे से थोड़ी दूर ले गया और कानों में कुछ कहा। कुंयुचेरुक्कन ने दबी आवाज में कहा—

"हाय रे ! ठग गये !"

अब तक और तीन चार आदमी आंगन में आ गये थे। दीनाम्मा ने उतावली होकर पूछा—"क्या है भैया, कहो न ? यों अंगारे मत खिलाओ।"

कुंयेनाच्चन ने कहा—"बोलो रे !"

कीवरीत की आंखें छलछला आ आयीं। नियंत्रण की मिट्टी की दीवारें ढ़हती जा रही हैं। जमा हुए लोगों की तरफ देखा। क्या कहे ? कैसा कहे ?

उसी समय कुट्टिअम्मा और थोमस मास्टर दौड़े हुए आये। कुट्टिअम्मा ने मानो चीखती हुई जोर से आवाज दी—"चाची।"

"क्या है कुट्टिअम्मा ? हाय मसीहा ! बात क्या है ? कोई कुछ नहीं बोल रहा है।"

कुंयेनाच्चन भी चिल्लाये—

"कीवरीत, बात क्या है ?"

"पिताजी।"

"कहो रे !"

"राजन की पलटन के दफ्तर से तार आया है।"

अवरान ने कहा—

"कभी-कभी कुछ लोग झूठा तार भेज देते हैं। सो निश्चित पता नहीं कि सच है या झूठ ?"

कीवरीत ने आवाज धीमी करके कहा—

"तार में लिखा है कि वह दुर्घटना में मर गया।"

अपने हाथ का लाल कागज़ कीवरीत ने थोमस मास्टर के हाथ में दिया।

क्षण भर भीषण मौन ! बिजली के बाद बादल की कड़क के पहले की खामोशी !

"हे ईश्वर ! यह मैं क्या सुन रही हूं ?"

दीनाम्मा का क्रंदन बादल की कड़क की तरह तेज हो उठा। सिसिली मां से लिपटकर रो पड़ी। हाहाकार मच गया।

कोई किसी की सांत्वना की बातें सुनने को तैयार नहीं था। और सांत्वना भी कैसी ? अभी दो महीने पहले आया, शादी करके लौटा ! अब कहते हैं कि मर गया। कैसे यकीन करें ? कैसे धीरज धरें ?

कीवरीत की बात कुंयेनाच्चन ने ठीक-ठीक नहीं सुनी। आक्रोश करते हुए बराबर पूछते रहे—"क्या है रे ? क्या है बेटा ?" किसी ने ध्यान भी नहीं दिया। कोई भारी दुर्घटना घटी है। इतना तो मालूम हो गया। घबराकर उठे। दो कदम

रखते-रखते गिर पड़े। थोमस मास्टर ने सहारा देकर उठाया। बात जान लेने पर खोये हुए से ताकते रहे, मानों कुछ भी समझ में नहीं आ रहा हो। आंसू की बूंद तक नहीं छलकी। लोगों ने सहारा देकर खाट पर लिटा दिया। चारों तरफ से लोग तेज कदम बढ़ाते आ रहे थे। आहट सुनकर चौंक पड़े।

आगे हर आवाज चौंकाती थी।

"राजा बेटा!"

सिर्फ अपने कोख में मैंने नहीं धरा······"

"ऐसी अभागिन हो गयी मेरी सिसिली बिटिया! ······"

"शांतम्मा कैसे सब्र करेगी ?"

"वह उसके साथ तीस दिन भी नहीं रह सकी!"

खबर सुनकर फिलिप्योस मोटर में आया। सब ने एक दूसरे की आंखों में देखा, कोई मुंह नहीं खोलता। थोड़ी देर बाद कीवरीत ने पूछा—

"क्या मात्तुक्कुट्टि को नहीं बुलवाना है ?"

"क्या पता कि वह कहां है ? मैंने ड्राइवर को गाड़ी देकर पता लगाने के लिये भेजा है।"

बस और कुछ नहीं बोले। समाचार सुनकर आये बंधुजनों और पड़ोसियों के मातम के शब्द सुनते हुए कटहल के पेड़ के नीचे और कुएं की जगत पर वे सिर झुकाये बैठे रहे।

"प्यारा राजा सा लड़का!"

"मेलोझत्तु घर में उसके समान और कोई इतना सुंदर नहीं था।"

"मात्तुक्कुट्टि भैया के पर कट गये!"

"प्रभु जो करते हैं, सहन करना ही पड़ेगा!"

"आदमी पुत्तनाट्टुकरा गये हैं ?"

"पता नहीं।"

"उस लड़की से क्या कहेंगे ?"

"ओह! वह कैसे सहन करेगी ?"

"किस्मत है!"

एक तरह से यह उसके खोटे भाग्य का फल है। जन्मपत्री, नक्षत्रों का मेल आदि बातें मजाक की नहीं हैं।"

"यह तार देखने से यकीन करना नहीं चाहिये। शायद······"

"शायद की कोई बात नहीं। मृत्यु हो गयी है।"

कुट्टिअम्मा कुंयेनाच्चन की खटिया पर आकर बैठी।

"दादाजी।"

"हिलते नहीं।"

झकझोरा। फिर भी जगे नहीं। आंख खुली है। मुंह खुला है। चेहरे की तरफ देखते डर लगता है।

"दादाजी।"

चौंककर आंखें खोलीं—

"जा बेटी जा! फटे कपड़े पहने मैं मिट्टी में पड़ा हूं। मेरी नग्नता देखने तू काहे को आयी? जा······"

कुट्टिअम्मा फटी आंखों से चारों ओर ताकती बैठी रही।

"हे प्रभु! ईश्वर! तूने मुझे क्यों छोड़ दिया? मेरी पुकार से मेरी कराहने की आवाज सुने बिना दूर क्यों खड़ा है? हे इस्राइल की स्तुति के सिंहासन पर विराजमान! तू तो पवित्र है। हमारे पुरखा तुझ पर भरोसा रखते थे। तू उन्हें छुड़ाता भी था। मैं तो मनुष्य नहीं, सिर्फ एक कीड़ा मात्र हूं। मनुष्यों में मेरा नाम धराई है, और, लोगों से तिरस्कृत और अपमानित हूं। जो भी देखता है मेरा अपहास ही करता है। परंतु तूने ही तो मुझें गर्भ से जन्माया।"

"बाबूजी! ······"

"पिताजी!"

"दादाजी!"

"क्या ये दुःख अब काफी नहीं है?"

"तो मैं क्या करूं? मुझे क्यों धरती का बोझ बनाकर यहीं रख छोड़ा है? मेरा छोकरा कहां? जाकर उसे ले आओ।"

"लायेंगे। पिताजी चुप लेटे रहें।"

थोड़ी देर में मात्तुक्कुट्टि आया। पैदल ही। साथ धर्मप्रदेश के पादरी के अलावा सात-आठ आदमी और थे। आंगन या बरामदे पर जमा लोगों की तरफ देखा ही नहीं। पिता की खटिया के पास जाकर सिर झुकाये बैठा। खटिया पर सिर रखे सिसक-सिसक कर रोया। मगर, कुछ क्षणों में दुःख मन में दबा लिया। उठकर

पथराई हुई आवाज में कहा—

"हम प्रार्थना करें, फादर !"

"फादर ईश्वर, पुत्र और पवित्र आत्मा के लिए।" वाली प्रार्थना सुनाने लगे। परंतु सिसकी और उसांसों की आवाज में प्रार्थना की आवाज डूब गयी।

पलटन के डेरे से राजन की पेटी आयी। तो शांतम्मा ने ही उसे दस्तखत देकर लिया था। मौत की खबर जिस दिन आयी उसके दसवें दिन पेटी आयी। तब तक शांतम्मा अतिशय सहनशक्ति अर्जित कर चुकी थी। उस दृश्य का सामना वह कर सकी। कुंयेनाच्चन की खटिया के नीचे दूसरों की मौजूदगी में ही पेटी खोलकर एक-एक चीज बाहर लेकर देखती और रखती जाती थी। उस समय भी वह रुलाई को रोक सकी। सिसिलीमुन्नी शांतम्मा से लिपटी खड़ी थी। दीनाम्मा और कुट्टिअम्मा पास थीं। एक-एक चीज लेकर देखती तो सिसिली कहती—

"राजन भैया के षेविंग का ब्रेश......।"

"राजन भैया की नाक पर रखने का चश्मा।"

"राजन भैया......"

दीनाम्मा बोली—

"चुप रह ! बिटिया !"

संदूक में शांतम्मा को राजन का लिखा अधूरा खत भी था। उसे हाथ में ले लिया और पेटी बंद कर खटिया के नीचे रख दी। थोड़ी देर तकिये में मुंह छिपाये लेटी रही। सब सब्र तो करती है। मगर, शीघ्र ही दिल कमजोर पड़ जाता है।......

खबर देने बेबी गया था। पति का सबसे घनिष्ठ मित्र। लड़की देखने के लिये साथ आया आदमी। हर्षविभोर हो वह बेबी का स्वागत करने दौड़ी बाहर आयी। बेबी ने अपने चेहरे की परेशानी छिपाने की बड़ी कोशिश की। शांतम्मा ने इस पर गौर नहीं किया।

"बैठो बेबी भैया। सोमवार को खत आया, 15 को स्कीम पूरी होगी। 20 को छुट्टी पर निकलेंगे।"

"शांतम्मा !"

"हंसती हुई बातें कर रही थी कि एकाएक गाल पर मानो तमाचा पड़ा।

चौंक उठी। यह क्या ? बेबी भैया की आंखें डबडबा आ रही है ?

अब याद नहीं आता कि बेबी ने क्या बताया और उसने क्या सुना। एकाएक आसमान ही मानो उलट गया।

आगे एक तरह का उन्माद रहा! पहले मैले कपड़ों में ही बाहर दौड़ पड़ी······

झूठ ! सब सुनी बातें झूठी हैं। अपना राजन भैया जिंदा है। वह किसी भी देश में जाकर ढूंढ़ लायेगी। अकेली ही जायेगी······पता नहीं, किस-किसने पकड़-कर गाड़ी में बिठाया। रास्ते में एकाध बार गाड़ी से कूदने की कोशिश की। गाड़ी मेलाझत्तु के द्वार पर पहुंची तो उससे कूद पड़ी और बेतहाशा दौड़ी हुई बरामदे पर चढ़ी। उसके राजन भैया यहां कहीं होंगे।

जायेंगे कहां······बस, कुछ और याद नहीं आती।

तार मिलने के पांचवें दिन प्रधानमंत्री और स्थलसेनाध्यक्ष की तरफ से कमांडिंग अफसर का भेजा शोकसंदेश मिला।

······आपके पति की असामयिक मृत्यु पर हम हृदय से दुःखित हैं। भगवान आपको यह दुर्वह दुःख सहन करने की शक्ति और साहस प्रदान करें······

कितना ही प्रयत्न करती। फिर भी आंखें भर आयी हैं। आंख पोंछती हुए उसने पत्र पढ़ा······

"कल तुम्हारे लिये कुछ लिख नहीं सका। पूरा दिन "स्टांड टू !" रात को "लैट आउट"! असली लड़ाई ही समझो। पहाड़ी के उस पार चौदहवीं बटालियन पोसिषन लेकर खड़ी है। इस पार हमारी रेजिमेंट। कल सुबह को हरे पत्ते, हेलमेट और पोशाक में खोंसकर पर्दा बनाये उसी की आड़ में आज के पोसिषन में पहुंचे हैं। ऊपर की पहाड़ी से आर्टिलरि कर्वारिग फायर कर रही थी। जमीन से दो फुट ऊपर उठा कि नहीं; गोली लगी। अनंतनारायण रास्ते में गिर गया। स्ट्रेचर पर उसे ले गये। बेचारा, ताकत नहीं है। तेरा खत मिलने का दिन है। आया होगा। पर कल ही मेरे हाथ आयेगा······

28 जुलाई

आज भी तुम्हारी चिट्ठी नहीं लड़की ! हुआ क्या ? मुझे मालूम है कि तुम चिट्ठी भेजे बिना नहीं रहोगी। हर तीसरे दिन तुम्हारा पत्र न मिलने पर चैन नहीं लगता। सोचता हूं कि दादाजी की तबीयत खास खराब तो नहीं है। बड़ी सावधानी से उनकी सेवा करना। सबको 'ए लड़की', 'ए छोकरे'

आदि ही पुकारते। उसे प्यार की कमी न समझना। अपने बच्चों और पोतों के लिए दादा ने जिंदगी भर कष्ट झेला है। बचपन में दादाजी से मैं बहुत डरता था······

कल और परसों स्कीम का सबसे खतरनाक प्रशिक्षण है। दुश्मनों का एक 'पोस्ट' हम कब्जा करने जा रहे हैं। दुश्मन माने हमारी ही सेना के लोग हैं। दुश्मन फौज का अभिनय करते हैं। पोस्ट पकड़ने के लिए मैंने वालंटियर किया है। जैसा कि पहले लिखा था, 15 को स्कीम खतम हो जाये तो 20 को निकल सकूंगा। साथ चलने को तैयार रहना······"

"तैयार रहना" ! उसने वह पत्र हथेली में रखकर मरोड़ दिया।

बिटिया !

"जी !"

"इधर आ !"

शांतम्मा उठकर दादा के पास गयी।

"बैठ।"

शांतम्मा दादा की खटिया पर बैठी।

"सूखी डालों का, बूढ़ा बांझ पेड़-सा, मैं यहां खड़ा हूं। ढेर का ढेर फल देने वाला पेड़ उखड़ गया।"

शांतम्मा ने कुछ नहीं कहा।

"तुम पेड़ से लिपटी अंगूर की बेल हो। पेड़ गिर गया। दिन-रात मैं तुम्हारी बात सोचता हूं।"

"······"

"अब तुम्हारा सहारा कौन है ?"

"प्रभु !"

"हां, प्रभु के लिये कुछ भी असंभव नहीं है। हे ईश्वर, मेरा उद्धार कर। मैं गहरे जल में आ गया और धारा में डूबा जाता हूं। मैं गहरी कीचड़ में धंसता हूं। गहरे जल में मैं डूब रहा हूं······"

"दादाजी, ऐसे दु:खित न हों।"

"कैसे दु:खित न होऊं, बेटी ! जीवन के दुर्गद्वार तक ले आकर बाहर तुम्हें खड़ा कर देने के बाद दरवाजे बंद कर दिये न ? अब तुम किधर जाओगी ?"

"अपना रास्ता मैंने खोज निकाला है।"

कुंयेनाच्चन ने वह नहीं सुना।

"मैं तेल खतम होने से धुंधुआता दीया हूं। अधिक से अधिक हुआ तो आधी घड़ी। मेरे पीछे तुम्हारे ससुर भी चल देंगे। फिर तुम्हारा कौन होगा ? तुम्हें क्या एक पुत्र दिया कि गले पर मंगलसूत्र बांधने वाले के बारे में याद करती दु:खित होती दिन बिताये।"

"दादाजी !"

"एलीमलेक की पत्नी नेवोमी ने अपनी दो बहुओं से जैसा कहा था वैसा ही मैं तुमसे कहता हूं—तुम अपनी मां के घर जाओ। मरे हुए आदमी से और मुझसे जैसा किया वैसे यहोवा तुम पर भी दया करे।"

"वह नहीं होगा, दादाजी !"

"एं !"

"एक आदमी मेरा हाथ पकड़कर इस घर में ले आया। अब मेरे लिए दूसरा घर नहीं है।"

"इस छोटी उम्र में तुम्हें विधवा के रूप में कैसे देखता रह सकूंगा, बेटी !"

बातें सुनकर दीनाम्मा आयी।

"पिताजी ईश्वर के वास्ते कुछ चुप रहें। दवा करने से थोड़ा-सा आराम मिला था। फिर से हालत और भी बुरी हो गयी है। बच्चों की तरह बकबक करते ही जाते हैं।"

कुंयेनाच्चन ने सोचा—

"मैंने क्या बकबक किया ? सच किसी को नहीं सोहता। सोचो कि भविष्य में उस लड़की की क्या दशा होगी। कोट्टंपल्लि की एक चाची पहले बटाई के धान को वसूल करने के लिए दर-दर मारी-मारी फिरती थीं। वे बांझ थीं। एक चाचा की पत्नी। चाचा मर गये तो अपने हिस्से का दस परा खेत छोटे देवर को सौंप दिया और एक छोटी बहन के साथ रहने लगी। साथ में एक दिन बटाई के धान की वसूली के लिए आती। चालाक और गांव का मुखिया छोटा देवर पूछता—"खेत ? किसका खेत ? चाहो तो यहीं खाते-पीते रहो।"

"चाची घर-घर शिकायत करती। सबको उससे नफरत थी। वे पिताजी के पास शिकायत लेकर आती थीं। याद है। तब पिताजी पूछते—"नहीं, तो क्या

कोच्चुवकी झूठ कहता है ? परिवार के खेत से जो धान मिलता है वह कोट्टंपल्लि के लोगों को खाने को नहीं है।"

मटकते-मटकते वह औरत गली के कुत्तों की मौत मर गयी। किसीने ले जाकर पनच्चमूट्टु गिरजे के शवदुर्ग में दफना दिया। मैं स्वयं देख चुका हूं। कैसे चुप रहूं ?······"

सत्रह-अठारह बरस की लड़की। रूथ सास नोवारी के साथ गयी थी। उसने सास से कहा—"तुम जहां जाओगी वहां मैं भी आऊंगी। जहां रहोगी वहां मैं भी रहूंगी। तुम्हारे लोग ही मेरे लोग हैं। जहां तुम्हारी मृत्यु होगी वहीं मैं भी मरूंगी और मुझे वहीं मिट्टी दी जायेगी।" अगर रूथ की तरह यह छोटी लड़की तुम्हारे साथ चले तो उसका भविष्य क्या होगा। रूथ का जमाना ईश्वर की कृपा का जमाना था। प्रभु अपने जन इस्राइल के साथ थे। नेवोमी के परिवार में एक लखपति बंधु था। उसका नाम था बोवज। रूथ ने नोवामी से पूछा—"क्या मैं खेत में जाकर सिल बीनती जाऊं ?" उन्होंने कहा—"जाओ बेटी" वह गयी और कटाईवालों के पीछे जाकर बालियां बीन लीं। सौभाग्यवश वह खेत बोवज का था। उसने कटाईवालों के मुखिया नौकर से पूछा कि यह युवती कौन है। उसने जवाब दिया कि यह नेवोमी के साथ आयी मोआब देश की युवती है। यह सुनकर बोवज ने रूथ से कहा—"बेटी, बालियां बीनने के लिए तुम और किसी खेत पर न जाना। वहां मेरी नौकरानियों के संग रहना।" इस पर उसने उसके चरणों पर दंडवत किया और पूछा—"आपको मुझ पर इतनी मेहरबानी कैसे आयी ?" बोवज ने उससे कहा—"मैंने सुना है कि तुमने पति के मरने के बाद सास की सेवाएं की हैं और अपने माता-पिता व मुल्क को छोड़कर अनजाने लोगों के पास आकर रहती। इस्राइल के देवता यहोवा की छत्रछाया की शरण में आयी तुम्हें वह पूर्ण फल दे।" रूथ नेवोमी के उपदेश के अनुसार स्नान कर सुगंधी इत्र से सुवासित वस्त्र पहने बोअज के पास बैठी। उसने उसका उद्धार किया। उसने बोअज के लिए एक बच्चे को जन्म दिया। वह बच्चा दाऊद का दादा ओबेद था। यह मसीह की वंश-तालिका है। दाऊद से सुलेमान उत्पन्न हुआ। रहबियाम से अबीयाव उत्पन्न हुआ। अबीयाव से आस उत्पन्न हुआ। आस से यहोशापाद उत्पन्न हुआ। यहोशापात से योराम उत्पन्न हुआ योराम से अस्सियाव उत्पन्न हुआ। अस्सियाव से योथाम उत्पन्न हुआ। योथाम से आहास उत्पन्न हुआ। आहास से हिस्कियाव

उत्पन्न हुआ। हिस्कियाव से मनश्शे उत्पन्न हुआ······इसी क्रम से मंथान के पुत्र याकूब से मरिया का पति जोसेफ उत्पन्न होता है······

आदमी सिर्फ आदमी को जन्म ही दे सकता है। लेकिन, प्राण यहोवा के ही हाथ में है। वह खुद जब चाहता है वापस ले लेता है। मृतकों को जिलाना—हां पुराने नियम के जमाने में नवियों ने वह भी किया है। नये नियम के दिनों में प्रभु ने भी तो वह किया है। लासर को मकबरे से जिलाकर उठाया था। ईसा ने मार्था से कहा—"मैं पुनरुत्थान और प्राण हूं। मुझ पर विश्वास रखने वाले मरने के बाद भी जिंदा रहते हैं।" उसके बाद उसने मकबरे के पास जाकर आकाश की ओर देखते हुए प्रार्थना की—ऊंची आवाज में कहा—"लासर ! बाहर आओ।" वह कब्र से उठकर बाहर आया······

ओह ! प्रभु का वह रूप ! याद करते ही डर लगता है। चोगा, तेजभरा मुख निर्भय दृष्टिपात, आज्ञाशक्ति······

लासर, बाहर आओ······

"बाबूजी।"

"हुं।"

"क्या कह रहे हैं ?"

"कई बातें याद आ रही हैं।"

"कल रात को भी नींद में कुछ कह रहे थे।"

"हां, कल रात भर तुम्हारी सास इस द्वार पर पहरा दे रही थी। पूछा—इतनी देर क्यों ? क्या नहीं देखते कि मैं ओस में भीग रही हूं ? बुढ़ापे में इतनी तैयारी की क्या जरूरत है ?"

मैंने कहा—"इधर आओ, री······"

दीनाम्मा हंस उठी।

"बाबूजी यह क्या-क्या कह रहे हैं ?"

"छोटी बहू किधर है ?"

"यहीं है।"

"तुम्हारा पति कहां है ?"

"नाके को चले—क्यों ?"

"लगता है कि वक्त आ गया। सात तारों को दाएं हाथ में लिये देवदूत सात

स्वर्गद्वीपों के बीच में खड़ा है। मैं देख रहा हूं।''

''सब बाबूजी का भ्रम है।''

''अगर इसे पसंद है तो दूसरे ब्याह की अनुमति देनी चाहिये। हमने दहेज नहीं लिया है। इसलिए हिसाब चुकाने की कोई बात नहीं रही। उसे सिर्फ अपने कपड़े लत्ते लेकर बिदा लेना ही है।

बस। नाम के लिए दूसरी शादी होने पर भी उसका बच्चा न होने से वह जवान है। इसलिए कोई उसे पसंद करके खुद आयेगा।''

''बाबूजी क्या चुप नहीं रह सकते ?''

''कुंयेनामाप्पिला क्या कह रहे हैं ?''

दीनाम्मा ने मुड़कर देखा—

''कुरुप।''

दीनाम्मा बोली—

''लीजिये। साथी आ गये। बातचीत करने के लिए साथ कोई न होने से ही ऐसी बेकार की बातें सूझती हैं।''

''दस दिन की दोस्ती। थकान के मारे सराय में जब बैठा है तब दोस्त आता है। पोटली खोलकर साथ पान खाते हैं। कई कहानियां सुनाते साथ-साथ चलते हैं। अगले मोड़ पर बिदा लेते हैं······

''अच्छा नमस्कार। यही है न कुरुपजी !''

''यही है सच्ची बात। भगवान कृष्ण कहते हैं—मेरी अद्भुत गुणत्रयरूप की माया का अतिक्रमण करना बड़ा कठिन है। जो मेरी ही शरण में आता है वह इस माया का अतिक्रमण करता है।''

''कहां कौन अतिक्रमण करता है ? बांधता है ? किसीने आज तक नहीं लांघा। अधर्मी हो या दुष्ट, भले, शुद्ध या अशुद्ध, यज्ञ करने वाले या न करने वाले, सबों की दशा एक ही होती है। जो कुछ सूर्य के नीचे किया जाता है उसे ज्ञान से समझने का प्रयत्न मैंने किया। यह मनुष्य को परमात्मा का दिया दुःख है। है न रे ?''

'रे।' संबोधन सुनकर कुरुप चकित हो उठा। अभी तक ऐसा संबोधन कभी नहीं किया है। फिर भी उसकी परवाह किये बिना बोला—

''हां, सब माया ही है।''

''हम दोनों को एक दूसरे से परिचित हुए कितने साल हुए ?''

"दो साल।"

वाह ! ······पचास ईस्वी में हम दोनों ने मुल्लतरा के मालिक के खेतों में बटाई की खेती साझेदारी पर की थी न ! ईमानदार आदमी, तुम भूल गये हैं न ?

कुरुप समझ गया कि कुछ गड़बड़ी है। आदमी का दिमाग ठिकाने नहीं है। कुयेनामाप्पिला का मनयहां कहीं नहीं हैं। पर, उसे ठीक से देखा तो था, पहचाना भी था।

"तुम कैसे मुझे भुलाते ? तुम्हारी बड़ी बेटी की शादी पर दहेज लेने के लिए जब वरपक्ष वाले आनेवाले थे तब तुम यह कहते हुए चित लेट गये कि 'हाय, पाप्पी धराशायी हो रहा है।' उस समय तुम्हारी मदद करने के लिए मेलोझत्तु कुयुनैना ही थे। तुम भूल गये हो रे ?"

कुयेनामाप्पिला !

"एं।"

"यह मैं हूं। शिवराम कुरुप !"

"............"

कुयेनामाप्पिला !"

फिर हिले भी नहीं।

आंखें बंद हैं। खुर्राटे ले रहे हैं मानो गहरी नींद सोते हैं।

कुयेनाच्चन ने जब आंखें खोलकर देखा तब घर में लोगों की भीड़ थी। काली पोशाक में पादरी। अगर-धूप उड़ाते हुए खड़ा सहायक मत्तायि। औरतें, बच्चे······

पादरी ने मुख झुकाकर कुयेनाच्चन को गौर से देखा और कहा—

"तैलाभिषेक करूं कुयेनाच्चन ! क्या तैयार नहीं हैं ?"

सिर हिलाकर स्वीकृति दी।

पादरी ने सिर पर हाथ रखकर प्रार्थना की—

"हे पितृपुत्रपरिशुद्धात्मा दैव, तेरी सशक्त और सहायतापूर्ण दक्षिणी भुजा इस दास के ऊपर रखने के लिए अपना दुर्बल कर तेरे पवित्र नाम पर इसके ऊपर रखता हूं।"

पादरी ने मुख झुकाकर कहा—

"मौद्योन्यूसो, प्रार्थना दुहराकर पापों को स्वीकार करना चाहिए।"

कुंयेनाच्चन के होंठ बुदबुदाये ।

पादरी ने फिर से प्रार्थना की—

"पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम तू पवित्र हो जा। तूने जाने-अनजाने जो अपराध किये क्षमा किये जाएं। तेरे सारे दुर्विकार एवं पैशाचिक व्यापार तुझसे मिटा दिये जाएं।"

पलकों पर सलीब के आकार में इत्र लेपते हुए पादरी ने प्रार्थना की—

"इस विशुद्ध तैल और तेरी करुणा के कारण आंखों से किये गए सारे अपराधों पर ईश्वर क्षमा प्रदान करें।"

आगे नाक, होंठ, कान, हाथ, पांव और नाभि पर सलीब के आकार में इत्र लेप कर प्रार्थना दुहरायी।

तैलाभिषेक के बाद पादरी और सहायक को दक्षिणा देकर बिदा किया। सभी रिश्तेदार एक-एक करके चले गये। कीवरीत, कुट्टिअम्मा, थोमस मास्टर और घर के दूसरे लोग ही रह गये।

थोमस मास्टर ने कहा—

"दवा और खुराक के सेवन तोड़ने के ही कारण रोग बढ़ा है।"

कीवरीत ने कहा—

"अब इस दशा में कैसा खुराक, बेटे?"

"यह बात नहीं है, बाबूजी! डाक्टर ने कहा कि दादाजी की सेहत उम्र की थकान से बाधित नहीं हो पायी है।"

"सो तो ठीक है। इस सत्तर बरस की उम्र में इस गांव में इतना स्वस्थ आदमी और कौन था?"

मात्तुकुट्टि ने कहा—

"खुराक की बात हम कहें और पिताजी न मानें तो किया क्या जाए?"

"मेरी बात दादाजी मानेंगे। डाक्टर से कहकर दवा लाऊंगा।"

"अच्छा! तो कोशिश करो।"

कीवरीत मात्तुक्कुट्टि को लेकर आंगन में उतरा। कटहल की फैली जड़ पर बैठा। थोड़ी देर चुपचाप कटहल की पत्ती के डंठल से जमीन पर लकीर खींचता रहा।

"जो हो गया सो हो गया। पिताजी की यह हालत है कि, पता नहीं, कब आंखें

मूंद लें। अब तुम्हारी बात क्या होगी ?"

मात्तुक्कुट्टि ने कोई जवाब नहीं दिया। आसमान की ओर ताकता रहा, मानो इस बात पर डटा हो कि अपना सहारा यहोवा से आता है।

"अब तक तुम लापरवाह होकर अपनी इच्छानुसार चल सकते थे। बेटा जो कुछ भेजता उससे दीनाम्मा काम चला लेती थी। अब क्या करोगे ?"

"करना क्या है ? जो हो, सो हो।"

"वही तो कहा। तुमने अब भी जिम्मेदारी नहीं सीखी है।"

"तो मैं क्या करूं ? सब किस्मत का खेल है !"

"कोई धंधा करना होगा रे !"

"धंधे के लिए भी तो क्या रुपया नहीं चाहिए ?"

"रुपये का इंतजाम कहीं से करना होगा। तुम्हीं ने कहा कि पलटन के दफ्तर से हजार रुपये मिलेंगे। उसके साथ किसी से उधार लेकर नाके पर एक दूकान खोल लो।"

"दो हजार का कर्जा कौन देगा ? हमारे बीच में अच्छी आर्थिक स्थिति फिलिप्योस की है। क्या वे देंगे ?"

"मैंने उसे यह बात बतायी। पर वह टस से मस नहीं होता। उसको 'भाई' का नाता अभी तक नहीं सूझा है।"

"वही तो मैं भी कहता हूं।"

"अच्छा ! मैं एक हिस्सेदार दूंगा। क्या तुम जिम्मेदारी से सारा काम संभालोगे ?"

"कौन ?"

"शिवरामकुरुप। उसीने मुझसे कहा। वह व्यापार की कला जानता है। कई दिनों से षणमुखमपिल्लै की दूकान पर मुनीमी करता था न ?"

कुछ देर तक मात्तुक्कुट्टि मौन रहा। परचून की दूकान की बात अच्छी है। रामकृष्णन की दूकान अब करीब बंद ही समझिये। इस मुहल्ले में और कोई परचून की दूकान नहीं है। अगर उधार का सौदा न दें तो निर्वाह हो सकेगा। मगर······

"उस बेवकूफ कुरुप के साथ क्या हिस्सेदारी की दूकान ठीक है ? कौन जाने।"

"अरे, वह रहे बेवकूफ। कब्जा तो तुम्हारे हाथ में रहे। उसी में होशियारी है।"

दोनों भाई और थोड़ी देर चुप रहे। कीवरीत ने कहा—

"कल उससे मिलकर और एक बार बात करूंगा। उसके बाद तय करेंगे। तो, उस लड़की का क्या होगा ?"

"लड़की की बात !"

"क्या उसकी मां ने कुछ कहा !"

"क्या !"

"वह तो छोटी लड़की है। यहां हम उसे रोके रखें, सो ठीक नहीं।"

मात्तुक्कुट्टि कुछ नहीं बोला।

"मेरे ख्याल में वह अपने घर जावे। हमारा तो लुट गया। वह अपनी जिंदगी क्यों बरबाद करे !"

"मैं उस बात का फैसला कर चुकी बाबूजी !"

"एं।"

मुड़कर देखा तो शांतम्मा कुएं की जगत पर नींबू के पौधे के पास सिर झुकाये खड़ी थी। वह एक पत्ती तोड़कर उंगलियों से रगड़ रही थी।

"अब जिंदगी भर और कोई रिश्ता मेरे लिए नहीं होगा। न दूसरा घर ही।"

"सोच-विचार कर बातें तय करना, बेटी !"

"अच्छी तरह सोचकर ही मैंने तय किया है पिताजी !"

उसने उस समय सिर उठाये निस्संकोच दोनों को बारी-बारी से देखा। उसके मुखमंडल पर गंभीर तेज था। एक निर्णय।

"बेटी, तुम भीतर जाओ।"

शांतम्म कुएं के पिछवाड़े से चौके में गयी। अचानक फिलिप्योस साइकिल से आ पहुंचा। साइकिल तेज चलाने के कारण पसीने से तर था।

"क्या तैलाभिषेक हो गया !"

"हूं ! तुम कहां थे !"

"कहां थे ! जली दुम के कुत्ते की तरह सैकड़ों बातों के पीछे भागता रहा हूं। गाड़ी वर्कशोप में है। क्या उड़सकता हूं !"

"अरे सिर्फ पूछा कि कहां थे। तुम काहे झल्लाते हो ?"

"ओह, झल्लाते हैं ! पिताजी की तबीयत कैसी है !"

"पड़े हैं।"

फिलिप्योस पिता की खटिया की तरफ जा रहा था। कीवरीत ने पुकारा—'फिलिप्योस !"

फिलिप्योस मुड़कर खड़ा हो गया।

"पिछले इतवार को मैंने मात्तुक्कुट्टि की बात बतायी तो तुमने कुछ जवाब नहीं दिया। किसी धंधे के बिना वह जीयेगा कैसे !"

"कौन जाने ! मुझसे पूछो तो मैं क्या करूं ! तीस हजार का काम है। काम तीन चौथाई हो चुका। पर अभी तक दमड़ी नहीं मिली। एक बड़ा लालची इंजिनीयर आया है। रिश्वत दिये बिना वह बिल पास नहीं करेगा। कर्जा जहां-जहां मिले उन सब जगहों से कर्जा लेकर काम चला रहा हूं—"

"वह तो भैया की बात।"

"हां—मेरी बात।"

"ठीक है। तीस हजार चालीस हजार का हिसाब कौन मांगता है ? अगर नहीं देना है तो वही बताओ।"

"बताया कि नहीं।"

"हां—भूल कीवरीत भैया की ही है। छोटे भाई को मदद देने का रास्ता भी ढूंढ़ा।"

फिलिप्योस कोई जवाब दिये बिना कुंयेनाच्चन की खटिया के पास गया। दीया जल चुका था। खटिया के पास से एक संध्याकीर्तन ऊंची आवाज में सुनाई पड़ा।

लगता था कि मौत दरवाजे पर दस्तक दे रही है। फिर भी कुंयेनाच्चन के स्वास्थ्य में अस्थायी रूप से ही सही, थोड़ा सा सुधार हुआ। उसका कारण दवा और खुराक नहीं था। मुख्य बात थी शांतम्मा की सेवा। शांतम्मा की जिंदगी में जो भीषण आघात आ पड़ा उससे ऊपर उठकर निकलना असंभव सा लगने पर भी वह उससे निकली और एक नये ज्योतिपुंज की भांति उठी ! यह उसके लिये नया जन्म था। उसकी अंतरात्मा ने कहा कि जो खो गया वह तुच्छ है, जो पाना है श्रेष्ठतर है। शाश्वत प्रियतम अभी आने वाला है। तेल भरा दीप लिये उसकी

राह देखनी है। यही उसके जीवन की मंजिल है ईश्वर ने कहा है कि स्वर्गस्थित पति के स्वागत में दीपक हाथ में लेकर दस कुमारियां चलती हैं। उनमें पांच होशियार थीं और पांच मूर्ख। मूर्ख कुमारियों ने दीपक हाथ में लिया, पर अलग से तेल नहीं लिया। तेज कुमारियों ने एक हाथ में दीपक और दूसरे में तेल का बरतन लिया। जब दूल्हे के आगमन में देर होने लगी तब सबको नींद आने लगी। मगर आधी रात को दूल्हा आया। कोलाहल सुनाई पड़ा कि स्वागत करने चलो। इस पर सब ने उठकर दीया तेज किया। इस पर मूर्ख कन्याओं ने होशियार कन्याओं से कहा—हमारे दीये बुझ रहे हैं, सो अपने तेल में से थोड़ा हमें दो। मगर होशियार कन्याओं ने कहा—"कही ऐसा न हो कि दोनों का तेल कम पड़े। अत: तुम दूकानदारों के पास जाकर तेल ले लो।" जब वे तेल खरीदने गयीं तब दूल्हा आया। जो तैयार थीं वे उसके साथ शादी की दावत में भाग लेने चलीं। दरवाजा बंद भी हुआ। उसके बाद दूसरी कन्याएं आयीं ; कहा—"प्रभु ! प्रभु! हमारे लिये दरवाजा खोलिये।" इस पर उसने जवाब दिया कि मैं तुम्हें नहीं जानता। शांतम्मा तैलपात्र और दीपक वाली कन्या हो गयी। स्वयं प्रभु की प्रतीक्षा करती थी। दूसरों को प्रतीक्षा का उपदेश भी देती रही। उपदेश सुनने-सुनाने के लिये आसपास के गांवों में जाती थी। बड़े सवेरे जागती। कुंयेनाच्चन की खटिया के पास बैठकर प्रार्थनागीत गाती। शांतम्मा का गीत सुनता हुआ पनच्चिमृट गांव जागता।

प्रार्थना के बाद वह घर का सारा काम करती। कुंयेनाच्चन को दवा, काफी वगैरह पिलाती। इसके बाद सुसमाचार के प्रचार का कार्य करने गांवों में जाती। लौटते कभी-कभी दोपहर बीत जाती। दीनाम्मा को सिर्फ एक बार खाना तैयार करने का काम करना पड़ता था। शांतम्मा गांव से लौटकर काम का जिम्मा खुद उठा लेती।······

कुंयेनाच्चन की तबीयत अब की बार जो सुधरी सो क्षणिक बात थी। दीये में तेल खतम सा था, आखिरी लौ थी। दवा और कुछ दिन लगातार खाते रहे तो पेट खराब हो गया। हाजमा नहीं रहा। कमजोरी बढ़ी। उठकर खड़े होते तो चक्कर आता। बीच-बीच में बेहोश पड़ते। बकझक करते। किसी से बातें करते समय समझते कि वह और कोई है। छोटे बच्चों की तरह हठ करते।

अब शांतम्मा की सेवा ही कुंयेनाच्चन का अकेला सहारा रही। हर तीसरे दिन

पानी गरम करके तेल मलकर स्नान कराती। सवेरे ठंड के वक्त अंगीठी गरम करती। रात को तीन-चार दफे गरम काफी पिलाती।

जब दिल कुछ हरा लगता तब कुंयेनाच्चन कहते—"किसने सोचा था कि आखिरी दिनों में तुम मेरा अकेला सहारा होगी। तुम्हें देने के लिये मेरे पास कुछ नहीं है।"

"ऐसा कहने से काम नहीं चलेगा दादाजी।"

"मेरे पास क्या है, बेटी।"

"आशीर्वाद!"

"आशीर्वाद? मेरे आशीर्वाद का क्या महत्त्व रहा है? मेरे आशीर्वाद के बावजूद मालिक ने तुम्हारी माटी की झोंपड़ी तहस-नहस कर दी। 'कल निकलेंगे' वाला पत्र हाथ में रखे……"

"बस, दादाजी। ऐसी बात मत कहिये कोई ईश्वर का रास्ता नहीं जानता। किसने सोचा कि मैं दादाजी की बहू बनूंगी। शादी का निर्णय बदलने की बात तय करके दादाजी ही चिट्ठी लिखाने लगे थे न?"

"हां।"

"तो सब प्रभु की इच्छा! उसके पवित्र नाम की जय हो।"

सूनी पगडंडी से शांतम्मा अदृश्य और अज्ञात अभयसंकेत की खोज में जा रही थी। जब कभी एक मर्द की जरूरत पड़ती तब बेबी ही मदद करता। पलटन के दफ्तर से लिखा-पढ़ी करना, शहर से ज़रूरी चीजें ला देना, पुत्तनाट्टुकरा जाकर शांतम्मा की मां का कुशल मंगल पूछना सब बेबी ही करता था। राजन के देहांत के बाद बेबी कम बोलता था, गंभीर हो गया था। शांतम्मा को याद आता था कि शादी के बाद राजन के लौटने की घड़ी तक दोनों कैसी-कैसी मजेदार बातें कहते-हंसते थे!

बेबी अब लीलाम्मा को लेकर अलग किराये के घर में रहता था। मां, दो छोटी बहनें, लीलाम्मा और दो महीना वाला बच्चा—ये सब उस परिवार में थे। आमदनी तो सिर्फ वेतन ही। परिवार की झंझट, प्यारे मित्र की असामयिक मृत्यु आदि ने हंसमुख के दिल को बुरी तरह घायल कर दिया।

एक दिन की बात है। शांतम्मा चार-पांच मील दूर से कन्वेंषन के बाद घर लौटी तो देखा घर पर चौके में लीलाम्मा बच्चे को गोद में लिये बैठी है। पास ही

दीनाम्मा भी है। आते ही उसने बच्चे के लिये हाथ बढ़ाया। दोनों के चेहरे पर तो ध्यान नहीं दिया। हाथ बढ़ाते हुए बोली—

"लीला चाची दिनों से नहीं दीखी। बेबी भैया पेंशन का फार्म भरवाकर ले गये। एक हफ्ता बीत चुका।"

"बेबी भैया को न देखने से अगर नींद नहीं आ रही है तो बुलाकर यहीं बसा लो री!"

दीनाम्मा ने आवाज ऊंची करके कहा—"लीलाम्मा! बदतमीजी की बातें मत कहो। किसी नालायक की मनगढ़ंत बात है। मैंने क्या नहीं बतायी?"

"वाह! जो करते हैं वह कहां की शराफत है?"

शांतम्मा ने पूछा—

"कैसी बेइज्जती का काम किया?"

"क्या मुझे कहना पड़ेगा?"

"कहे बिना कैसे पता लगे?"

दीनाम्मा ने उतावली होकर कहा—

"चुप रहो। कहा। कहलाया! जा! लीलाम्मा! और तो और, जरा सोचो, पिताजी भीतर बीमार पड़े हैं। वह मन में बड़ा दु:ख सहन करती है।"

"क्या केवल मुझी को ये सब बातें याद करनी हैं?"

"सबको स्मरण करना चाहिये। लीलाम्मा जा! मैं तुम्हारी चाची हूं न? मेरी बात मानो।"

शांतम्मा को बात का पूरा-पता तो नहीं, पर कुछ अंदाज तो उसे लग चुका था। उसने दीनाम्मा की तरफ देखकर कहा—

"चाची क्यों घबराती है? मैं भी जान लूं कि वे क्या कहना चाहती हैं?"

लीलाम्मा विजयिनी के स्वर में बोली—

"देखा? उन्हें घबराट बिलकुल नहीं है। सुना दीनाचाची? सुनी-सुनाई बात नहीं है देखा?"

"पूछा कि देखा क्या है।"

"वे आजकल न खाते हैं, न सोते हैं। मुझे फूटी आंखों देखते तक नहीं।"

"उसके लिये यह बेचारी औरत क्या करे?"

"ओह! ऐसी जरूरतें महसूस हों तो और एक बार शादी कर ले। धर्मशास्त्र

हाथ में लेकर पूरे मुल्क में बन-ठनकर चलना क्या काफी नहीं है ? और लोगों को क्यों तंग करती हो ?"

दीनाम्मा से रहा नहीं गया।

"री कुलच्छनी ! अंटसंट कहे बिना मेरे घर से निकल जा !"

"तुमने सिखाया होगा।"

दीनाम्मा लपक उठी, बोली—

"झाड़ू कहां है ? इस दुर्बुद्धि को झाड़ू मारकर निकालूं।"

शांतम्मा ने दीनाम्मा का हाथ पकड़कर कहा—

"नहीं चाची ! कुछ मत कहो ! कुछ—"

"सो कैसे ? जानना चाहिये न कि किस मां की बेटी है ?"

कुयेनाच्चन ने आवाज दी—"क्या है री बेटी ?—एं, क्या है री ?"

"कुछ नहीं बाबूजी, कुछ नहीं।"

"बोलो री, क्या है ?"

"कहा न कि कुछ नहीं है।"

आगे भी बड़बड़ाती हुई लीलाम्मा चली गयी। आंगन की तरफ देखा तो बाड़े के पास-पड़ोस की औरतें खड़ी थीं। शांतम्मा कुयेनाच्चन के पास गयी। धर्मशास्त्र छाती से लगाये थोड़ी देर उनके पैताने झुकी बैठी थी। मुख उठाकर दुपट्टे के छोर से मुंह पोंछा। मुस्कुरायी। कुयेनाच्चन बराबर पूछते जा रहे थे—"कौन आया था ? बात कहो री।"

शांतम्मा ने कहा—

"धर्मशास्त्र पढ़ूं दादाजी ! 27 वाला नीतिवचन······यहोवा, न्याय सुन। मेरी चिल्लाहट सुन ! निष्कपट अधरों से निकली मेरी प्रार्थना सुन ! ······शांतम्मा को पढ़ते सुनकर सूनेपन में नयनों से अभय संकेत खोजते हुए कुयेनाच्चन लेटे रहे······"

दूसरे दिन शाम को वेबी आया। दो मील दूर राजन की कंपनी का एक सिपाही छुट्टी पर आया था। पेंशन की बात के बारे में पूछने आया था।

सारी बातें समझने के बाद कहा—

"कोल्लम पर डिस्ट्रिक्ट सोलजर्स बोर्ड से एक प्रमाणपत्र लेना है। कल दोपहर के बाद जाऊंगा।"

"नहीं जाना है, बेबी भैया !"

"एं।"

"पेंशन न मिले तो जाने दीजिये ! अगर चाहते हैं कि दोस्त की पत्नी खुश रहे तो आगे······"

"आगे ?"

"बेबी भैया मेरी बातों की पूछताछ करने यहां न आया करें।"

इसके बाद शांतम्मा वहां खड़ी न रह सकी। बेबी के चेहरे की तरफ देखने की ताकत नहीं रही। वह कमरे के भीतर जाकर खटिया पर पड़ी सिसक-सिसककर रोने लगी।

बारह

पनच्चिमूट गांव में रामकृष्णन की दूकान के ही सामने मात्तुक्कुट्टि की परचून की दूकान खुली। पचास प्रतिशत की साझेदारी में शिवरामकुरुप ने दो हजार रुपये लगाये। मात्तुक्कुट्टि के पास राजन के बकाया वेतन और सुरक्षाकोष से मिले हजार रुपये जमा थे। ऐन वक्त पर फिलिप्योस ने हजार रुपये उधार दिये। कुल चार हजार रुपये लगे। कायंकुलम के उण्णूण्णि की थोकमाल दूकान से थोड़ा माल उधार मिला। कुल मिलाकर एक अच्छी दूकान बन गयी। रामकृष्णन की दूकान का एक पुराना नौकर बिक्री में सहायक के रूप में मिला। मुहल्ले भर में और दूकानें नहीं थीं। मात्तुक्कुट्टि पर लोगों का भरोसा भी था। इसलिए बिक्री अच्छी रही।

मेजपोश से ढकी मेज के पीछे मात्तुक्कुट्टि मालिक बनकर बैठता है। वह बिल के पैसे ग्राहकों से लेकर तिजोरी में डाल देता है। हिसाब-किताब और माल के खरीद का काम शिवरामकुरुप करता है। हर दृष्टि से मेलोझत्तुवालों की दूकान मुहल्ले की चर्चा का विषय बन गयी।

व्यापार शुरू करने पर मात्तुक्कुट्टि की प्रतिष्ठा बढ़ गयी। गांव के नेता महत्त्वपूर्ण बातों पर सलाह-परामर्श करने के लिए दूकान पर आने लगे। बात जरूरी होती तो मोटर में उसे ले भी जाते।

दुश्मनों ने अंदाज लगाया था कि मात्तुक्कुट्टि बेटे की मृत्यु से रसातल हो जायेगा। चूंकि वह कुछ प्रभावशाली है अतएव उसके कुछ दुश्मन भी हैं। किंतु जैसा कि भजनसंहिता में कहा है, यहोवा की करुणा का दुर्ग उठा। शत्रुगण और दुष्कर्मियों की इच्छाएं सफल नहीं हुई। यहोवा के महत्त्व ने उसे अद्भुत उन्नति दी। बेटे का पेंशन हर महीने आता था, चाहे रकम छोटी ही क्यों न हो। दूकान से अच्छी आमदनी मिलती थी। झंझट नहीं। दीनाम्मा में भी अब पहले से अधिक उत्साह है, तेज भी है। घर की हुकूमत बड़ी लगन व चुस्ती से करती है। शांतम्मा दुनियादारी की बातों से छूटकर हमेशा हाथ में धर्मशास्त्र लिये चलती है। दीनाम्मा उसे किसी तरह चिंतित होने नहीं देती।

एक दिन फिलिप्पोस मात्तुक्कुट्टि की दूकान पर आ गया। दूकान में काफी भीड़ थी। कुंयुचेरुक्कन भी वहीं था। यह तो रोज की बात थी। दूकान खुलने पर उसने शिवरामकुरुप से दोस्ती कर ली। चावल या मूंग के बोरे पर बैठ जाता। उसके बाद किसी के मांगे बिना ही हुकूमत शुरू हो जाती। लक्ष्मी जब सामान लेने लगी तब चार आना कम पड़ा। चार आना कल दूंगी। सहायक कहता कि पैसे कम हों तो सामान भी उसके हिसाब से कम लो। तब कुंयुचेरुक्कन अपना भाषण शुरू करता—लक्ष्मी! उसने यह दूकान बाप के खजाने से खोली नहीं। किसी गैर से भारी ब्याज पर कर्जा लेकर ही दूकान खोली है। कर्जा नहीं चलेगा।

हर बात पर यही तरीका था। अगर और बात न मिलती तो अपने परिवार की महत्ता सोदाहरण घोषित करने लगता—

"पिताजी मेच्चेरि के खेतों में खेती कर रहे थे। कोशि के द्वार से बड़े तालाप तक बाईस परा की खेती एक लंबे पेड़ के तने की तरह फैली है। एक साल धान की बालियां खूब हुईं। घनी और मोटी कि अगर खेत में हाथी उतरे तो बाहर दिखाई न पड़े। धान पके थे कि एक दिन-रात को मेड़ टूट गयी। क्या करते?"

सुननेवालों का क्या नुकसान? कुंयुचेरुक्कन इसकी चिंता थोड़े ही करता था। हुकुम करते, भाषण देते वह काफी रात तक वहीं बैठा रहता और जब चलने लगता तो कहता—

"दो पौंड गुड़ तौल दो।"

वह लेकर पोटली बनाकर घर चलता। पैसा मांगने की अनुमति नहीं है।

पैसा कहीं मांगा तो बात एकदम बिगड़ेगी। मात्तुक्कुट्टि यही सोचकर चुप रहता कि जब दें तब लेंगे। वरना भतीजों से ले लेंगे······

कुंयुचेरुक्कन अपने भाषण का मजा खुद ले रहा था तो फिलिप्योस आ गया। उस वक्त दूकान पर शिवरामकृष्ण नहीं था। कुंयुचेरुक्कन ने पूछा—"समाचार क्या है ?"

फिलिप्योस उसकी परवाह न करके बोला—

"खास कुछ नहीं।"

"पिताजी बिलकुल कमज़ोर हैं। मैंने सवेरे जाकर देखा।"

"हुं। मात्तुक्कुट्टि इधर आओ रे।"

फिलिप्योस सड़क पर लौटे। मात्तुक्कुट्टि पीछे चला। सोचा कि सड़क पर बरगद के नीचे खड़े होकर बातें करेंगे। मगर वहां बेलायुधन और दो आदमी मिलकर कोई रहस्य बात कर रहे थे। इसलिए पूरब दिशा में कुछ दूर चले। एक पगडंडी पर पहुंचे।

मात्तुक्कुट्टि ने पूछा—"बात क्या है, भैया ?"

फिलिप्योस ने झट कोई जवाब नहीं दिया। छाती पर हथेली जमाये पास मिट्टी की दीवार पर बैठ गया।

"क्या तुम दो रोज के लिए दूकान छोड़ सकते हो ?"

"बात क्या है ?"

"वयनाड तक जाना है।"

"हुं ?"

फिलिप्योस फिर से चुप। काफी देर बाद बोला—"वह वहां गलत तरीके से जी रहा है। हमारी नौकरानी उसके साथ है—तुमने क्या नहीं सुना ?"

"हां, बच्चे कुछ कह रहे थे।"

"उसकी मां का मानसिक कष्ट बढ़ गया है। तीन-चार दिनों से वह बीमार है। दिमाग का संतुलन खो गया है। उसे कमरे में बंद कर रखा है।"

"······"

"आज कह रही है कि मैंने उसके बच्चे को कहीं ले जाकर मार डाला। क्या किया जाए ? मैंने कड़ी मेहनत कर चार पैसे तो कमाये हैं मगर चैन से रात को सोने का भाग्य नहीं बदा है।"

"क्या कीवरीत भैया से कहा ?"

"क्या कहना है ? चाहे कहूं भी, तो वे क्या करेंगे ? और दस आदमी सुनेंगे और बेशर्मी होगी । इससे बढ़कर क्या लाभ हो ?"

"क्या मेरे कहने से वह मानेगा ?"

"तुम्हारे कहने पर ही मानेगा । लगे हाथों ले आना । अगर बेइज्जती की कोई बात हो गयी तो उसके बाद पछताने-रोने से कुछ लाभ नहीं ।"

मात्तुक्कुट्टि ने सोचा । अपमान की बात तो पूरी-पूरी हो ही गयी । अब कुछ बचा नहीं है । फिर भी उसने कहा—"जो हो, कल सवेरे जाऊंगा ।"

"गाड़ी भी ले जाओ ।"

"हुं ।"

फिलिप्योस पगडंडी से ही आगे बढ़ा । उसको जाते देख मात्तुक्कुट्टि क्षण भर खड़ा रहा । कीवरीत भैया ने यद्यपि फिलिप्योस को भाइयों पर ममताहीन कहा तो भी सही बात वह नहीं थी । ऐन मौकों पर फिलिप्योस भैया ने भाईचारा निभाया है । दूसरे मौकों पर ऐसा हिसाब सुनाता मानो वह कौड़ी का मुहताज हो, बात ऐसा करता मानो जिंदगी में पहली बार मिलता हो । लेकिन मन में कुछ और ढंग का है । धनी और सुखी कहलाने पर भी अन्य दोनों भाइयों से अधिक मानसिक कष्ट फिलिप्योस भैया को ही झेलना पड़ रहा है ।······

मात्तुक्कुट्टि जब दूकान पर वापस आया तब शिवरामकुरुप मालिक की कुर्सी पर बैठा था । कायंकुलम से माल आया था । बैलगाड़ियों से माल दूकान में उतारा जा रहा था । कुंयुचेरुक्कन और कुरुप बड़े जोश से बातचीत में लगे थे ।

मात्तुक्कुट्टि ने प्रश्न किया—

"देर कैसे हुई ?"

"उण्णूण्णिमाप्पिला कोचिन गये थे । उनके आने के बाद माल निकलवाने में देर हो गयी ।"

"हुं ! मैं दो दिन यहां नहीं रहूंगा । कल इतवार ठहरा । दूकान नहीं खुलेगी । परसों शाम तक आने की कोशिश करूंगा ।"

"अच्छी बात है ! हो आइये ।"

कंयुचेरुक्कन ने पूछा—

"कहां जा रहे हो ?"

"मलाबार जाना है।"

"फिलिप्योस के बागान को ?"

"हूं।"

"बेटे को बुला लाने हैं न ? क्या यह बताने यों एकांत में ले गया ? मेरे सुनने से आफत है न ? अरे बात सुनो······बच्चों को भोजन के साथ अनुशासन की शिक्षा भी देनी चाहिए।"

"बस, बस। ऐसी बातें सड़क पर नहीं कही जातीं।"

"नहीं। मैं कुछ नहीं कहता। मगर क्या लोग नहीं जानते ?"

दूकान पर ग्राहकों की तादाद बढ़ रही थी। इसलिए इस विषय की बातचीत रुक गयी। शिवरामकुरुप ने बही खोलकर सारा हिसाब दर्ज किया। मात्तुक्कुट्टि दूसरे कामों में व्यस्त हो गया। कुंयुचेरुक्कन ने देखा कि अब बैठे रहने में खैरियत नहीं। वह घर चला।

बड़े तड़के उठना तो चाहा था। पर दीनाम्मा के जगाने के बाद ही मात्तुक्कुट्टि उठा।

"कैसी नींद सो रहे हैं ? पांच बजे से फिलिप्योस भैया की गाड़ी फाटक पर खड़ी है।"

"कै बजा ?"

"छह बजा होगा।"

"हां, नहाने के लिए जरा पानी भर रखना······जल्दी !"

"रात को दो बजे ही सोने चला था। जिस काम पर जा रहा था उसे निपटाने के लिए कई इंतजाम करने थे। अपने साथ ले चलने के लिए दो आदमी तैनात किये। हर परिस्थिति में काम आनेवाले। कोल्लम जाकर एक आदमी से मिला और डी. एस. पी. के लिए एक पत्र ले लिया। सुना कि जोणिक्कुट्टि ने पुलिस के छोटे दरोगा को अपनी तरफ कर लिया है। इन सारे प्रबंधों में काफी वक्त बीत गया और रात को दो बज गये। दिन का खुलना तक नहीं पहचाना।

सफर के लिए तैयार होकर मात्तुक्कुट्टि कुंयेनाच्चन के पास गया और कहा—

"पिताजी, मैं जरा मलाबार जा रहा हूं।"

"······"

"परसों लौटूंगा।"

कुयेनाच्चन ने कुछ नहीं सुना। शांतम्मा अंगीठी के अंगारे सुलगा रही थी। उसने कान के पास मुंह ले जाकर जब बात दुहरायी तभी सुनी।

"क्यों रे ?"

"फिलिप्योस भैया का बागान देखने।"

"उसके लिए तो उसका बेटा वहीं है।"

फंस गया। अब शुरू से सारा जवाब-तलाब दिये बिना छूट नहीं सकता।

"वह छोटा लड़का है न ?"

"एं।"

"वह अकेला है न पिताजी ?"

"नहीं नहीं। अपने घर की नौकरानी को भी साथ रख लिया है।"

"पिताजी से किसने कहा ?"

"खुदा ने। जाकर देखो तो !"

शांतम्मा ने पूछा—

"तो इससे दादाजी का क्या ?"

"मुझे कुछ नहीं। सिर्फ कह रहा था।"

मात्तुक्कुट्टि बाहर जाने को तैयार हो रहा था। आंगन में शोरगुल सुनाई पड़ा। छोकरों का ठहाका और शोर !

फिलिप्योस की पत्नी अन्नाम्मा !

लाल गोटों की रेशमी साड़ी बेतरतीब पहनी है। गले में चार-पांच हार। कानों में बड़ी बालियां !

"अच्छा ! अभी तैयार नहीं हुए ? चार घड़ियों से मैं वधू-गृह में इंतजार कर रही हूं। आइये !"

"भाभी !"

"भाभी ! वाह ! यह क्या मजाक है ? मेरी उम्र कितनी ? उन्नीस ! देखिए ! हुं !"

मुखमंडल पर कुछ विचित्र भाव ! नखरे और ठहाका !

दीनाम्मा बाहर आयी !

"अन्नाम्मा चाची।"

"अच्छा ! यही बात है ? तुमने अपने पास जबरदस्ती रोके रखा है न ! कम नहीं हो जी—मैं छुरा मारकर अंतड़ियां निकाल लूंगी। हमें अभी हो आने दो। एटत्वा गिरजे के मेले में जा रहे हैं। जल्दी चलो।"

आंगन में जमा हुए लड़कों ने सीटी बजायीं, शोरगुल किया।

अन्नाम्मा का हाथ पकड़कर खींचते हुए शांतम्मा बोली—"चाची, आओ, भीतर आओ।"

हाथ छुड़ाते हुए अन्नाम्मा ने कहा—

"धन ! छोड़ो हाथ—।"

साथ ही गंदा गाली दी। शांतम्मा स्तब्ध रह गयी। उसके मुंह से निकला—"हाय ! मैया !"

"अरे बुड्ढे ! लड़कों को अच्छे ढंग से पाला नहीं। तुम भी क्या नेक थे ! तुम्हारी भी एक रखैल थी न ! श्रृंगारी !······"

अब हिचके नहीं। दीनाम्मा और मात्तुक्कुट्टि ने उसे जबरदस्ती पकड़ कमरे के भीतर ले आने की कोशिश की। अन्नाम्मा ने मात्तुक्कुट्टि के हाथ पर दांत गड़ा दिये। इस हंगामे के बीच में फिलिप्पोस एवं आठ दस आदमी दौड़े आ पहुंचे थे।

फिलिप्पोस ने आवाज दी—

"कहां है रे······की बच्ची ? खतम कर डालो उसे।"

एक साथी ने कहा—

"उसे छूना मत। दिमाग बिगड़ गया है न ?" बाहर ले आने में बड़ी तकलीफ हुई।

"मोटर में बिठाकर ले जायेंगे।"

"मात्तुक्कुट्टि, तुम भी बैठ जाओ।"

गाड़ी चली तो छोकरे सीटी बजाते हुए पीछे दौड़ पड़े।

कुंयेनाच्चन मानो एक सपना देख रहे थे।

"यह क्या है बेटी ? कैसी अंधेर नगरी है ? कुछ समझ में नहीं, आया !"

"कुछ नहीं पिताजी !"

"क्या कुछ न होने से कालायि की बहू साड़ी लपेटे आयी ?"

"चाची की तबीयत ठीक नहीं है, पिताजी !"

"क्या पागल है ?"

दीनाम्मा ने कहा—

"मन की तकलीफ बहुत बढ़ गयी है बाबूजी।"

"विष ? किसने विष दिया ?"

"चुप रहिये, बाबूजी !"

"उसे बुला लाओ री !"

"मोटर में ले गये। कोई बात नहीं बाबूजी ! बेटे की बातें सोचते-सोचते दिल की आह बढ़ी है। बेटी के पिताजी जोणिक्कुट्टि को ले आने गये हैं। उसे देखने पर चाची चंगी हो जायेगी।"

"वह नहीं अयेगा री।"

"यहां के लोगों को वह बहुत प्यार करता है। इसलिये बुलाने पर आयेगा।"

"चाहता है। कैसा ?"

"………"

"क्या उस लड़की के प्यार से भी बड़ा है ? क्यों लाज गंवाने चला है ?"

"पताजी से कुछ भी कहना मुश्किल है। यह मानकर दिन बिताना चाहिये कि कुछ नहीं देखा, कुछ नहीं सुना !"

"नहीं देखा, नहीं सुना ! आंख और कान के रहते वह कैसे हो सकता है ?"

दीनाम्मा कुछ कहे बिना चौके में गयी।

शांतम्मा ने कहा—"सिसिली मुन्नी के साथ मैं गिरजाघर हो आऊं ?"

"क्या आज इतवार है ?"

"हां।"

"वाझप्पल्लि के पादरी हों तो शीघ्र ही मिस्सा भोग की पूजा प्रारंभ करेंगे।"

कुंयेनाच्चन को धार्मिक गीत गाते हुए सुनकर दीनाम्मा फिर से बाहर आयी, नाक पर उंगली रख धीरे से बोली—

"हे ईश्वर ! बाबूजी का भी दिमाग बिगड़ा सा लगता है। वरना ये सारे दृश्य देखने पर भी लेटे-लेटे क्या यों गाते ?"

शांतम्मा ने कहा—

"कल रात भर संध्या-प्रणाम की प्रार्थना दुहरा रहे थे शब्द साफ सुनायी भी नहीं दे रहे थे।"

"यही प्रार्थना है कि अधिक तकलीफ न हो।"

"नहीं चाची ! दादाजी को ईश्वर अधिक तकलीफ नहीं देंगे ।"

सिसिली स्नान कर, फ्राक पहनी सिर पर रूमाल बांधे एक छोटी देवदूतिन सी उछलती आयी । बोली—

"शांतामामी, जल्दी तैयार हो जाओ । समय हो गया ।"

कुयेनाच्चन ने पूछा—

"क्या मुन्नी है ?"

"हां, पिताजी ।"

"वह अब मेरे पास नहीं आयेगी । मुझसे बोलती तक नहीं ।"

"क्या सही बात है, बेटी ! "

"मुझे डर लगता है मां ! उस दिन मुझसे कहा—'कर्वणि और चट्टा पहन आओ, देखूं ।"

"अच्छा ! तभी तो बच्ची पास नहीं आती ! "

"गिरजा घर जाने पर बच्चों से लड़ना नहीं । मां के आंचल में पकड़े खड़ा नहीं रहना । दायीं तरफ स्त्रियों के आगे भक्तिभाव से हाथ जोड़ कर खड़े होना······

नीतिवान ताड़ सा पल्लवित होगा ।

हल्लेलुइया !

वह लेबानोन का पेड़ सा बड़ा होगा

हल्लेलुयिया !

वृद्धता में भी वह पल्लवित विकसित होगा ।

हल्लेलुइया !

उनकी तुष्टि पुष्टि श्रीवृद्धि होगी

बारकमोर !

फिर से मिस्सा के गीत और प्रार्थना दुहरायी ।

······भाइयो, हम सब भय, विनय, स्वच्छता स्नेह, सत्यविश्वास और ईश्वर-भक्ति से खड़े होकर इस आदरणीय वैदिक के हाथों से······

अरे हां ! गिरजे में ही तो हैं । वपतिस्मा के पत्थर के नीचे । खड़ा रहना कठिन है । आज मिस्सा में भाग लेना है । मतबहा की सीढ़ी पर पादरी पिलासा हाथ में लिये खड़े हैं एक आदमी हाथ का सहारा देकर उठाकर ले चल रहा है । मिसा में भाग लेने के बाद कहा—

"पिताजी, चलिए !"

इसी वक्त हाथ का सहारा देनेवाले आदमी के चेहरे की तरफ देखा ! कुंयोमा !

"क्या तुम गिरजे में थे ?"

"हां, हर इतवार को मैं आता हूं पिताजी !"

"ऐसा ?"

"मुझे देख नहीं सकते । मरने के बाद शरीर नहीं रहता इसीलिये अरूपी हूं ! पर आत्मा हर जगह जा सकती हैं। रोज कम से कम एक दफे पिताजी की खटिया के पास आया करता हूं।"

"पर मैं तुम्हें देख रहा हूं।"

'इसका भी कारण है। मेरे साथ पिताजी के आने का वक्त हो गया।"

"तुम्हरी औरत और बेटा कल मुझसे मिलने आये थे। मुर्गे का मांस अच्छी तरह काट भूनकर पत्तल में लाये थे। जबड़े में दांतों के बिना कैसे खाता ?"

"मैं भी उनके साथ था। मात्तुक्कुट्टि की बहू ने ही प्रार्थना की थी न ?"

"हां हां। कीवरीत को कोई तकलीफ नहीं है।"

"हुं।"

मात्तुक्कुट्टि ने नाके पर एक दूकान खोली है। देखी है ?"

"हां हां।"

"साझे का सौदा है।"

"हां ! साझा !"

"साझेदार को जानते हो ?"

"क्यों नहीं जानता ?"

"बागडोर मात्तुक्कुट्टि के हाथ में है।"

"किसने पिता से कहा ? उसके हाथ में खाक है।"

"उल्लू का पट्ठा !"

"तुमने ऐसा क्यों कहा ?"

"पिताजी ने क्या देखा ? चारों ओर अंधेरा है ! एक बत्ती जलाकर समझते हैं कि सब कुछ देख लिया है। पिताजी ने कुछ नहीं देखा, कुछ नहीं। समझा! ······"

"बाबूजी !"

"एं।"

"देखिये कि कौन आया है। बाबूजी को देखने के लिये वह कितनी देर से खड़ा है!"

कुंयुचेरुक्कन भैया का बेटा-कुंयच्चन!"

"क्या बड़ा?"

"नहीं, दूसरा। वह कल बंबई से आया।"

कुंयच्चन कुंयेनाच्च के खटिया पर बैठा। झुर्रीदार सूखी हथेली अपने हाथ में लेंकर संवारता रहा।

"तेरा बड़ा भाई कहां है रे?"

कुंयच्चन ने दीनाम्मा की तरफ देखा।

दीनाम्मा ने धीरे कहा—"बाबूजी से कुछ न कहना!"

इसके बाद जोर से कहा—

"बंबई में है!"

"क्या सजा दी!"

"ओह! नहीं।"

"अब तुझे कब जाना है!"

"एकाध महीने के बाद जाना काफी है।"

"तेरे बड़े भाई से मैंने कुछ नहीं मांगा था। वह खुद आधी रात को यहां चला आया।"

"क्या कुंयच्चन ने इसके बारे में पिताजी से कुछ पूछा!"

"हां—उसने जब पैसा दिया तब मैंने नहीं लिया, बहू ने ही लिया?"

"चुप रहिये, बाबूजी।"

"मैं चलूं! फिर आऊंगा दादाजी।"

दीनाम्मा कुंयच्चन के साथ द्वार तक चली।

"बेटा, क्या यहीं कहीं कुछ नौकरी की कोशिश नहीं कर सकते?"

"कैसी नौकरी चाची! किस्मत की बात है।"

चार कदम चलने के बाद मुड़कर बोला—

"मुझे दादाजी के पास खाली हाथ आना पड़ा।"

"ओह! पिताजी को अब किसी बात की कमी नहीं। यह सब सोचकर चिंता मत करो।"

दीनाम्मा कुंयच्चन को जाते देखती बड़ी देर तक द्वार पर खड़ी थी। बेचारा ! कितने ही लोगों से मदद मांगकर, मिन्नत कर नौकरी पायी थी, जो अब छूट गयी। फिर से नौकरी की खोज में बंबई शहर की खाक छान डाली। अब निराश हो वापस गांव आ गया है। इस आफत का कारण बड़ा भाई था। छोटे भाई के कमरे में उसने चोरी का माल जमा कर रखा था और पुलिस के अधिकारियों ने छापा मारकर उसे ले लिया। बड़े भाई को तीन साल का कारावास मिला ! यह कोई नई बात नहीं थी। इसके पहले भी तीन-चार बार वह जेल गया था। कई लोगों के चोरबाजार दल का सदस्य था। जो फंस जाता उसके परिवार को गुप्त रूप से आर्थिक सहायता दूसरे पहुंचा देते हैं। बिना किसी अपराध के अभागे छोटे भाई की नौकरी छूटी। बदनाम भी हुआ कि चोरबाजार का साझेदार रहा……

"बहू !"

"जी !"

"सांझ हो रही है न!"

"नहीं बाबूजी, सवेरे गिरजाघर में मिस्सा शुरू हुआ है।"

"सब धुंधला सा लगता है।"

"झपकी लेने से ऐसा महसूस होता हे। प्रार्थना करते हुए लेटे रहिये। मैं दोपहर के लिए कुछ तैयारी करूं !"

दिमाग सुस्त है ! बोझीला लगता। हाथ-पांव दुखते हैं। मन के भीतर घबराहट है। अफीम का वक्त आने पर ये सारी प्रतिक्रियाएं होती है हैं तकिये के नीचे से अफीम की पोटली ली। सिर्फ एक गोली थी। निगल गया।

बहू कहती है कि प्रार्थना करता रहूं। प्रार्थना के शब्द मन के भीतर रुई के फांकों की तरह उड़ते फिरते हैं। किसी पर काबू नहीं रहा है, कोई उसकी परवाह नहीं करता ध्यान नहीं देता। पट्टा पुराना हो चुका। मुन्नी तक नहीं मानती। संध्यानमस्कार में कहा है—विद्वेष के डंडे से, अचानक मृत्यु से, कोप से मुझे बचा लें। और एक जगह कहा है कि आयु के बीच में मुझे दुनिया से उठा न देना। तो भी क्या इतना चाहिए ! इस तरह धुंध आते रहने के बदले तेल के रहते बत्ती को बुझाना ही बेहतर है। पके बाल, घर का बुजुर्ग आदि शब्द तो सिर्फ औपचारिक हैं, दौड़-धूप है। दौड़ते-दौड़ते थककर रास्ते पर पेड़ की छाया में बैठे हांफता है। गिरकर

झपकी लेता है। ठिठुरता है। कौन उसे देखे ? मुखौटा बांधे घोड़ों की तरह दौड़ता है, न बायें देखता है, न दायें। अनजान उर्वर भूमि पर जाकर झंडा फहराना है। सारी जमीन मेरी ! शैतान ने ईश्वर को पर्वत की चोटी पर ले जाकर खड़ा कर दिया और कहा था—यह सब कुछ मेरा है ! परन्तु बात सिर्फ पल भर की है। वह उस समय पहचानते तो नहीं थे। पीछे दौड़ आनेवाले मजबूत आदमी के बारे में नहीं जानता था। वह तुम्हारा सब कुछ छीनकर अपना लेता है। तुम्हारे चौपाये, गेहूं का खेत, दाखबारी······वह शक्तिशाली थके हुए तुम से कहता है—"अपनी दाखबारी मुझे सागबारी लगाने के लिए दे दो।" पुराने नियम के जमाने में समरिया के राजा आहाब ने इसरायल के नाबोन से ऐसा ही कहा था। इस पर नाबोन बोला—"अपने पूर्वजों की संपत्ति तुम्हें नहीं दूंगा।" आहाब यह सुनकर उदास हुआ; बिना भोजन किये खाट पर मुंह फेरे पड़ा रहा। तब आहाब की पत्नी ईज़ेबेल आयी। उसने पत्नी से सारी बातें कहीं। उसने उससे कहा—"क्या तुम राज करते हो कि नहीं ? उठकर भोजन तो करो। उपाय मैं करूंगी।" उसने नाबोन के नगर के प्रमुख नागरिकों को पत्र लिखा—दो अच्छे आदमियों से झूठी गवाही दिलाओ कि नाबोन ने ईश्वर और राजा की निंदा की। इसके बाद उसे नगर से बाहर ले जाओ और पत्थर मार-कर मार डालो। इजेबेल ने पत्र आहाब की तरफ से लिखा और उसकी मोहर लगाकर भेजा। नगर के प्रमुख लोगों ने पत्र में लिखे अनुसार ही किया। पत्थर मारकर प्राणांत करना कितनी भीषण बात है ! एक-एक पत्थर लगने से मुंह टूटता है, नाक टूटती है, खून टपकता है हर पत्थर की चोट से आदमी थोड़ा-थोड़ा कर मरता है। खैर। दो हाथियों के पैरों से आदमी के दो पैर बांधना या और हाथियों से दोनों ओर पैर चिरवा देना! ऐसा तो नहीं देखा है सुना है कि वेलुत्तंपि दलवा ऐसी सजा देते थे। मगर हाथी श्रीकंठ को महावत पाच्चुकुरुप को दांत गड़ाकर मारते देखा है। पाच्चु हाथी को बहुत तंग करता था। साथ पाच्चु का छोटा भाई पाक्करन रहता था। एक दिन पाच्चु श्रीकंठ को ताड़ के पत्ते खिला रहा था। पाक्करन पास था। हाथी खार-खाये हुए था। आंख के कोने से देखा और सूड़ पर पाच्चु को उठा लिया। पाच्चु समझ गया कि हाथी उसे खत्म किया चाहता है। वह चिल्लाया—"पाक्करा"। पाक्करन बड़ा छुरा लेकर तैयार था। श्रीकंठ जब पाच्चु को जमीन पर रखकर दांत से वार करने लगा तब पाक्करन

ने उसकी पूंछ पर जोर से छुरा मारा। पाच्चु को छोड़कर श्रीकंठ पाक्करन के पीछे भागा। पाक्करन ने आवाज दी—"भैया! भागो! बच जाओ!" हाथी समझ गया। वह मुड़कर भागा और पाच्चु को पकड़ लिया। पाक्करन ने और एक बार पूंछ पर छुरा मारा। मगर अब की बार श्रीकंठ ने उसकी परवाह नहीं की। उसने दांत सीधे छाती में गड़ा दिया—"हाय भैया! ······मां······पानी" चिल्लाया······

थोड़ी कंजी मिलती तो अच्छा होता—गला सूख रहा है!

"बहू!"

सुना नहीं। फुरसत नहीं। वरना बीच-बीच में आकर पूछती कि कंजी दूं, काफी दूं। अकेली वह क्या करे? हर जगह उसका हाथ पहुंचना पड़ता है! मात्तुक्कुट्टि उसीकी होशियारी से डूबता-उतरता काम चलाता है। घर के बारे में उसे कुछ पता नहीं। नालायक झगडालू औरत जिसे मिली वह उन्नति नहीं कर सकता। वर्षा के दिन पानी का लगातार टपकना और झगड़ालू पत्नी दोनों एक से हैं। जो उसे काबू में लेने की कोशिश करता है वह हवा को रोकने की चेष्टा करता है, दाहिने हाथ तेल को पकड़ने का प्रयत्न करता है। नेक औरत तो घर के लिए वरदान है। पहले तोन्नक्काट के एक अध्यापक यहीं स्कूल में सिखाते थे। सात बच्चे थे। सातों लड़कियां थीं। वह था बड़ा निकम्मा। पान खाकर पान का रस टपकती दाढी मूंछ बढ़ाये चलता था। सात दिन उस घर पर चूल्हा न जलता तब भी बाहर किसी को पता न लगता। उसकी स्त्री इतनी सुयोग्य थी। बच्चियां राजकुमारी सी······

"हाय! गला जल रहा है!"

"बेटी!"

बड़ी घबराहट!

जीभ सूखी जा रही है। बहू कहां गयी? कहीं कुछ अस्वस्थ पड़ी तो नहीं? दिन में सोती नहीं है······जोर से आवाज दी—

"बहू!"

आवाज बिलकुल नहीं निकलती। कितनी ही ताकत लगाने पर भी आवाज बाहर नहीं आती। गला एकदम सूख चला। उठकर देखूं। कहीं चकराकर गिरूं तो? छडी कहां? संयोग से बच्चे ले नहीं गये। खटिया के सिरहाने रखी है।

धीरे से उठे । पांव जमीन पर जमता नहीं । बैठ—

"बहू !"

फिर उठे । दीवार के सहारे धीरे-धीरे चले । दरवाजा बंद था । चिटकनी नहीं लगी थी । दरवाजे की चौखट पकड़े हुए दरवाजा धकेलकर खोला ।

"बहू !"

कौन है ?······एं ? एक दूसरे से लिपटे पड़े हैं । काला जंगली भैंसा सा नंगा कुरूप ! गोरी हृष्ट-पुष्ट दीनाम्मा बहू । तड़पकर उठती है । कपड़े लेकर लपेट लेती है ।

"हे प्रभु !"

ठोकर खाकर गिरते हैं । दौड़ते हैं । छड़ी कहां ? हाथ में ही तो है । तूफानकी सीटी । मानो लोगों का बड़ा गिरोह गरजता अट्टहास करता आ रहा हो ।······ कहीं मजबूती से पकड़ लेना है । नहीं तो उड़ जायेंगे । क्या शैतान को कैदखाने से रिहा कर दिया है । क्या वह पृथ्वी के चारों ओर की जातियों में समुद्र तट के रेत के कणों की तरह अनगिनत लोगों को लड़ाई के लिये अपने साथ ले चला है ? आसमान से आग क्यों नहीं बरसती ?

यह क्या ! बड़ा गंभीर कोलाहल सुनाई देता है ? शैतान का आगमन ? नहीं । स्वर्ग में यहोवा का आगमन है । 'हल्लिलूय्याह' गाते हैं । वेश्यावृत्ति से पृथ्वी को कलंकित करती महावेश्या से अपना रक्त मांगकर बदला लेने आये हैं ।

हल्लिलूय्याह—ईश्वर के नाम की स्तुति हो । बाढ़ की हरहराहट सी पथराई बादल की गरजन सी······

हलेलुइया ।······

आंखें जब खुलीं तब चारों तरफ लोगों की भीड़ थी । कोहराम सा छा गया है । आदमी पहचाना नहीं जाता । मर्द, औरतें, बच्चे······

"पिताजी !······"

सिर मुड़ा हुआ । कान पर पके बाल ! कुंयेनाच्चन बुदबुदाये—

"कीवरीत !"

"मैं हूं पिताजी । कुछ काफी पियेंगे ।"

"मात्तुकुट्टि कहां है ।"

"वह मलाबार गया है न ।—दीनाम्मा थोड़ी काफी लाओ ।"

"चम्मच से पिलाना ।"

"सहारा देकर बिठाऊं ।"

"मां जी, जरा हट जाइये । मैं सहारा दूंगा ।"

"दीनाम्मा ही पिला दो ।"

अब देख सकता हूं । तुम्हारा चेहरा तमतमा उठा है । क्या बदन पर कपड़े हैं । तुम्हारा दिया पानी कैसे विश्वासपूर्वक पिऊं । हाथ उठता नहीं है । बड़ी तकलीफ से हाथ उठाया । एक झक्का । गिलास व चम्मच हाथ से छूटकर नीचे गिर पड़े । मन खुश हुआ······

"हाय ! यह क्या ?"

"बाबूजी, मैं हूं ।"

"हां, तू ही है । तभी तो । जा मेरे सामने से ।"

"आदमी को शायद पहचान नहीं पाते ।"

"कीवरीत ।"

"क्या है पिताजी ।"

"इस नब्बे वर्ष की उम्र में भी मैं अंधा रह गया रे ।"

"पिताजी खूब देख सकते हैं ।"

"नहीं रे······"

आगे कुछ कहने लगे तो दीनाम्मा बड़ी ऊंची आवाज में बोली जिससे कि उनकी बात सुनायी न पड़े—

"बेहोशी में कुछ बड़बड़ा रहे हैं ।"

"सही बात है । वरना चाची की दी हुई काफी क्यों हाथ से गिरा देते ?"

"वह बदमाश कहां है !"

"कौन है, पिता जी ।"

दीनाम्मा फिर से उतावली हो बोली —

"मैया, यों कोई-कोई बात पूछने से ही यों बड़बड़ाते हैं । कुछ मत पूछिये । चुपचाप पड़े रहें ।"

"मुझे अपने बेटे को देखना है—मात्तुक्कुट्टि को । वह कहां है ? मेरा पुराना चाकू उसके हाथ में है ।"

शांतम्मा पास जाकर बोली—

"कल-परसों भैया आयेंगे दादाजी !"

"क्या छोटी बहू ?"

"हां।"

"पास आ।"

उसका हाथ अपने हाथ में लिया।

"तू कहां थी ?"

"गिरजाघर गयी थी। दादाजी को बताकर ही गयी थी न ?"

"आगे कहीं न जाना !"

"क्यों ?"

"चोर !"

शांतम्मा की समझ में कुछ नहीं आया। वह चारों तरफ ताकती रही।

"सिक्के की खोटाई जमीन पर पटकने पर आवाज से खुलेगी। कटहल को छेद डालकर जांचने से बुराई खुलेगी। मगर औरत का दिल कैसे समझ सकेंगे ?"

कुंयेनाच्चन की आंखें छलछला आयीं।

"थोड़ा पानी पिला दे।"

शांतम्मा ने काफी दी तो पी गये। सूखी ठिठुरी अन्ननली से गुनगुनी काफी बही तो आराम मिला। आंखों को रोशनी मिली !

चारों तरफ देखा। अब हर एक चेहरे को पहचान सकते हैं। दीनाम्मा के चेहरे पर आंखें गड़ायीं तो वह सहम गयी। कुंयेनाच्चन ने यह भी देख लिया।

"कीवरीत !"

"क्या ?"

"वह कुरुप कहां है रे ?"

"अपने घर में होंगे। आज रविवार होने से दूकान नहीं खोलनी है।"

दीनाम्मा फिर से बोली—

"पिताजी को शक है कि सिसिली बेटी के पिता जाते वक्त सारी बातों का प्रबंध करके गये हैं कि नहीं। इस उम्र में भी घर-गृहस्थी और बेटों की चिंता है।"

दीनाम्मा की बातें कुंयेनाच्चन को साफ सुनाई नहीं दीं। उन्होंने फिर से उसके

मुख पर नजर गड़ायी। मोहक रमणी की आंख। शक्कर-सी मीठी बात। मादक रूप। तू परपुरुषों का शिकार करती है। तेरे जाल में फंसे हुए मर्द का सर्वनाश होता है। कोई आदमी कपड़े को जलाये बिना गोद में आग नहीं ला सकता, पांव को जलाये बिना आग पर चल नहीं पाता। यों तेरे मोहपाश में जो फंसा वह नष्ट हुए बिना बच नहीं सकता······"

धूप चढ़ी ही थी कि बादल का टुकड़ा सूरज को ढकने लगा। प्रकाश फिर से धूमिल हो रहा है। कहीं सांझ तो नहीं हो रही है ?

कुछ दिखाई नहीं देता। तो खुद देखा क्या ? क्या कुछ देखा ? भ्रम हो सकता है या सपना। नहीं, वह इस तरह नहीं करेगी······

"अगर संदेह हो तो परीक्षा भी है।"

रोशनी ! सिर्फ एक आदमी को देखने भर की रोशनी !

कौन ?

"मैं हूं मूसा। इस्राइल की जनता का नेता। तुझे क्या शक है ? यहोवा ने संदेह दूर करने की परीक्षा बतायी है। उसे बुला।"

बुलाने के लिए जाना नहीं पड़ा। वह सिर झुकाये कदम पर कदम बढ़ाती आ रही है।

"······किसी पुरुष की पत्नी कुचाल चलकर उससे दगा करे; कोई पुरुष उस स्त्री के साथ कुकर्म करे और यह बात असली पति से छिपाये, वह अशुद्ध हो जाये तो उस पति का कर्तव्य है कि पत्नी को पुरोहित के पास ले चले। उसके लिए जौ का मैदा चढ़ावा करके ले जाना। उस पर न तेल डाल, न लोबान रख। वह संदेह की अन्नबलि है, याजक को एक मिट्टी के बर्तन में साफ पानी लेना चाहिये। इसके बाद उसके केश खोलकर अपराध-ज्ञापन का भोजनयाग उसकी हथेली पर धर दे। पुरोहित हाथ में शापदायक कड़ुआ जल लिये रहे। वह जल उस स्त्री को पिलाना चाहिये। अगर उस स्त्री ने अशुद्ध होकर पति से छल किया हो तो कड़ुआ पानी पीने पर उसका पेट फूलेगा और जांघ सड़ेगी······क्या परीक्षा करें ?"

"हां, सरकार ! इसकी परीक्षा करनी है।"

परीक्षा चलती है। अचरज की बात है। देखते-ही-देखते पेट फूलता है जांघ सड़ती हैं चेहरा सर्द हो जाता है······

"इसे पत्थरों से मार डालना चाहिये—पत्थर मार-मारकर मार डालना चाहिए।"

"बाबूजी !"

"पिताजी !"

रोशनी फिर से धुंधली होती जा रही है।

रोशनी कभी आती, कभी धुंधुआती। कुंयेनाच्चन ने इसी धूपछांह में रात बितायी। बेटे, पोते, भाईबंधु और मुहल्लेवाले आते-जाते रहे······

रात को शांतम्मा ने बिना सोये कुंयेनाच्चन की सेवा की। बेहोशी दूर होते समय छिपते-निकलते बड़ी चतुराई से दीनाम्मा पास ही खड़ी रही। व्याकुल हृदय से प्रार्थना की—'हे पिता! किसी तरह कोई कुछ भड़का न बैठे।' कीवरीत और कुट्टिअम्मा मेलोझत्तु घर पर ही सो गये।

सवेरे कुंयेनाच्चन की आंखें कुछ झपकीं। दीनाम्मा काफी तैयार कर रही थी। कीवरीत चौके के द्वार पर आकर बोला—"दीनाम्मा, इधर आओ।"

दीनाम्मा चौंक उठी। रात को उसके सोते समय पिताजी ने पुत्र से कह डाला तो नहीं? चोरी पकड़ी गयी और उस पर जवाब-तलब के लिये बुलाया तो नहीं। पास चली। नींबू के पौधे के पास पहुंचने पर कीवरीत ने पूछा—

"पिताजी कैसे गिरे, कहो !"

"मैं चौके में कोई काम कर रही थी भैया! आवाज सुनकर आयी तो देखा······"

"हूं, सावधान रहना था। खैर। आफत का एक कारण होता है न?"

"जब कभी बुलाते मैं दौड़ी जाती। रात को चार-पांच दफे जाकर देखती।"

दीनाम्मा का गला भर आया। आंखें भर आयीं।

"हां,—किसने कहा कि तुम नहीं देखती। अब तक तुम्हींने पिता की सेवा-शुश्रूषा की थी।"

कीवरीत घर की तरफ जा रहा था कि कुरुप मिला।

"कैसे हैं, कीवरीतमाप्पिला?"

"ओफ! कैसे रहें! गिरने पर भीतर कोई चोट लगी होगी। खैर, जो आना था, सो आ गया। हां, अफीम नहीं है। कहीं से ला देना। वह न खाने से ही इतनी कमजोरी लगती है।"

"अच्छा लाऊंगा।"

"मैं घर हो आऊं।"

"हो आइय।"

कीवरीत चला गया। कुरुप ने धीरे पूछा—"क्यों बेजार हो ? कुछ गड़बड़ हो गयी ?"

दीनाम्मा ने जवाब नहीं दिया। वह अपलक आंखों से कुरुप को घूरती रही।

"ऐसा क्यों देखती हो ?"

"आखिरी बार देख रही हूं······।"

"आखिरी बार ?"

"हां, कल मेरी लाश मिलेगी।"

"पागलपन की बातें मत बको।"

"पागलपन ? हट जाओ मेरे सामने से। नहीं तो खुद अपनी छाती पर मुक्का मार-मारकर तुम्हारे सामने जान दे दूंगी। कितना मना किया। दो साल से छिपाती रही। अब जल्लादों के हाथ सौंप दिया न ?"

"चुप रहो। सिर्फ शक है। कुंयेनामाप्पिला ने कुछ नहीं समझा है। मैं जरा देख आऊं ?"

"जाओ पाजी ! अगर देख लिया तो सब कुछ अभी खतम हो जायेगा।"

कुरुप थोड़ी देर सोचता खड़ा रहा। शरणार्थी की तरह दीनता की दृष्टि से दीनाम्मा की ओर देखता रहा। फिर लौट चला। पीछे दीनाम्मा की बुदबुदाहट सुनी—

"बेहोशी जब कभी दूर होती, तब वही बात कहते। प्रभु ! किसी पर बात खुलने के पहले जहर खाकर मर जाती !"

शिवरामकुरुप चला। पांव लड़खड़ा रहे हैं। ताल बिगड़ रहा है। घबराहट।

उसकी शराफत का चोगा फाड़ दिया गया।—वह अब नंगा खड़ा है। न्यायाधीश की जेब से चोरी का माल बरामद हुआ है।······अब क्या करे ?

बड़ी चतुराई और योजनाबद्ध रूप से बना मोर्चा टूट गया है। अब मोर्चे की मरम्मत करनी होगी। कैसे ?······

कितनी ही बार हिसाब लगाया, फिर भी आखिर एक अंक की भूल हो ही जाती है।

उसने सोचा :

उन दिनों केशवपिल्ला की बेटी को तलाक दिया था। घाट पर स्नान करके

अगली रात को देखी दुर्योधनवधम कथकलि का गीत गुनगुनाता आ रहा था। ओणम के दिन थे। उसके गुनगुनाये गीत के ही ताल पर थोड़ी दूर बाघ के खेल का बाजा बज रहा था। तंग गली से चल रहा था तो सामने से एक व्यक्ति······साफ सफेद लुंगी, चोली, दुपट्टा—हाथ में काली जिल्द की किताब साथ तितली सी सुंदर बच्ची ! पास आने पर पहचान सका। कुयेनामाप्पिला की बहू—मात्तुक्कुट्टि की औरत······कुयेनामाप्पिला से तो पहले से ही जान-पहचान थी।······लाठी टेकते ही चलते थे। फिर भी पूरे गांव पर उनका रोब था······

"मां और बेटी कहां चलीं ?"

मुंहतोड़ जवाब—

"क्या जवाब देने से ही मालूम होगा ? ऐतवार को सवेरे प्रार्थना की पुस्तक हाथ में लिये जाते देखने पर।"

सोचा था कि अभिलाषा की कड़ी टूट गयी। पर वह फिर से जुड़ी। कुयेनाच्चन ही इसका कारण था। कुयेनाच्चन नहीं—अफीम।

एक दिन मुहल्ले के चौराहे पर कुयेनाच्चन ने अफीम की बात बतायी तो मन में हिसाब लगाया। यह रही खूंटी। थोड़ी तकलीफ झेलकर ही सही—माल ला दिया। आने जाने का रास्ता निकल आया।

आगे नयी-नयी चाल थी। सब बातें याद आयीं। बच्चे को भेंट—तोहफा ! मात्तुक्कुट्टि की आर्थिक सहायता······

एक दिन मन में दृढ़ता से अजमाया। वह दृश्य······दोपहर को कुयेनाच्चन अफीम खाकर बेहोश पड़े थे······बांह पर हाथ रखता है······

हाथ कांपता सा !
पुच्छल तारा सा—
अंगारे सी आंखें
फड़कते ओंठ !

"उसके लिये और जगह देख लो ! वाह ! इस ढंग के हो ?"

गाल से हाथ चिपकाकर रोया। अच्छी तरह

"बेइज्जत न करना। भूल हो गयी किसी पर बात खोल न देना।"

"कोई नहीं जानेगा। मगर आगे यह न दुहराना।

"आगे दुहराया···वह तो एक तरह का शीलभंग सा था। आखिर अधीन हो

जाती है—मानती है······

सारे छेद बंद थे।

सब संदेह दूर कर दिये थे।

फिर भी फंस गये।

नाव किनारे लग रही थी कि डूब गयी।

अब रास्ता कैसे निकले ?

एं ?

"लीजिये पिताजी ! खाइये ! आराम मिलेगा।"

आंखें खोलकर कुयेनाच्चन ने कीवरीत को देखा। अपने प्रिय चिरंतन साधन को पाकर दिल हरा हो गया। लेकर खा ली।

मन में इच्छा हो रही है कि बहुत कुछ कह डालें। आवाज नहीं निकलती। सब कुछ भीतर गड़बड़ हो रहा है······

मात्तुक्कुट्टि ?······

"उसे कल ही आना चाहिये था। आज शाम तक जरूर आ पहुंचेगा।"

"उसके आने पर मुझे उससे कुछ कहना है।"

"क्या है पिताजी ?"

"एं।"

"मुझसे कहिये।

"पानी पिलाओ। भीतर बड़ी जलन है।"

"पेट खाली है न ?"

शांतम्मा ने काफी पिलायी। चम्मच भरकर देती रही पर मांगते ही रहे। बड़ी जलन। सिर हाथ से संभालकर काफी हाथ में थमा ली। अंतड़ियों में कोई कांटे से खींच रहा है। बड़ी बेचैनी ! जलन ऊपर बढ़ रही है। आंखों में अंधेरा······

कितनी जल्दी अंधेरा फैल रहा है ? जल्दी जाना है। न हाथ में बत्ती है, न चांदनी। तेज चला।

"रुक जाओ !"

कोई पीछे से अंगोछा पकड़कर खींचता है। कौन ? एक मर्द और एक औरत। औरत को पहले कहीं देखा है। पेण्णम्मा ! पुरुष ?······

"क्या सोचा कि भाग जायेंगे ?"

"हूं। क्या चाहिए ?"

"तुम इसे पहचानते हो ?"

"नहीं मालूम।"

"आखों में धूल झोंकने की बात मत सोचो। हिसाब चुकाना पड़ेगा। घर पर मर्दों की गैरहाजिरी में लुक-छिपकर आये और लुभा-फुलाकर सड़क की भिखारिन बनाया न ?"

"मैं नहीं। धोती छोड़ो।"

ठहाका !

"कर्जा किसी दिन अदा करना ही पड़ेगा। तुम नहीं तो तुम्हारी संतान। समझे ?"

"क्या ?"

"तुम ने लिया। बेटे ने दिया—है न ?"

फिर से ठहाका।

"अंधेरा हो गया। मुझे जाना है। रोशनी भी नहीं।"

"क्या रोशनी नहीं है ? ऊपर देख लो।"

यह क्या ? आसमान से एक गोरा घोड़ा तेज दौड़ा आ रहा है। उस पर सवार व्यक्ति की आंखें आग की ज्वाला सी हैं। सिर पर कई राजमुकुट हैं। उसका चोगा खून की बूंदों से लाल है। उसके मुंह से तेज तलवार जातियों को मार डालने के लिये निकल पड़ी है। एक ही वार से हजारों गले कटकर नीचे गिरे। खून की नदी बहती है। बहते-बहते आसमान की सीमा तक फैलती है। हर जगह लाल रंग। भड़कीली लालिमा। क्या नया सवेरा निकल रहा है ? शुक-सारिकाएं चहक रही हैं। मुर्गा बोल रहा है।

बहुत सी चीजें दिखाई दे रही हैं। मगर कुछ भी साफ नहीं। आंखों के सामने महीन सफेद कपड़े का पर्दा छाया है। इधर-उधर चलते लोगों की परछाइयां हैं। रोने-कराहने की आवाज कहीं दूर सुनाई देने की हलकी प्रतिध्वनि सी आ रही है······

"पिताजी !"

"दादाजी !"

"आखें खोलिए।"

"पिताजी !"

"शोर मत करो।"

"वैदिक को बुलाकर और एक बार तैलाभिषेक करवायें।"

"किसी को भेजो।"

"ओह ! नहीं चाहिये। ऐसी बेहोशी बारबार आती है।"

पर्दे का रंग अब चांदनी का है। पूनों की चांदनी। बहती पसरती चांदनी। नहीं नहीं ! परदे के सात रंग हैं। पर्दा ऊपर उठता है। सोने की गद्दी दिखाई देती है। गद्दी पर बैठे व्यक्ति के दायें हाथ में भीतर-बाहर लिखी सात मुहरों की एक पुस्तक।

पहली मुहर खोली तो गोरा घोड़ा दीख पड़ा। उस पर बैठे आदमी के हाथ में एक धनुष है।

दूसरी मुहर तोड़ी तो लाल घोड़ा आया। उस पर बैठे व्यक्ति के हाथ में तलवार थी।

तीसरी मुहर तोड़ी तो काला घोड़ा दिखायी दिया। उस पर बैठे व्यक्ति के हाथ में तराजू था।

क्रंदन की ध्वनि उठी। पास दौड़ी आती अपार जनराशि की चिल्लाहट। आवाज निकट ही आ रही है। क्या देखते हैं ? समुंदर धरती पर कब्जा करने आ रहा है। लहरें आसामान को छूती झूलती हैं। पलभर में समुद्र ने जनराशि को निगल लिया। उनका रुदन आकाश में गूंज उठा। उठते-उठते ऊंची तह पर पहुंचना है। ऊपर उठने की कोशिश ज्यों-ज्यों करते हैं त्यों-त्यों गरदन पर एक भारी पत्थर बांध देने का सा अनुभव होता है। नीचे धंसता जाता है। पर छोड़ना कैसे ? फिर हाथ पांव मारकर ऊपर उठा। थका और हारा ऊपरी स्तर पर पहुंचा। आसमान की छत को हाथ से छू सकते हैं। अस्त होनेवाले सूरज को देख सकते हैं। चारो तरफ लोग। ये क्यों नहीं जाते ?······

"मेरे दादाजी ! जरा आखें खोलिये।"

"देखिए, यह कौन आया है।"

"कैसे खोलूं बेटी ? पलकें मानो सिली हुई हैं।"

"मैं हूं दादाजी, कुट्टिअम्मा।"

"जानता हूं। जरा पहले से आती तो मुझे तुमसे एक बात कहनी थी। अब देर हो गयी।"

फिर से लहरों में फंसे हैं। हाथ पांव दुख रहे हैं। नहीं! ······

मेलोझत्तु घर में, दालान में और अहाते में लोगों की भीड़ है। मुहल्ले के सभी जातियों, धर्मों के स्त्री-पुरुषों ने कुंयेनाच्चन को आकर देखा। उस गांव के सबसे बड़े बुजुर्ग थे। बेटे, पोते, परपोतों से भरे बहुत बड़े परिवार के मुखिया!

दो आदमी मिलते तो परस्पर कहते—

"मेलोझत्तु के कुंयेनाच्चन की तबियत बहुत खराब है।"

"सिर्फ एक सांस बची है।"

"मात्तुक्कुट्टि मलाबार गया है। अभी नहीं लौटा।"

छोटी बहू सेवा-शुश्रूषा करती है कितने दिनों से वह दादा के लिये तकलीफ झेलती है शरीफ लड़की!

इस भीड़-मड़ाके और शोरगुल में कुरुप भी कई बार आया। परिवार के सदस्य की तरह पूछताछ करता रहा।

जब निश्चित हुआ कि अब नहीं बचेंगे तो और एक बार अंतिम परम-संस्कार किया।

दालान में पंदाल बना है। उसकी देखरेख कुरुप ही करता था। दीनाम्मा पंदाल में खड़ी रुंधे गले से कुछ रिश्तेदार औरतों से बीमारी की बात कह रही थी। कुरुप ने नजदीक जाकर कहा—

"सिसिली मुन्नी की मां, जरा इधर आना।"

दीनाम्मा पास गयी। एक निर्जन कोने में पहुंचकर फुसफुसाती आवाज में पूछा—

"अब मन में चैन हो गया।?"

"बुरी बात मुंह से मत निकालो। जानते हो, बाबूजी मुझे कितना चाहते थे? बेचारे! मैं ही—हे पिता! मुझ पर क्यों आग और गंधक नहीं बरसाते? ईश्वर की कसम आगे मुझे देखने न आना? करुणशील यहोवा······"

"यहोवा ने नहीं, मैंने ही बचाया है।"

"एं?"

शिवरामकुरुप के चेहरे पर एक धूर्त मंदहास झलका; धीरे बोला—

"मैंने ही काम ठीक किया।"

"क्या ?"

"एं ?"

"क्या काम ठीक किया ?"

"एक चाल चली।"

"बोलो कि क्या है ?"

"अफीम के साथ एक चीज मिला दी। रत्ती भर जहर !"

"मुक्तिदाता !"

दीनाम्मा का क्रंदन गले में ही दबकर रह गया।

"और क्या ? सवेरे तुमने मुझसे कहा न कि इज्जत गयी तो जिंदा नहीं रहूंगी।"

बस करो :—

दीनाम्मा को ऐसा भीषण क्रोध आया कि लगा कि उसको नोचकर खा जाये। गरजने की इच्छा हुई। घोर पापी ! राक्षस ! पीने के पानी में भी छल करने-वाले ! मेरे सामने से भाग जा ! वरना मैं तुझे मार डालूंगी······

सब कुछ मन में छिपाये दीनाम्मा कुंयेनाच्चन की खटिया के पास लौटी। बड़ी देर तक उनके चेहरे को गौर से देखती रही। अब रहा नहीं गया। दीनाम्मा खटिया परमुंह के बल गिर पड़ी और कुंयेनाच्चन के पैर पकड़कर फूट-फूटकर रोयी। चारों ओर खड़े लोग दंग रह गये। क्या बात है कि यों एकाएक रो पड़ी ?

एक बुजुर्ग औरत ने कहा—

"बेचारी ! आज तक उसी ने दिन रात सेवा-शुश्रूषा की थी न ?"

कीवरीत ने कहा—

"दीनाम्मा, यों रोकर दूसरों को परेशान मत करो।"

कुंयुचेरुक्कन ने कहा—

"मात्तुक्कुट्टि अब भी नहीं आया। वह हमेशा ऐसा है, कहीं जाने पर वक्त पर कभी नहीं लौटता।"

तोमस मास्टर ने कहा—

"डाक्टर को और एक बार बुला लाऊं ?"

"ओह ! क्यों बेटा ?"

कुंयप्पि भी बोला—

"अब······"

"यह बात नहीं। उम्र के बढ़ने से ऐसा सोचना ठीक नहीं। किसे मालूम कि आदमी की आयु कितनी होती है!"

"हुं। साले को अगर ऐसा जंचे तो मोटर लेकर जल्दी बुला लाओ।"

तोमस मास्टर जानेवाले थे कि एकाएक कुंयेनाच्चन एक बार तड़पे। कराहने की ध्वनि आयी! एकाध हिचकी······

"खटिया से नीचे उतार लें······"

"पकड़ लो।"

"पिताजी।"

"मेरे प्यारे दादाजी!"

अंतिम बार जल का आचमन कराया!

नया आसमान और नयी धरती दिखायी दे रही है। नब्बे वर्ष देखी पुरानी भूमि और पुराना आसमान अब दूर हो गया है। दूर स्वर्णसिंहासन से एक महा-नाद सुनायी दे रहा है। आ। मेरे डेरे में आ। आगे तू मेरे साथ रहेगा। तू आगे मेरे जनों में से एक होगा। मैं तेरे आंसू पोंछ डालूंगा। तुझ दुख-कष्ट आगे झेलना नहीं पड़ेगा।

पास गया। बाहें पसारीं। छाती से लगाकर आलिंगन किया। माथा चूमा।

कुंयेनाच्चन और एक बार कांप उठे। मुंह खुला। सिर एक तरफ लटक गया।

सब इकट्ठे जन चीख उठे। सबसे ऊंची आवाज दीनाम्मा की थी।

"मेरे प्यारे बाबूजी!······हमारे बाबूजी!······"

शेष बात उसके गले में अटकी थी।

रुदन सुनकर लोगों की भीड़ जमा हो गयी। एक बुजुर्ग आदमी ने कहा—

"जैसा कि यहोवा ने अब्रहाम से कहा था, कुंयेनाच्चन शांति पूर्वक अपने पुरखाओं के साथ मिल गये हैं। अच्छी वृद्धावस्था में बुलाये गये हैं। भाग्यवान हैं!"

उस समय भी दीनाम्मा के रोने की ऊंची आवाज सुनायी दे रही थी।